विचार दृष्टि

वर्ष: 10 अंक: 35 अप्रैल-जून 2008 25 रुपये

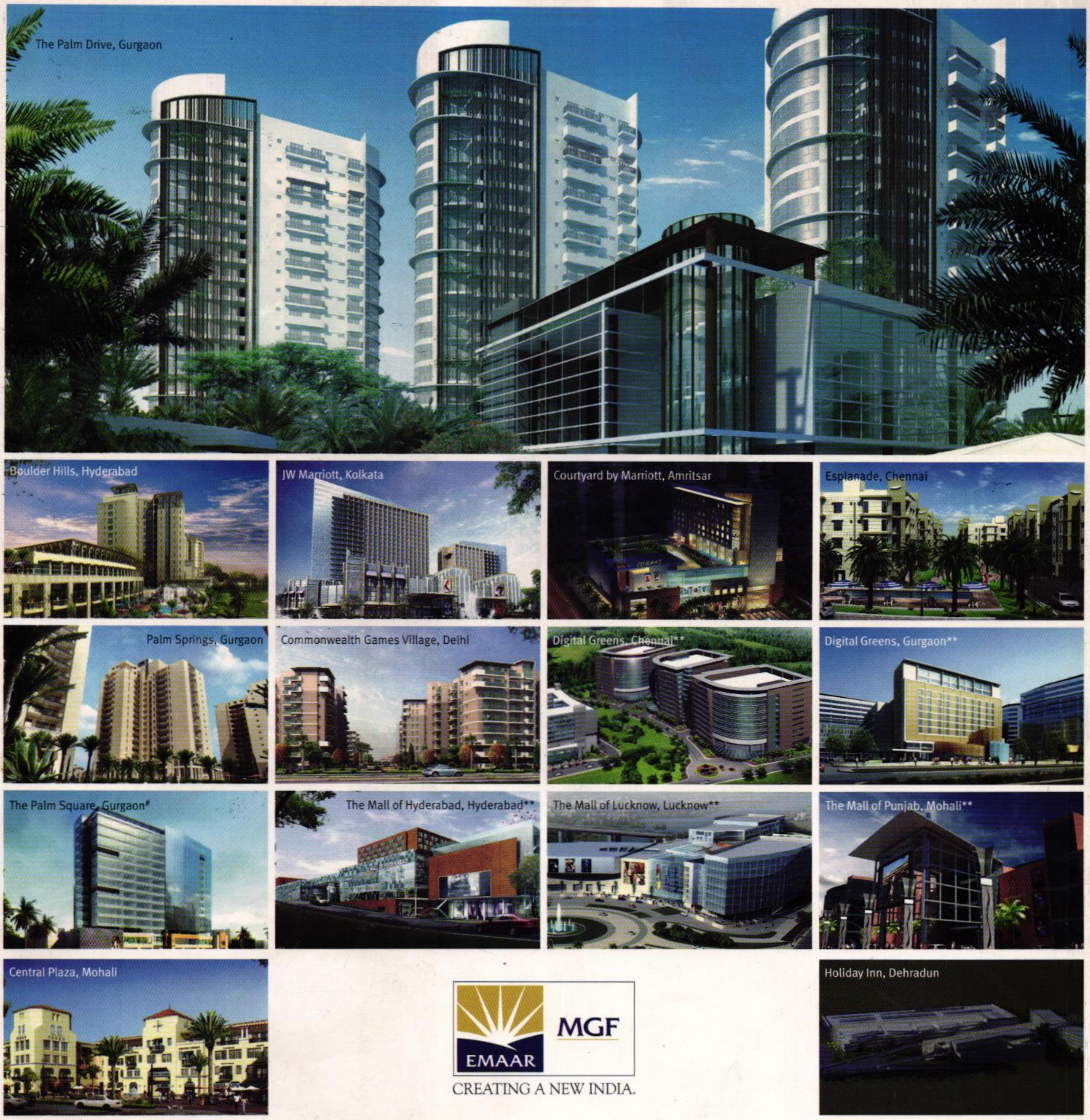

RESIDENTIAL | COMMERCIAL, IT PARKS & SEZs | RETAIL | HOSPITALITY | HEALTHCARE* | EDUCATION* | INFRASTRUCTURE*

Corporate Office: Emaar MGF Land Limited, ECE House, 28 Kasturba Gandhi Marg, New Delhi-110 001. Tel.: (+91 11) 4152 1155. Fax: (+91 11) 4152 4619. To know more about us and our projects, visit us at www.emaarmgf.com

*Healthcare, Education and Infrastructure are our other business initiatives. The images shown are computer generated images of the properties being developed by Emaar MGF.
** These are planned projects.
#Part of The Palm Drive project.

With Best Compliments from :

BUILDERS

BAHL BUILDERS (P) LTD.

AN ISO 9001:2000 Certified Company

Engineers, Builders & Contractors

DD-1, Kalkaji Extn., New Delhi-110019
Tel. : Off : 2629 2557, 2628 0262
Telefax : 011-2643 6383, 2643 9279
E-mail : bahlbuilders@yahoo.co.in

विचार दृष्टि

(राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी)
वर्ष- १० अप्रैल-जून, २००८ अंक - ३५

○संपादकीय सलाहकार : नंद लाल
○संपादक-प्रकाशक : सिद्धेश्वर
○उप संपादक : डॉ॰ शाहिद जमील
○सहायक संपादक : उदय कुमार 'राज़'
○प्रबंध संपादक : सुधीर रंजन

शब्द संयोजन : गंगा यमुना प्रकाशन
सी॰-6, पथ सं॰-5, आर॰ ब्लॉक, पटना-1

संपादकीय-प्रकाशकीय कार्यालय
'दृष्टि', 6 विचार विहार, यू॰-207,
शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92
☎ : (011) 22530652 / 22059410
9811281443 / 9899238703 (मो॰)
फैक्स : (011) 22530652
E-mail : vichardrishti@hotmail.com
'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-800001
☎ : 0612- 2228519

पटना कार्यालय
सी॰-6, पथ सं॰-5, आर॰ ब्लॉक, पटना-1
☎ : 0612-2226905 / 09430559161

ब्यूरो प्रमुख
कोलकाता : जितेन्द्र धीर ☎ : 24692624
चेन्नई : डॉ॰ मधु धवन ☎ : 26262778
तिरूवनंतपुरम : डॉ॰ एन॰ चंद्रशेखरन नायर
बैंगलूरू : पो॰ एस॰ चन्द्रशेखर ☎ : 26568867
हैदराबाद : डॉ॰ ऋषभदेव शर्मा 23391190
जयपुर : डॉ॰ सत्येंद्र चतुर्वेदी ☎ : 2225676
अहमदाबाद : रमेश चंद्र शर्मा 'चंद्र'

प्रतिनिधि
दिल्ली : प्रो॰ पी॰ के॰ झा 'प्रेम'
एन॰सी॰आर॰ : प्रो॰ मनोज कुमार, संजीव कुमार
तिरूवनंतपुरम : के॰ जी॰ बालकृष्ण पिल्लै
लखनऊ : प्रो॰ पारसनाथ श्रीवास्तव
सतना : डॉ॰ राम सिया सिंह पटेल
हैदराबाद : चंद्रमौलेश्वर प्रसाद
एरणाकुलम : डॉ॰ पी॰ राधिका
भिवानी : प्रो॰ पुरुषोत्तम 'पुष्प'
देहरादून : डॉ॰ राज नारायण राय
विपणन प्रबंधक : सतेन्द्र सिंह
वित्तीय प्रबंधक : अरविंद कुमार उर्फ पप्पू
विज्ञापन प्रभारी : रवि शंकर श्रोत्रिय

मुद्रक : प्रोलिफिक इनकारपोरेटेड एक्स-47, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेज-2, नई दिल्ली-20

मूल्य एक प्रति	:	025 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	200 रुपये
आजीवन सदस्य	:	1000 रुपये
विदेश में एक प्रति	:	US$005
वार्षिक	:	US$020
आजीवन	:	US$250

एक नज़र में रचना और रचनाकार

पाठकीय पन्ना ... 02
संपादकीय ... 05

विचार-प्रवाह :
मानुषी उत्तरदायित्वबोध : दशा और दिशा ... 09
प्रो॰ कुमार रवीन्द्र

साहित्य :
टॉलरेन्स, मुक्ति (दो लघुकथाएँ) ... 12
डॉ॰ राम निवास 'मानव'

काव्य-कुँज : ... 13
बशीर बद्र, सुरेन्द्र नाथ तिवारी, डॉ॰ देवेन्द्र आर्य, जियालाल आर्य, उदय कु॰ 'राज़' डॉ॰ 'विजय' सुरेन्द्र वर्मा, पी॰बी॰ शेली, डॉ॰ 'मानव', डा॰ हितेश, नीलम साहू, नलिनीकांत, राजभवन सिंह तथा मोहन लाल मगो

समीक्षा :
यथार्थ और आदर्श का मणि-कांचन योग: यह सच है ... 17
प्रो॰ (डॉ॰) सुंदर लाल कथूरिया
युग निर्माण और मूल्यबोध की कविताएँ 20
डॉ॰ मृत्युंजय उपाध्याय
समय की वास्तविकता दर्शाती कृति ... 21
डॉ॰ सुषमा शर्मा
नयी साहित्यिक पत्रिका-वाक्: हिंदी का हिंदीपन नष्ट करने की साजिश ... 22
प्रो॰ कमल किशोर गोयनका

यात्रा-वृतांत :
श्रद्धा, आस्था और भाईचारे की मिसाल दरगाह की इबादत यात्रा–सिद्धेश्वर ... 29

राष्ट्रीयता:
'भारत रत्न' को माखौल बनाया राजनेताओं ने –सिद्धेश्वर ... 33

भारत की सांस्कृतिक एकता ...
एम॰ बी॰ मुरकूटे ... 34
भारत राष्ट्र : वर्तमान चिंताएँ ...
डॉ॰ सुंदरलाल कथूरिया ... 35

आधी आबादी :
वर्तमान युग में नारी का नौकरी करना ...
डॉ॰ मंजुला गुप्ता ... 38
बलात्कार: महिलाएँ स्वयं भी जिम्मेदार
डॉ॰ हितेश कुमार शर्मा ... 39

दृष्टि :
छूटता जा रहा है आत्मीय संबंधों से बना अतीत –सिद्धेश्वर ... 41

न्याय जगत :
भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की अवधारणा: चुनौतियाँ और समाधान ... 43
डॉ॰ जयप्रकाश खरे

समाज :
अहिंसक समाज-रचना के सूत्र ... 46
डॉ॰ नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'

राजनीति :
आज देश में नागरिक व्यक्ति नहीं, वोट बैंक–सिद्धेश्वर ... 49

प्रेरक-प्रसंग : ... 50

गतिविधियाँ :
देश प्रेम की काव्य धारा में डूबते-उतरते ... 55
अ.भा.साहित्य परिषद् का 12वाँ अधिवेशन... 55
साभार-स्वीकार ... 55

लोकार्पण | आधी आबादी | दृष्टि | यात्रा-वृतांत | सम्मान | गतिविधियाँ | श्रद्धांजलि

पत्रिका-परामर्शी

❑ श्री यू.सी. अग्रवाल ❑ पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह 'शशि' ❑ प्रो0 राम बुझावन सिंह ❑ प्रो. धर्मेंद्र नाथ 'अमन' ❑ श्री जियालाल आर्य ❑ डॉ0 बालशौरि रेड्डी ❑ डॉ0 महेन्द्र भटनागर ❑ डॉ0 सुंदर लाल कथूरिया ❑ डॉ0 देवेन्द्र आर्य

**पत्रिका-परिवार के सभी सदस्य सेवा-भाव से अवैतनिक हैं।
रचनाकारों के विचारों से पत्रिका-परिवार का सहमत होना आवश्यक नहीं।**

प्रिय पाठको! प्रकाशित रचनाओं तथा अंक के प्रस्तुति पक्ष पर आपकी प्रतिक्रिया, पत्रिका परिवार के लिए एक संबल है। हमें आपकी प्रतिक्रिया का बेसब्री से इंतजार रहता है। प्राप्त प्रतिक्रियाओं से हम केवल उन्हीं प्रतिक्रियाओं को शामिल कर पाते हैं, जिनमें वस्तुनिष्ठ, कृतियों से संदर्भित संक्षिप्त समीक्षा/टिप्पणी या मार्ग-दर्शक बिंदु आदि होते हैं। भ्रामक प्रशंसा और ईर्ष्या-दर्शी विचारों के प्रेषण से डाक-ख़र्च ज़ाया होता है।

❍ उप संपादक

काश! अन्य लोग भी सहयोगी बनें

'विचार दृष्टि' के 'राष्ट्र चेता' अंक में विचारोत्तेजक आलेख। विशेष योगदान आपका स्वयं का। काश, अन्य लोग भी आपकी विचार-दृष्टि के सहयोगी बन पाते! इधर-लिखा आलेख 'मानुषी उत्तरदायित्व बोध: दशा और दिशा' आपके अवलोकनार्थ भेज रहा हूँ। रुचे तो 'विचार दृष्टि' में स्थान देने की कृपा करें। ईस्वी सन् 2008 बस आने को है। सपरिजन मेरा हार्दिक स्नेहाभिनंदन स्वीकारें।

❍ **कुमार रवीन्द्र**

'क्षितिज' 310, अर्बन एस्टेट 2, हिसार 125005

'विचार दृष्टि' अँधेरा दूर भगाए

सहृदयता से भेजी गयी 'विचार दृष्टि' (अक्टूबर दिसम्बर-07), 'राष्ट्रीय चेता' स्मारिका (अक्टूबर दिसम्बर 07) प्राप्त हुई। मैं अपनी आंतरिक कृतज्ञता व आभार प्रकट करता हूँ। 'विचार दृष्टि' सर्वदा अपनी ज्योत प्रज्ञा से राष्ट्र के कोने-कोने का अँधेरा दूर भगाए। राष्ट्र संदेश, राष्ट्रीयता व हिंदी भाषा का प्रज्ज्वलित मशाल उठाकर निर्भीक व ईमानदार नेतृत्व में सबसे आगे रहे। आपक प्रज्ञा प्रवाह ज्ञान सुधा व ऊँची विद्वता के आर्क्त सज्जा में एक युग मंथन हो, एक मानव युग की शुरुआत हो-मेरी स्तुति स्वर, युग चिंतक एवं युग द्रष्टा (आप) के लिए।

पहली जंग-ए-आजादी की 150 वीं वर्षगाँठ के शुभ अवसर पर प्रकाशित 'विचार-दृष्टि' व स्मारिका 'राष्ट्रीय चेता' संपूर्ण, भारतवासियों का बलिदान, देश प्रेम राष्ट्रीयता, आत्मोत्सर्गता, देशभक्ति का अंत: प्रवाह स्रोत से आच्छादित अमर कहानी बोलती है। प्रकाशित एक-एक लेख एक दस्तावेज है अपने आपमें। आपने जिस अदभुत क्षमता, अवर्णनीय कुशलता और उदाहरणीय समर्पित भाव से इन अंकों के संयोजन व प्रस्तुति सबके समक्ष रखे हैं- इकाई में ये प्रकाशन अनुपम, अवर्णनीय व सर्वोत्कृष्ट बन पड़े। दोनों पत्रिकाओं के जितने भी लेखक व रचनाकार हैं वे सभी राष्ट्र की आत्मा बोलते हैं। उनकी लेखनी में राष्ट्र में नए प्राण संचार करने का सत्य स्वत: सिद्ध होता है।

आपकी बहुमूल्य लेखनी द्वारा प्रकाश में लायी गयी विभिन्न स्वतंत्र संग्राम के यथार्थ व स्वतंत्रता सेनानियों की गाथाएँ हम पाठकों के लिए अमूल्य ज्ञान भण्डार व देशभक्ति के पावन मंत्र हैं, सर्वत्र आच्छादित कर जाता है। आपकी लेखनी में व लेखों में हमारे महान देश भारतवर्ष की आत्मा बोलती है। युग मंथन स्वर हर-हर को दस्तकों में पाठकों को अवगत कराता है। आपके विज्ञ, प्रतिभा संपन्न, व विलक्षण संपादकीय में युग चिंतन है, युग मंथन है, युग को कायापलट का आह्वान है। आप की महान लेखनी में नए स्वर का सच है। मेरी छोटी स्तुति आपके पावन चरणों पे।

सिलसिलेवार में, 'राष्ट्र चेता' (स्मारिका) में, गोपाल सिंह 'नेपाली' संबधी आपके द्वारा लिखित लेख, वाकई में, रोचक व खोजपूर्ण है। मुझे लेख पढ़कर स्व. कवि 'नेपाली' के संबंध में बहुत सारी बातें जानने, समझने को मिलीं-मै आपके प्रति हार्दिक आभारी हूँ।

❍ **शिबराज प्रधान**

दुम्सपिड़ा चा बगीचा,
पो-आ. रामझकेड़ा-7352281
जिला-जलपाइगुड़ी, पश्चिम बँगाल।

विशेषांक -33 जानकारी से भरपूर

आपसे प्राप्त 'विचार दुष्टि' के अक्टूबर-दिसंबर 2007 विशेषांक-33 में 1857 जंगे आजादी तथा न्यूयॉर्क में 13-15 जुलाई 2007 को आयोजित आठवें विश्व हिंदी सम्मेलन की भरपूर जानकारी से यह संग्रहणीय बन पड़ा है जिसकी मैं भरपूर सराहना करता हूँ। मेरी बधाई स्वीकार करें।

❍ **एस.बी. मुरकुटे,**

क्रॉस नं. 2, आनंदनगर, वडगाँव, बेलगाँव

निखरती जा रही पत्रिका की प्रस्तुति

'विचार दृष्टि' का जनवरी-मार्च 08 अंक सधन्यवाद मिला। इसकी प्रस्तुति दिनानुदिन निखरती जा रही है। इसके पूर्व 1857 के गदर पर केंद्रीत सामग्री काफी सूचनापरक और ज्ञानबर्द्धक थी। इस अंक की कहानियाँ धर्मेन्द्रनाथ का 'कोठेवाली का बेटा', एवं डॉ० शाहिद जमील का 'अपने पराये' काफी हृदयस्पर्शी हैं। इसके विचारात्मक आलेख और राजनीतिक प्रसंग भी कुछ सोचने को मजबूर करती हैं। इसमें साहित्य और संस्कृति विषयक गतिविधियों की खूब चर्चा है। सिद्धेश्वर जी का कुर्तुल ऐन हैदर पर संस्मरणात्मक लेख काफी ज्ञानबर्द्धक और सूचनाओं से भरी है। सिद्धेश्वर जी की सक्रियता की जितनी प्रशंसा की जाय कम है। वे एक अभियानी व्यक्ति हैं। उनका अभियान इसमें प्रतिबिंबित है। उन्हें और 'विचार दृष्टि' परिवार के सदस्यों को हार्दिक बधाई।

❍ **प्र0 ना0 विद्यार्थी**

बी-140, हरमू हाउसिंग कॉलोनी राँची-2

पढ़कर मन मतवाला

आपके खोजपूर्ण लेख का चयन निराला है। पढ़कर मन मतवाला हो उठा। आप बधाई के सुपात्र हैं। हिंदी सेवा में लगे रहना है, क्योंकि इसे विश्व भाषा जो बनाना है। तुलनात्मक रूप से हिंदी का स्वरूप कुछ ऐसा है जैसे पनवाड़ी की बेटी चार्टर्ड एकाउंटेंट (Chartered Accountant) बन गई, तो प्रेस ने उस पनवाड़ी का साक्षात्कार छापा। पनवाड़ी की आर्थिक तंगी का भरपूर वर्णन था। वैसे ही आप सरीखे महानुभाव आर्थिक कष्ट भोगकर भी हिंदी सेवा में लगे हैं, लगे रहिए। बापू के मार्गदर्शन में भगत सिंह, लाला लाजपत राय आदि ने प्राणों की आहुति देकर भारत को स्वतंत्र किया। कल हिंदी को समर्पित है। आपके मार्गदर्शन और बलिदान देने पर संकटमोचन मारुतिनंदन, शुभसिद्धि विनायक का आशीर्वाद

अंग-अंग भर दे।

○ **मोहन लाल मगो**
दिल्ली-91

संपादकीय यथार्थाश्रित

'विचार-दृष्टि' का 'जनवरी-मार्च, 2008 अंक' मिला। इसे एक ही बैठक में मन लगाकर, अवधानतापूर्वक, देख-पढ़ गया। 'संपादकीय' पठनीय एवं यथार्थाश्रित है। रंजीत कुमार 'सौरभ' ने नागार्जुन के रचनाधर्मी व्यक्तित्व को रेखांकित किया है, किंतु यह रचना मुझे वस्तुपक्ष की दृष्टि से सशक्त होते हुए भी अभिव्यक्ति-पक्ष की दृष्टि से अशक्त लगी। हितेश कुमार शर्मा-कृत 'सब बिके हुए' नाम्नी कविता प्रभाव छोड़ रही है। उदय कुमार 'राज़'-कृत 'देखते रह जायेंगे हम लोग' शीर्षक रचना में मुक्त छंद के माध्यम से आज के युग-बोध की अभिव्यक्ति हुई है। चन्द्र मौलेश्वर प्रसाद का समीक्षात्मक लेखन 'जंगे आजादी विशेषांक' के वस्तुपक्ष को बढ़िया ढंग से हमारे सामने रख रहा है। जगदीश गाँधी ने अपने लेखन के माध्यम से सही लिखा है कि-''उद्देश्यपूर्ण शिक्षा के अलावा विश्व को बचाने का दूसरा कोई मार्ग नहीं है।'' हमारे यशस्वी शिक्षावेत्ता तथा भारत के पूर्व महामहिम राष्ट्रपति डॉक्टर शंकरदयाल शर्मा ने शिक्षा में भारतीय जीवन-मूल्यों के समावेश पर संपूर्ण मन से बल दिया है। ये जीवन-मूल्य हैं- सत्य, अहिंसा, समता, बंधुता, सदाचार, अनुशासन, संयम, कर्त्तव्यशीलता, विनयशीलता, सहनशीलता, सादगी, ईमानदारी, धीरज तथा संतोष। मैं प्राथमिक स्तर से ही शिक्षा में इन जीवन-मूल्यों के समावेश पर बल देना चाहता हूँ। मेरी यह निश्चित धारणा है कि जब तक देशवासी इन जीवन-मूल्यों को 'आचरण का विषय' नहीं बनाएँगे, तब तक उनका मानसिक विकास भी नहीं हो सकता-यह ध्रुव सत्य है। मैं यह भी मानता हूँ कि जो माँ-बाप संस्कारविहीन बच्चे समाज और देश पर थोपते हैं, वे निश्चय ही बहुत बड़ा अपराध करते हैं। श्री सिद्धेश्वर-कृत 'जीवन-शैली दीप्तिमान बना सकती हैं पुस्तकें' नाम्नी रचना प्रभावी-प्रेरक लगी। मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश) के पूर्व कुलपति डॉ० रामबिहारी लाल गोस्वामी की यह मान्यता निरापद है कि- ''पुस्तक जीवन की सबसे बड़ी जरूरत है।

पुस्तकें जीवन में परिवर्तन ही नहीं करतीं, बल्कि समाज में क्रांति भी लातीं हैं।'' 'गतिविधियाँ' एवं 'सम्मान' शीर्षक स्तंभों के माध्यम से आप हमें अच्छी-अच्छी जानकारियाँ दे रहे हैं।

○ **डॉ0 महेश चंद्र शर्मा**
'अभिवादन', 128ए, श्यामपार्क (मेन), साहिबाबाद, गाज़ियाबाद-5

रचनाओं का चयन विद्वतापूर्ण

'विचार दृष्टि' का अंक: 34 आवरण से लेकर भीतर-बाहर सभी कुछ सुंदर है। लेख कहानियाँ, कविताएँ सबका चयन विद्वतापूर्ण ढंग से किया गया है। कृपया साधुवाद स्वीकारें। पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति की कामना ।

○ **डॉ. हितेश कुमार शर्मा**
गणपति कॉम्पलेक्स, सिविल लाइन्स
बिजनौर-24670 (उ.प्र.)

बशीर बद्र के चंद अशआर

73 वाँ जन्म दिन मुबारक

उजाले अपनी यादों के हमारे साथ रहने दा
न जाने किस गलो में ज़िंदगी की शाम हो जाए

कोई हाथ भी न मिलाएगा जो गले मिलोगे तपाक से
ये नए मिज़ाज का शहर है, ज़रा फ़ासले से मिला करो

मोहब्बतों में दिखावे की दोस्ती न मिला
अगर गले नहीं मिलता, हाथ भी न मिला

दुश्मनी का सफ़र इक क़दम, दो क़दम
तुम भी थक जाओगे, हम भी थक जाएँग

मुल्क तक़सीम हुए, दिल तो सलामत है अभी
खिड़कियाँ हमने खुली रखी हैं दीवारों में

रोटियाँ कच्ची पकीं, कपड़े बहुत गंदे धुले
मुझको पाकिस्तान की इसमें शरारत सी लगी

यहाँ लिबास की क़ीमत है आदमी की नहीं
मुझे गिलास बड़े दे शराब कम कर द

कुछ तो मजबूरियाँ रही होंगी
यूँ कोई बेवफ़ा नहीं होता

रेहाना कॉलोनी, ईदगाह हिल्ज़, भोपाल (म०प्र०)

वंचित तबकों की जरूरतों को पूरा किए बगैर हम भविष्य की ओर नहीं देख सकते हैं।

○ राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटिल

जिस तरह चीन इस वर्ष आयोजित होने वाले ओलंपिक के लिए तैयार हुआ है, उसी तर्ज पर राष्ट्रमंडल खेलों की तैयारी में जुटे अधिकारी अपनी योजनाओं को दिशा दें तथा चीन से सबक लें।

○ प्रधानमंत्री डॉ०मनमोहन सिंह

बदले जमाने में विश्व राजनीति में भारत की भूमिका की अब अनदेखी संभव नहीं। इस दृष्टि से सुरक्षा परिषद में भारत को स्थायी जगह देनी होगी।

○ ब्रिटिश प्रधानमंत्री गार्डन ब्राउन

मुझे पूरा विश्वास है कि यूरोप का अतीत एशिया का भविष्य नहीं होगा, बल्कि एशिया का शानदार इतिहास मानवता के भविष्य का निर्धारण करेगा।

○ विपक्ष के नेता लाल कृष्ण आडवाणी

मैं सुरक्षित मकान से आजिज आ चुकी हूँ और कोलकाता वापस लौटना चाहती हूँ। मैं अपनी नजरबंदी की स्थिति को खत्म करना चाहती हूँ और कोलकाता लौटना चाहती हूँ, जो हमारा शहर है।

○ तसलीमा नसरीन

शिक्षा के बिना न तो देश की गरीबी दूर होगी और न विकास की गति तेज होगी।

○ डॉ. ए.पी.जे अब्दुल कलाम

शेयर बाजार में उछाल की अर्थव्यवस्था की सेहत आँकने का पैमाना बताने वाली केंद्र सरकार को आड़े हाथों लेते हुए ए.बी.बर्धन ने कहा कि सरकार पंचतारा जुआघर चला रही है।

○ भाकपा महासचिव ए.बी. बर्धन

पाक के सैनिक ओसामा बिन लादेन को ढूँढ़ने के काम में नहीं लगे हैं, बल्कि उनका अभियान पूरी तरह तालिबान के खिलाफ अभियान पर केंद्रीत है।

○ पाक राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ

With Best compliments from :

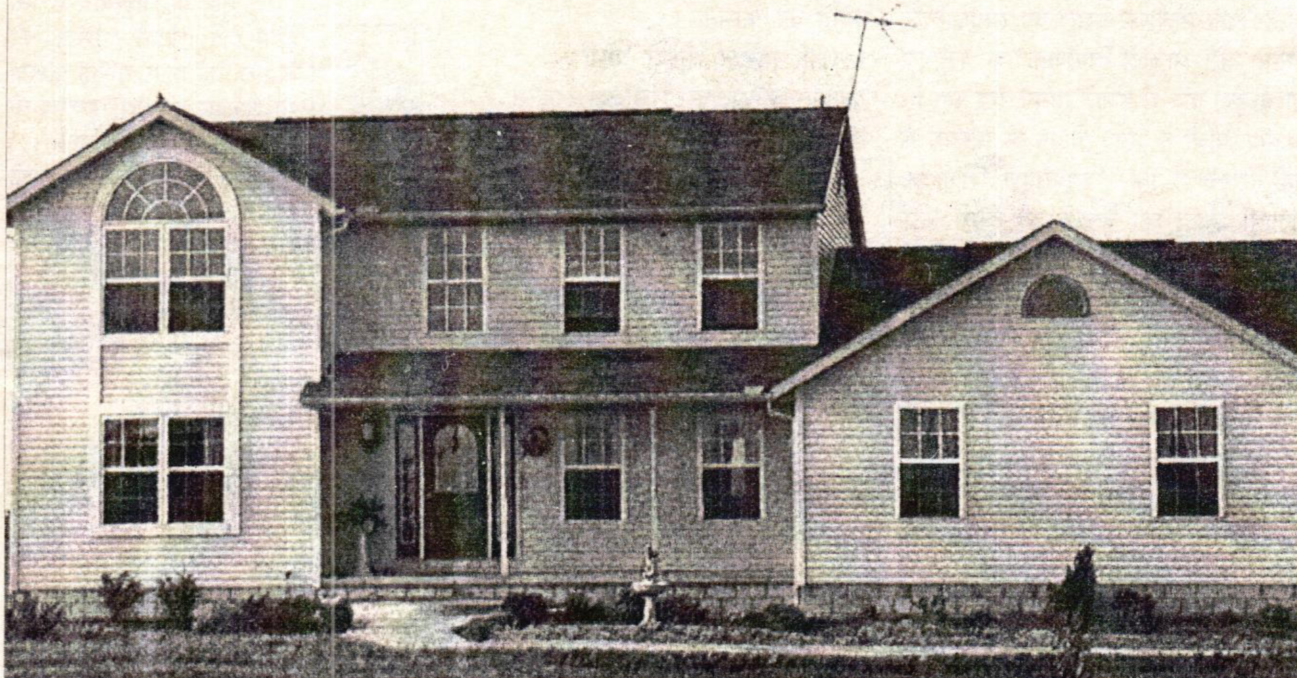

M/s. Amarpal Singh Malik

Contractors

New Delhi

राष्ट्रीय एकता आज इस देश में क्यों आवश्यक

आर्थिक प्रगति की जिस राह पर आज यह देश चल रहा है उसमें आतंकवाद, नक्सलवाद, उग्रवाद और अलगाववाद के अतिरिक्त इसकी सीमा से सटे पड़ोसी देशों की विस्तारवादी नीति ने अकारण ही कई रुकावटें पैदा कर दी हैं। चीन ने 1962 में भारत की सीमा पर हमला किया था, वेशक उसने काफी इलाका बाद में खुद ही खाली कर दिया, किंतु आज भी 38 हजार किलोमीटर इलाका जो वास्तव में हमारा है, चीन के कब्जे में है। दूसरी ओर जम्मू-कश्मीर का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा अक्साईचीन, जो पाकिस्तान ने चीन की दोस्ती के बदले एक उपहार के रुप में दे दिया था आज भी चीन के कब्जे में है। बल्कि सच तो यह है कि चीन ने उसे अपना हिस्सा ही बना रखा है। इसी प्रकार अरुणाचल जिसके संबंध में चीन का हर बड़ा या छोटा नेता या अधिकारी यह कहने से नहीं चूकता कि अरुणाचल का तवांग इलाका चीन का है और वह उसे वापस चाहिए बार-बार हमें काँटे की तरह चुभाता रहता है। सवाल यह है कि भारत क्यों नहीं इन मुद्दों पर आवाज उठाता है? हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि असली समाधान राजनीतिक ही होते हैं और इस मामले में चीन ने हमेशा हमें शह दी और हम बेबस होकर मार खाते रहे हैं। इन तथ्यों के आलोक में क्या हम यह महसूस नहीं करते कि इस देश में आज राष्ट्रीय एकता की कितनी आवश्यकता है?

इसी प्रकार बांग्ला देश, म्यांमार, श्रीलंका और नेपाल में जो कुछ हो रहा है, वह भी भारत की चिंताओं को बढ़ाने वाला है। इन पड़ोसी देशों में जारी उथल-पुथल को उनका आंतरिक मामला इसलिए नहीं माना जा सकता, क्योंकि उनकी गतिविधियाँ परोक्ष और प्रत्यक्ष रूप से भारत को प्रभावित कर रही हैं। पिछले दिनों नई दिल्ली में 'जागरण फोरम' के मंच पर जनतांत्रिक एशिया की समस्याओं पर विचार करने के लिए जुटे देश के प्रमुख राजनेता लालकृष्ण आडवाणी, पी. चिदंबरम, कपिल सिब्बल, अरुण जेटली तथा यशवंत सिन्हा ने एशिया के हालात चिंताजनक पाए। उन्होंने माना कि भारत के इर्द-गिर्द स्थितियाँ ठीक नहीं, उससे आम आदमी का भी चिंतित होना स्वाभाविक है। इस दृष्टिकोण से राष्ट्रीय एकता के लिए इस पर भी विचार होना चाहिए कि कुछ पड़ोसी देशों में भारत विरोधी गतिविधियाँ क्यों बढ़ती जा रही हैं।

इस दृष्टि से देखा जाए, तो मुझे लगता है कि भारतीय संविधान की धारा 370 भी राष्ट्रीय एकता में बाधक सिद्ध हो रही है। इस संदर्भ में चिंतक व विचारक तथा भारत के पूर्व केंद्रीय मंत्री जगमोहन द्वारा व्यक्त उनकी पुस्तक 'माई फ्रोजेन टरब्यूलेंस इन कश्मीर' की निम्न पंक्तियाँ हमारी धारणा की संपुष्टि करती हैं, जिसमें कहा गया है कि "धारा 370 कुछ और नहीं, बल्कि जन्नत के हृदय में जोकों का चारागाह है। यह गरीबों की खाल खिंचती है, उन्हें मृगतृष्णा दिखाकर धोखे में रखती है तथा नए सुल्तानों के 'अहं' को हवा देती है" वस्तुत: धारा 370 द्विराष्ट्रवाद की अरुचिकर विरासत को जीवित रखती है। यह इस देश के अस्तित्व को नकारते हुए कश्मीर से कन्याकुमारी तक की महान सामाजिक एवं सांस्कृतिक धरती के हर विचार को धुँधला करती है। उल्लेख्य है कि संविधान की धारा 370 का सार यह है कि संघीय संसद रक्षा, विदेशी व संचार मामलों के अलावा संघ व समवर्ती सूची में शामिल विषयों पर कानून बना सकती है, लेकिन वह भी राज्य सरकार की सहमति से। इस संदर्भ में यह भी काबिलेगौर है कि कश्मीर की स्वायत्तता और 1952-53 से पूर्व स्थिति की बहाली की माँग लोगों को गुमराह करने वाली और भ्रम में डालने वाली है, क्योंकि इसका सीधा अर्थ है अलगाववाद को बढ़ावा देना। आज की 'ज्यादा स्वायत्तता' का मतलब है, कल की स्वतंत्रता। सच मानिए, इस तरह की माँग के भयानक और गंभीर नतीजे होंगे और देश अंततः कई टूकड़ों में बँट जाएगा। इसके मद्देनज़र इस देश में आज राष्ट्रीय एकता आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है।

आपको याद होगा कि एक बार देश के प्रधानमंत्री डॉ० मनमोहन सिंह तक ने कहा था- 'देश के संसाधनों पर मुसलमानों का पहला हक है। मुझे लगता है सांप्रदायिकता के नाम पर इस तरह का बयान देश की एकता के लिए घातक और खतरनाक साबित हो सकता है। इसी सांप्रदायिक नजरिए से एक बार देश के टुकड़े हो चुके हैं जिसका दुष्परिणाम देश आज तक भुगत रहा है। इधर सारे देश में यह महसूस की जा रही है कि प्राय: सभी राजनीतिक दलों द्वारा सत्ता के लिए मुस्लिम तुष्टीकरण नीति से आतंकवाद को शह मिल रही है। इसी प्रकार लेखिका तसलीमा नसरीन ने बांग्लादेश में हिंदू उत्पीड़न और मुसलमानों में व्याप्त कुरीतियों पर प्रहार किया, तो उससे मुसलमानों से माफी माँगने को कहा जा रहा है। तसलीमा को माफी की नसीहत देकर एक तरह से न केवल भारतीयता

को अपमानित किया जा रहा है, बल्कि राष्ट्रीय एकता पर भी आँच आ रही है।

हम इस देश में राष्ट्रीय एकता इसलिए चाहते हैं कि यह अखंड रहे। इसकी अखंडता पर हमें गर्व है। मगर दुखद स्थिति यह है कि नेता इसकी अखंडता की केवल कसमें ख़ाते हैं और दूसरी ओर सैनिक इसकी अखंडता के लिए अपनी जान न्योछावर करते हैं। एक तरफ हम अखंड भारत की रक्षा चाहते हैं, तो दूसरी तरफ इसके राज्य अब खंड-खंड हुआ चाहते हैं। हमारे नेता कसमें खा रहे हैं कि हम इस अखंड भारत के राज्यों को खंड-खंडकर देंगे। कहीं झारखंड, कहीं उतराखंड तो कहीं बुंदेलखंड। फिर वहाँ खंड-खंड पार्टियाँ होंगी, खंड सरकारें होंगी। जैसे आजकल झारखंड और उतराखंड में हैं। उधर विदर्भ की माँग है, तेलंगाना की माँग है ही। मगर मैं सोचता हूँ कि राज्यों के खंड-खंड हो जाने से क्या विदर्भ के किसान आत्महत्या करना छोड़ देंगे? बुंदेलखंड की हालत सुधर जाएगी? पूर्वांचल की गरीबी मिट जाएगी? यदि ऐसा होता तो झारखंड में आदिवासियों की समस्याएँ तो जस की तस हैं। हाँ, नेता जरूर मालामाल हो रहे हैं। खंड-खंड का तो इतिहास यह है कि नेता इन पर टूट पड़ेंगे और जनता देखती रह जाएगी।

वर्ष 2008 में हमने अपने गणतंत्र की 58 वीं वर्षगांठ भी मना ली और 15 अगस्त 2008 को आजादी की 61वीं वर्षगांठ भी पूरी होगी। स्वाधीनता के पूर्व यहाँ 562 राज्य-राजवाड़े थे। सरदार पटेल के करिश्में ने इन्हें भारतीय राष्ट्र में मिलाया। जम्मू-कश्मीर का एकीकरण नेहरुजी के जिम्मे था। वह आज हमारा सिर-दर्द बना हुआ है। इस देश की सीमाएँ तो अशांत हैं ही, पूर्वोत्तर के सातों राज्यों में बारुदी गँध हैं। विदेशी घुसपैठ की परिस्थितियाँ युद्ध जैसी हैं। आतंकवाद प्रत्यक्ष युद्ध है। नक्सलवादी-माओवादी हिंसा है। मजहबी आक्रामकता है। क्षेत्रवाद अपने नग्न रूप में है। अनेक नए राज्य बनाने की राजनीतिक माँगे हैं। किसान आत्महत्या कर रहे हैं। अलगाववाद का सेंसेक्स राष्ट्र विभाजन की सीमा पार कर रहा है, लेकिन केंद्र रुग्न और लाचार है। वह अल्पसंख्यकवाद का पैरोकार है। ऐसी विकट एवं भयावह स्थिति में हमें राष्ट्रीय आत्मचिंतन करने की आवश्यकता है और राष्ट्रीय एकता को कैसे बरकरार रखें इस पर भी चिंतन-मनन की ज़रूरत है।

राष्ट्रीय एकता आज इस देश के लिए इसलिए भी आवश्यक हो गई है, क्योंकि शिवसेना के अध्यक्ष बाल ठाकरे के बाद अब महाराष्ट्र नव निर्माण सेना के अध्यक्ष राज ठाकरे जैसे नेताओं के बयान देश की एकता को तोड़ने की एक साजिश की तरह लग रहे हैं। हाल ही में उन्होंने कहा कि उत्तर प्रदेश और बिहार के लोगों को अगर मुंबई में रहना है, तो मराठी बोलना ही होगा वरना उन्हें बाहर का रास्ता दिखा दिया जाएगा। इतना ही नहीं उन्होंने बिहार तथा उत्तर प्रदेश के सबसे लोकप्रिय और पवित्र पर्व छठ का भी मजाक उड़ाते हुए कहा कि छठ भी एक नाटक है और इसके बहाने बिहारी मुंबई में अपना प्रभुत्व बढ़ाना चाहते हैं। राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में उनका यह बयान इसलिए बिस्फोटक है कि एक ओर जहाँ भारतीय भाषाओं के उन्नयन की बात राष्ट्रीय एकता को बरकरार रखने के लिए हम करते हैं, तो दूसरी ओर छठ जैसे लोकप्रिय एवं पवित्र पर्व भी हमारी भारतीय संस्कृति की विरासत और धरोहर हैं, जो हमारी राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने में सहायक हैं। बिहार और उत्तर प्रदेश के लोगों को मराठी भाषा सीखनी चाहिए, यह अच्छी बात है और सच तो यह है कि मुंबई में रहने वाले बिहार तथा उत्तर प्रदेश के अधिकांश लोग मराठी सीख भी चुके हैं, मगर मराठी नहीं सीखने और छठ पर्व मनाने पर ठाकरे जी के बयान कुछ अटपटे से लगते हैं, जिसकी निंदा हर हाल में की जानी चाहिए, क्योंकि उनके बयान देश में भाषाई दरार पैदा कर राष्ट्र की एकता और अखण्डता को भी ठेस पहुँचा रहे हैं, जो देशद्रोह है।

आखिर किसी देश को क्या चाहिए? देश की जनता को पर्याप्त भोजन, सुरक्षित सीमाएँ, शांत आंतरिक भू-भाग और समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर। मगर जरा हम सोचें कि हम देशवासी आज किस संक्रमण काल के दौर से गुजर रहे हैं। महाराष्ट्र के विदर्भ, उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा के किसानों द्वारा आत्महत्या के जो आँकड़ें आ रहे हैं वे हमें शर्मसार करते हैं। देश में आज चार करोड़ से अधिक किसान परिवार कर्ज के सहारे अपनी गृहस्थी चला रहे हैं।

जब हमारी नजर अपनी सीमाओं पर जाती है, तो पाते हैं कि वह दशकों से सिकुड़ती जा रही है, घुसपैठ और तस्करी का हम मूकदर्शक बने बैठे हैं। पाकिस्तान ने 78 हजार वर्ग किलोमीटर हमारे भू-भाग पर अवैध रूप से कब्जा कर रखा है। पड़ोसी चीन ने हमारी हजारों वर्ग किलोमीटर धरती तो कब्जाई ही, हमारी 90,000 वर्ग किलोमीटर भू-भाग पर अपना अवैध दावा भी कर रखा है। उसका यह भी दावा है कि जम्मू-कश्मीर के साथ अरुणाचल प्रदेश भारत का वैध हिस्सा नहीं है। हिमालय पर चीन द्वारा बनाई गई सड़कें हमारे लिए खतरे के संकेत हैं।

जहाँ तक हमारी आंतरिक सुरक्षा का सवाल है इस देश के जर्रे-जर्रे में आतंकवाद की नागफनी उग चुकी है। हिंसा के सरकंडों में छुपे विषधर रूपी आतंकी सुरक्षा व्यवस्था का प्राय: रोज ही माखौल उड़ा रहे हैं चाहे पूर्वी उत्तर प्रदेश हो या पश्चिमी, पूर्वांचल की सीमा से सटे राज्य हों या दक्षिण के, कौन सा स्थान आतंकियों के निशाने पर नहीं हैं? एक विस्तृत और सुनियोजित श्रृंखला है इसके पीछे, जो

भारत में दशकों से उन्माद बनी हुई हैं।

यही नहीं देश के कई हिस्सों में कहीं नक्सली हिंसा, कहीं अलगाववाद, तो कहीं देशद्रोह के रूप में उभार ले रहा है। छतीसगढ़, झारखण्ड और बिहार में आतंकियों और नक्सलियों की कहर से सैकड़ों निर्दोष मारे जा रहे हैं और पुलिस भी शहीद हो रहे हैं।

इसी प्रकार हमारी सांस्कृतिक धरोहरें और सामाजिक मान्यताएँ भी हर क्षण हमले झेलती, दम तोड़ती मगर दूब की तरह जिजीविषा लिए हमें अँधेरे में जुगनुओं की तरह रास्ता दिखाने का प्रयास कर रही हैं। देश ही नहीं कभी पूरी दुनिया को रोशनी दिखाने वाले नालंदा एवं तक्षशिला विश्वविद्यालयों का क्या हश्र हुआ, किसी से छिपा नहीं है। इनमें से एक नालंदा विश्वविद्यालय बिहार में रोगग्रस्त है, तो दूसरी के अस्थिपंजर पाकिस्तान के रावलपिंडी की धरती पर पड़े हैं। यही नहीं हमारी नई पीढ़ी भारतीय संस्कृति को अलविदा कह बड़ी तेजी से पश्चिमी उपभोक्तावादी संस्कृति का अँधानुकरण कर रही है जिससे हमारो सामाजिक संरचना और पारिवारिक ढाँचे तो बिगड़ ही रहे हैं, पारिवारिक रिश्तों में भी दरारें स्पष्ट दिख रही हैं।

आखिर इन सभी बीमारियों एवं समस्याओं के लिए कौन जिम्मेदार है? हम अपने गिरेबान में क्यों नहीं झाँकते? अभी-अभी पिछले दिनों नई दिल्ली में आतंरिक सुरक्षा पर आयोजित मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में हमारे प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने बड़ी ईमानदारी से यह स्वीकार किया कि आर्थिक असमानता का सीधा संबंध नक्सलवाद और आतंकवाद से है, जो हमारी आतंरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा है। इस संदर्भ में मैं यह भी कहना चाहूँगा कि आंतरिक सुरक्षा की गड़बड़ी से विकास भी प्रभावित होता है। दोनों एक दूसरे पर काफी हद तक निर्भर करते हैं।

जहाँ तक सामाजिक सुरक्षा की बात है आज हम देशवासी जाति-धर्म, भाषा, क्षेत्रवाद और लिंगभेद की चुनौती से जूझ रहे हैं, जिसका संबंध आर्थिक विषमता से नहीं है। तसलीमा नसरीन जैसी प्रखर एवं प्रतिभाशाली लेखिका पर चारों तरफ से हमला और किरण बेदी जैसी तेज-तर्रार महिला आई पी एस अधिकारी की उपेक्षा को क्या आप आर्थिक विषमता से जोड़ सकते हैं? दरअसल, आजादी के दो-तीन दशक के बाद ही हमारे राजनेता सत्ताधारियों ने अपने तात्कालिक स्वार्थ के लिए किस तरह राजधर्म को गिरबी रख दिया। कभी भिंडरावाले का इस्तेमाल किया, तो कभी प्रभाकरन का। सत्ता के लिए शुरू हुआ राजनेताओं का यह आत्मघाती खेल अब तक हजारों कीमती और निर्दोष लोगों की जानें ले चुका है। इधर तुष्टीकरण की नीति ने तो राजनीतिक दलों और उसके नेताओं को और बेनकाव करके रख दिया है। और तो और अब मजहब के नाम पर अलग से बजट में आवंटन होने लगा है। यह तो देश को एक तरह से तोड़ने और सामाजिक ढाँचे को तहस-तहस करने का एक नया तरीका राजनेताओं ने ढूँढ़ निकाला है।

सच तो यह है कि सत्ता का चेहरा प्रत्येक युग में एक-सा ही रहा है, बस केवल रंग और आकार बदल जाता है। वोट के लिए किसी खास वर्ग को खुश कर हम पहले से भी उसका परिणाम भुगत रहे हैं। आंतरिक सुरक्षा पर जो खतरा है क्या उसमें देशद्रोहियों और विदेशी आतंकियों का हाथ नहीं है? और यदि है तो देश में उसे कौन पनाह दे रहा है? निश्चित रूप से हमारे बीच के लोग ही उसे पनाह दे रहे हैं।

बल्कि सच तो यह है कि इन देशद्रोहियों को यदि कोई प्रश्रय दे रहा है तो वे हैं हमारे राजनेता और सत्ता से जुड़े लोग। आपने देखा नहीं प० बंगाल के नंदी ग्राम में किस तरह वोटों की फसल काटने के लिए लोगों के अस्तित्व को खाद बनाकर इस्तेमाल किया गया लहू से सींची गई सत्ता की पौध और सत्ता के सहयोगी दल के पंथनिरपेक्ष कहलाने वाले झंडाधारी इस हिंसा में शामिल बताए गए।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि चारों ओर से हमारी राष्ट्रीय एकता चरमरा रही है और समाज में असंतोष चरम पर है। सामाजिक सुरक्षा का संकट हर किसी को साल रहा है। टूटते मूल्य और हर क्षण नष्ट होती हमारी सांस्कृतिक धरोहरें एक ओर जहाँ हमें संक्रमणकाल की तरफ इशारा कर रहे हैं, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय एकता पर भी खतरा मंडरा रहा है। ऐसी विषम एवं भयावह स्थिति में भी आंतरिक सुरक्षा पर पिछले दिनों नई दिल्ली में बुलाई गई मख्यमंत्रियों की बैठक में कुछ ठोस नतीजे पर नहीं पहुँचना इस बात का परिचायक है कि देश की एकता, अखण्डता और संप्रभुता को चुनौती देने वाले तत्त्वों से दो-दो हाथ करने की इच्छाशक्ति न तो केंद्रीय सत्ता में दिखी और न ही राज्य सरकारों में। यदि यही स्थिति रही, तो हम देश की राष्ट्रीय एकता को कैसे अक्षुण्ण बनाए रख सकते हैं? इस सवाल का जवाब है–

कहीं न कहीं से, किसी न किसी को, शुरुआत तो करनी होगी, भारत की तस्वीर, बदलनी ही होगी, अपनी लड़ाई, खुद लड़नी होगी।

राष्ट्रीय एकता आज देश की सर्वाधिक आवश्यकता है। कारण कि लोकतंत्र की सफलता और देश की प्रगति के लिए राष्ट्रीय एकता ही मूलाधार है, चाहे देशवासी किसी भी धर्म, जाति, धर्म, क्षेत्र और भाषा के हों उनकी राष्ट्रीयता एक ही होती है, जो लोगों को एकता पैदा कर देश की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक प्रगति का मार्ग खोलती है।

राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में एक और बात काबिलेगौर है कि भारत को भारतीय स्रोतों और भारतीय विचारधाराओं के आधार पर समझने की जरूरत है, न कि विदेशी

स्रोतों और विदेशी विचार-परंपराओं के आधार पर। डॉ० भीमराव अम्बेडकर का स्पष्ट मत था कि भारत को समझने के लिए उसकी बुनियादी शर्त यह है कि उसे यहाँ की परंपराओं, ज्ञान-विज्ञान के स्रोतों और उपकरणों तथा यहाँ की धरती और सोच में रचे-बसे बाशिंदों के जरिए समझना होगा। भारत की आबादी का 84-85 प्रतिशत हिंदू है, जिसे अबतक प्रायः हर राजनीतिक दल और विचारधारा ने दुत्कारा है और गरियाया है। राजनीतिक दलों और विचारधाराओं ने भारत की सबसे बड़ी आबादी के साथ जो सलूक किया है, उसकी तुलना दुनिया के इतिहास में किसी भी देश या घटना से नहीं हो सकती। खुद को पंथ-निरपेक्ष और आधुनिक मानने की बहस में हम इतने आगे बढ़ गए कि हम हिंदू विरोधी और हिंदू समाज को तोड़ने वाले हो गए। नतीजतन आज हम खुद के हिंदू होने पर इतना शर्मिंदा हो गए कि हिंदुत्व हमें इस देश की हर घृणात्मक वस्तु का जनक और प्रतीक नजर आने लगा। ऐसी स्थिति में हमें आज इस बात पर गंभीरता से विचार करने की जरूरत है कि कैसे इतनी विचार-परंपराएँ इस देश में पनपीं और उसका स्वरूप क्या है। आखिर देश वैसा ही तो बनेगा जैसा देश की 84-85 प्रतिशत आबादी चाहेगी। यह तानाशाही नहीं लोकतंत्र की सहज स्थिति है। मगर राजनीति ने उसे जातियों में बाँटकर बिखेर देने की कोशिश की और आज भी कर रहो है। अगर किसी देश की इतनी बड़ी आबादी एकजुट नहीं रहेगी, तो दुनिया की कोई ताकत उस देश को टूटने से बचा नहीं सकती और उस स्थिति में राष्ट्रीय एकता पर संकट मंडराना स्वाभाविक है।

प्राचीन काल में भी राजनीति, अर्थ, भाषा, मजहब और जाति लोक जीवन को तरह-तरह के ये पाँचों ईर्षालु और स्पर्धा इकाईयों में विभाजित करने वाले तत्त्व मौजूद थे, फिर भी वे देश की एकता को भंग नहीं कर पाए 'जिसकी एक ही वजह' थी राष्ट्रय एकता। दरअसल, राष्ट्र को विघटन करने वाली दुष्प्रवृत्तियाँ काल के प्रवाह में आती गईं और हम देशवासी उसमें फँसते गए। जैसे संस्कृति शब्द का प्रयोग पहले 'धर्म' शब्द के अंतर्गत होता था जिसमें समस्त जीवन पद्धति आ जाती है। यही 'धर्म' शब्द धीरे-धीरे विकृत्त होता गया और जगह-जगह संकुचित अर्थ में प्रयुक्त होने लगा। विभिन्न कौमों ने अपने-अपने धर्मों को प्रधानता दी। भारत में भी धर्म की प्रधानता रही है, किंतु वह राजनीति को नहीं छू पाया था। अशोक के समय में भी धर्म की प्रधानता रहने के बावजूद समय पड़ने पर राष्ट्रीय एकता ही राष्ट्र के काम आई। उस वक्त भी दर्शन पक्ष के क्षेत्र में परस्पर बड़ा मतभेद रहा, पर वह चिंतनशील एवं समझदार महापुरुषों तक ही सीमित रहा और दूसरी बात यह कि धर्म के मौलिक तत्त्वों में कोई बड़ा मतभेद नहीं था। यही कारण है कि शंकर, बुद्ध, कबीर, महावीर, गुरु नानक तथा तिरुवल्लुवर आदि धर्म नेता इस देश में समान रूप से सम्मान पाते रहे। भारत के सामाजिक संगठन, अर्थव्यवस्था और राजनीतिक परंपरा पर धर्मभेद का विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। धार्मिक क्षेत्र में मतभेद होते हुए भी जनता पर विशेष प्रभाव नहीं डाल सका और सब धर्म राष्ट्र की एकता में बँधे रहे और हमारे देश में राष्ट्रीय एकता बनी रही, मगर मौजूदा दौर में हर धर्म एक दूसरे को नीचा दिखाने पर अमादा है। धार्मिक और जातीय कट्टरता का रोग प्रायः हर धर्म और जाति में आज दिखाई देता है। धर्मांधता और कट्टरता की वजह से हमारे देश में आए दिन झगड़े-फसाद होते दिखाई देते हैं। जब कोई दूसरा देश हमारे देश पर आक्रमण करता है तो देश उसका सामना राष्ट्रीय भावना की कमी की वजह से नहीं कर पाता है। राष्ट्रीय एकता तमाम ऐसे झगड़े को समाप्त कर सकती है, क्योंकि राष्ट्रीयता की भावना से सिर्फ राष्ट्र का ही भला नहीं होता, बल्कि व्यक्तियों के बीच धर्म की कच्ची दीवारें भी टूटती हैं और जाति-पाति के भेदभाव भी समाप्त होते हैं। यही नहीं कला, साहित्य, विज्ञान, व्यापार की भी वृद्धि होती है। देश का धन विकास कार्यों में लगता है। अतः आज देश को राष्ट्रीय एकता की सर्वाधिक आवश्यकता है, जिसके लिए देशवासियों में राष्ट्रीय भावना को जगाना ज़रूरी है। वैसे भी जिस माटी में हमने जन्म लिया, जिस धरती पर बहने वाली सरिताओं का जल हमने पिया, जिस हवा में हमने सांस ली, जिस नीले आकाश के चाँद और तारों भरी शीतल रोशनी में मन की आँखों से अपने प्रिय को निहारा है, उस देश के साथ अपनत्व और निजत्व रखना तो हमारा नैतिक और राष्ट्रीय दायित्व बनता है। इसलिए समय का तकाजा है कि हम अपनी सभ्यता, संस्कृति, भाषा और साहित्य के अक्षय कोष के प्रकाश स्तंभ तले नए विहान के आगमन को सुनिश्चित करें जिसके लिए राष्ट्रीय एकता अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि ये ही वे तत्त्व हैं, जो दिलों को ही नहीं कौमों और सारी मानवता को जोड़ते हैं तथा हर तरह के भेदभावों से पैदा होने वाली संकीर्ण मानसिकता से ऊँचा उठने की प्रेरणा देता है। जाने-माने शायर अहमद फराज और रामबहादुर चौधरी 'चंदन' की ग़ज़लों की इन दो-दो पंक्तियों से अपनी बात समाप्त करता हूँ-

तमाम उम्र कहाँ कोई साथ देता है
ये जानता हूँ, मगर थोड़ी दूर साथ चलो।

तोड़े हैं आँधियों ने कुछ पत्ते हरे मगर,
टूटा नहीं कभी यहाँ गुलशन का रूवाब है।

मानुषी उत्तरदायित्त्वबोधः दशा और दिशा

○ प्रो॰ कुमार रवीन्द्र

आज की एक बड़ी समस्या है मनुष्य के सामाजिक उत्तरदायित्वबोध के सिकुड़-सिमिट कर एकल परिवार तक परिसीमित हो जाने की। इसका एक मुख्य कारण है मनुष्य की रागात्मक चेतना का क्षीण हो जाना। हम मेधावी तार्किक, अधिक बुद्धिमान तो हुए हैं, पर उसी अनुपात में हमारी विवेक-बुद्धि, हमारी हार्दिकता, हमारी अन्य के प्रति संवेदनशीलता कमजोर भी हुई हैं। विशुद्ध वैयक्तिक स्वार्थ से परिचालित हमारी जीवनचर्चा में हमारी सामाजिक संचेतना दिनानुदिन विरल होती गई हैं। आपाधापी भरे आज के परिवेश में मनुष्य की राजसिक एवं सात्त्विक कृत्तियों के बीच जो एक संतुलन हुआ करता था, वह भी कहीं बिला गया है। वस्तुत: आज का मनुष्य मात्र एक अर्थ-पशु बन कर रह गया है। आदिम रागात्मक संचेष्टताओं के बगैर केवल पाशविक वृत्तियाँ ही शेष रह गई हैं। यही है आज की सभ्यता की सबसे बड़ी त्रासदी। हुआ यों कि पाश्चात्य समाज, जो आज की योगवादी एवं पदार्थवादी सभ्यता का प्रणेता एवं प्रसारक है, पिछली सदी के दो महायुद्धों और उसके उपरांत के लगभग अर्द्धशती के शीतयुद्ध से इतनी बार आहत एवं खंडित-विखंडित होता रहा कि उसकी मानुषिकता के धरातल में गहरी दरारें आ गईं, उसका सामूहिक अवचेतन, जिसमें सामाजिक उत्तरदायित्वबोध सदियों सदियों के संस्कार से पला-पुसा था, एकाएक ध्वस्त हो गया। उसका स्थान लिया प्रथम विश्वयुद्ध की विभीषिका से उपजे एक निरर्थकता-बोध ने, एक आशयमुक्त अनास्था ने, एक संवेदनशून्य अंहभाव ने। यह पदार्थवादी अहंमन्यता, जो आज के पूरे वैश्विक परिवेश में हमें व्याप्त दिखाई देती है, उसी मूल्यहीन पराभव-संज्ञान से उपजी है। विश्वयुद्धों ने मानव-आचरण के वे सारे अनुशासन, सारी आत्म-नियंत्रण की प्रविधियों को विनष्ट कर दिया, जिससे एक उत्तरदायित्त्वपूर्ण सभ्य समाज का निर्माण हुआ था। बची रह गई एक आसुरी संपदावाली सीमित स्वार्थपरक दृष्टि, जिसमें कदाचरण एवं उच्छृंखल व्यवहार को ही एकमात्र श्रेय मान लिया गया। इक्कीसवीं शताब्दी को जो पिछली सदी की मूल्यविहीन नास्तिकता थाती के रूप में मिली है, उसने हमारे सामाजिक उत्तरदायित्वबोध को पूरी तरह निष्क्रिय कर दिया है। आज तो हाल यह है कि सामाजिक संचेतना क्या है, इसे जानना, परिभाषित करना ही नामुमकिन हो गया है। बिना उत्तरदायित्वबोध के सामाजिक संचेतना का कोई अर्थ भी तो नहीं है।

टी॰एस॰ एलियट ने प्रथम विश्वयुद्ध के तुरंत उपरांत की स्थितियों का अंकन करते हुए 1921-22 में विरचित अपनी प्रख्यात महाकविता ''वेस्टलैंड'' में इसी बंजर-हुई आस्तिकता को विभिन्न रूपकों में अभिव्यक्ति दी है। उसमें एक बंजरभूमि और उसके नपुंसक राजा की आरव्या कही गई है। साथ ही, समग्र रूप से आहत-हुई एक रोग-ग्रस्त मानसिकता को भी विविध प्रतीक-बिंबों में रूपायित किया है एलियट ने। जलविहीन बंजरभूमि है हमारी सारी पदार्थिक प्रगति, क्योंकि उसमें मानुषी आस्था को पोषित करने वाले अमृत-जल का अभाव है। यह अमृत-जल है मनुष्य की रागात्मक संवेदना का, जिसकी खोज भी हो रही है उन स्थलों में ही, जो हलाहल हां उपजाते हैं और उस हलाहल को पचाने वाला, धारन करने वाला शिव-कंठ भी हमारे पास नहीं है। टी॰एस॰ एलियट ने इस परास्त नपुंसक मानसिकता का एकमात्र समाधान प्रस्तुत किया है बृहदारव्यक उपनिषद् के रूपकारख्यान में, जिसमें प्रजापति ब्रह्मा अपनी तीनों संतानों-दानव, देवता एवं मनुष्य-को दयाध्वम, दमयत: एवं दत्ता: के बीज-अक्षर 'द' से अभिषिक्त करते हैं। हमारे सामाजिक उत्तरदायित्त्वबोध का बीजमंत्र है यह त्रिपादी अक्षर 'द'। समाज की संरचना और उसके स्वस्थ परिचालन एवं विकास हेतु इन्हीं तीनों जीवन-मूल्यों यानी मानुषी करुणा, आत्म-नियंत्रण एवं आत्म-त्याग की परम आवश्यकता है। यही हैं संवेदनशून्य स्वार्थपरक-पदार्थवादी आसुरी संपदा के एकमात्र उपचार और इन्हीं जीवनमूल्यों की पुनर्स्थापना से बंजरभूमि-हुआ हमारा मानुषी परिवेश फिर से उर्वर हो सकेगा।

योरोपीय सभ्यता की एक मूलभूत समस्या यह रही है कि वह मनुष्य को आदिम पशु मानती है और इसके मूल में है सेमेटिक धर्मों की यह मूल मान्यता कि मनुष्य ईश्वर द्वारा दंडित एक अपिशक्त जीव है और प्रभु की आज्ञा की अवहेलना करने के कारण जन्मना पायी है। ईसाई धर्म के अनुसार, प्रभु यीशु द्वारा निदेशित मार्ग पर चल कर ही ईश्वर की प्रीति को पुन: प्राप्त किया जा सकता है। इस आशय से सदियों के आत्मानुशासन से जो संस्कृति विकसित हुई बीसवी सदी के प्रारंभ में हुए विश्वयुद्ध ने उसे ध्वस्त कर दिया और उसका जो आघात सभ्यता को पहुँचा, वह यूरोपीय इतिहास घटी तमाम दुर्घटनाओं से भी अधिक भयावह सिद्ध हुआ। फरवरी 1990 में विख्यात ब्रिटिश लेखक-पत्रकार बर्नाड लेविन ने 'आज का उत्तरदायित्त्व' शीर्षक अपने सर दोराबजी टाटा मेमोरियल व्याख्यान में प्रथम विश्वयुद्धोपरांत घटी तीन संघातक घटनाओं का जिक्र किया, जिन्होंने मनुष्य की युगों-युगों की आस्तिकता एवं आस्था को आमूल-चूल हिला कर रख दिया। वे घटनाएँ थी रूसी क्रांति, फ्रायड की स्थापनाओं से उपजी अवचेतना विषयक गलत धारणाओं का पूरे विश्व में प्रचार-प्रसार, और कला के क्षेत्र में शिल्प एवं आकृति अथवा 'पैटर्न' का पूरी तरह अस्वीकार। नई सोवियत सत्ता ने मार्क्स के निश्चयवाद को 'प्रोलेतेरियत' सत्ता और अंतत: एक दलगत सत्ता से जोड़ कर एक ऐसे तंत्र को जन्म दिया, जिसमें स्वार्थ-सिद्धि को ही एकमात्र

श्रेयस्कर सिद्धांत मान लिया गया और उचित-अनुचित का निर्णय इसी एकमात्र कसौटी पर निर्भर हो गया। इसी बहुमत की स्वार्थ-सिद्धि के आंगिक सिद्धांत पर ही आधृत हुई उनकी तथाकथित जनतांत्रिक सत्ता। साम्यवाद और समाजवाद अंततः असफल सिद्ध हुए और एक ऐसी उच्छृंखल समाज-व्यवस्था में परिणत हो गए, जो वस्तुतः भीड़तंत्र थी। आज के संदर्भ में पूँजी-केंद्रीत आर्थिक तंत्र द्वारा परिचालित प्रजातंत्र भी ऐसे ही विकृत होने की कगार पर है।

श्री लेविन के अनुसार फ्रॉयड के अवचेतन द्वारा निदेशित मानुषी आचरण के सिद्धांत में भी विकृत्ति का प्रवेश हुआ और वह इस स्थापना तक सिमिट कर रह गया कि मनुष्य अपनी अवचेतनीय वासनाओं का पूरी तरह दास है और उनसे ही बाध्य है और यह भी कि जन्मना यह बाध्यता ही किसी व्यक्ति के गलत-सही आचरण के लिए जिम्मेदार है। अस्तु, मनुष्य अपने आचरण को कोई भी दिशा देने में असमर्थ है। इसलिए किसी भी व्यक्ति को उसके कदाचरण के लिए दोषी नहीं मानना चाहिए। सामाजिक उत्तरदायित्व की धारणा इसमें पूरी तरह निरस्त हो गई।

तीसरी बात, जिसकी ओर श्री लेविन ने अपने व्याख्यान में ध्यान दिलाया, वह थी कला एवं साहित्य के क्षेत्र में किसी भी प्रकार के नियमों-अनुशासनों की अवहेलना। सांस्कृतिक धरातल पर इसके बड़े दूरगामी घातक परिणाम सामने आये। शिल्प, जो कि कला का एक महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्त्व हुआ करता था और जिसे होना चाहिए भी, पूरी तरह नकार दिया गया। शिल्पाकृति के इस अस्वीकार से हुआ यह कि कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में एक ऐसी अराजकता व्यापी कि कला को परिभाषित करना एवं उसकी सौंदर्यानुभूति को पहचानना भी संदेहास्पद हो गया। इससे मनुष्य की नैतिक-सांस्कृतिक- कलात्मक-आध्यात्मिक चेतना ही ध्वस्त होने की कगार पर आ गई।

श्री बर्नार्ड लेविन के अनुसार, मनुष्य के उत्तरदायित्वबोध के जो अनुशासन-आधारित तीन प्रमुख स्तंभ थे, वही इन तीन ऐतिहासिक दुर्घटनाओं के कारण ध्वस्त हो गये और समाज में एक अराजकता व्याप गई और यहीं से व्यक्ति और उसके सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच अलगाव का सूत्रपात हुआ। मनुष्य के कर्म और उसके उत्तरदायित्वबोध के मध्य जो एक घनिष्ठ रिश्ता हुआ करता था, उसका विलोपन हो गया। इसके बाद कोई भी व्यक्ति पूरी नेकनीयती से यह कहने को स्वतंत्र हो गया कि समाज के प्रति उसकी कोई ज़िम्मेदारी नहीं है। यह एक बहुत ही बड़ी सामाजिक दुर्घटना है और इसी के कारण समाज की सारी व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई है।

अपने व्याख्यान के अंत में श्री लेविन ने मानुषी उत्तरदायित्वबोध को परिभाषित करते हुए संतुलित मानव आचरण का ज़िक्र किया, जिसके अंतर्गत नैतिकता, व्यावहारिकता, आत्म-सम्मान, जीवट एवं उल्लास, कुछ नया करने की ललक एवं क्षमता, साहस, दूसरों के प्रति सहानुभूति और सेवा-भाव तथा समुचित और ईमानदारीपूर्ण संग्रहशीलता का संतुलित समन्वयन हो। इसके लिए सामाजिक अंतबोधि और सामूहिक स्वाधीनता का सम्मिलित भाव होना परम आवश्यक है।

श्री लेविन के इस व्याख्यान से सामाजिक उत्तरदायित्वबोध के संदर्भ में आज के पाश्चात्य विचारकों की चिंता का पता चलता है। भारतीय चिंतन में सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रश्न को मनुष्य के कर्त्तव्यों और उसके संचित एवं अर्जित कर्मो के सिद्धांत से जोड़ कर देखा गया है। औपनिषदिक दृष्टि का पता ऊपर उल्लिखित वृहदाख्यक उपनिषद से भली प्रकार लग जाता है। 'सर्व भवन्तु सुखिनः' की सर्वकल्यानकारी दृष्टि हमारे सामूहिक सामाजिक उत्तरदायित्वबोध से ही उपजी होगी। हमारी ऋषि-दृष्टि में व्यक्ति और समाज को पृथक करके नहीं देखा गया था। व्यक्ति का विकास और समाज का विकास अन्योन्याश्रित स्थितियों के रूप में ही भारतीय चिंतन में मान्य रहे हैं। पितृऋण, ऋषि-ऋण और देवऋण के विचार की व्याख्या भी इसी रूप में की जानी चाहिए। ये सभी ऋण मनुष्य के उत्तदायित्वबोध की ही व्याख्या करते है।

सामाजिक मूल्यों के चराभव और उनकी निरंतर बढ़ती अवमानना से आज जो सामाजिक अनाचार की स्थिति व्याप रही है, उसका यदि तुरंत निराकरण नहीं किया गया, तो मनुष्य समाज ही नहीं रह जायेगा। वैसे ही आज कम्प्यूटरीकृत हुई मानवीय संचेतना हर व्यक्ति को अपने-अपने कैबिन तक सिमटे रहने को विवश कर रही है। समाज को मशीन से नियंत्रित करने की और-अधिक चुस्त एवं कुशल प्रविधियाँ नितप्रति विकसित हो रही हैं। सारे मानुषी ज्ञान-विज्ञान को एक लघु सिलीकॉन चिप में समेट लिया गया है। इसके कारण मनुष्य के द्वारा मनुष्य के प्रशिक्षण की सामाजिक भूमिका लगभग या तो समाप्त हो गई है या फिर नगन्य अथवा गैर-जरूरी मान ली गई है। किंतु मनुष्य की मानुषिकता क्या उसके बौद्धिक-तार्किक विकास तक ही सीमित है, यह एक विचारणीय प्रश्न है। प्रसिद्ध लेखक-चिंतक ऑल्डस हक्सले ने अपनी बहुचर्चित औपन्यासिक कृति 'ब्रेव न्यू वर्ल्ड' में एक ऐसे भविष्य के संसार की परिकल्पना की है, जिसमें व्यक्ति और समाज की संरचना का निर्धारण प्रयोगशालाओं में कुछ रसायन वैज्ञानिक करेंगे और जिसमें जन्म-मृत्यु की धारणाएँ मात्र मशीनी स्थितियाँ रह जाएँगी। पूरे वैश्विक समाज का संचालन कुछ व्यक्ति एक कमरे में बैठ कर करेंगे और व्यक्ति की स्वतंत्रता या उसकी समाज में स्थिति एवं भूमिका जैसे प्रश्न अनर्गल हो जाएँगे। परीक्षणनली से उद्भूत, 'अल्फा-बीटा-गामा-डेल्टा' वर्णों में विभाजित व्यक्ति पूरी तरह अपने नियंताओं की इच्छाओं के दास होंगे। उनमें प्रेम-स्नेह-पारस्परिक छोह-मोह जैसे गैर जरूरी भाव कतई नहीं होंगे। मातृत्व-पितृत्व के समाप्त हो जाने से उनमें न तो कोई उत्तरदायित्वबोध होगा और न ही कोई अपराधबोध। वे एक ऐसी भावना-शून्य निर्मिति होंगे, जिनके सुख भी उनके नियंता द्वारा पूर्व-निर्धारित होंगे और जिन्हें सुख-प्राप्ति के लिए भी एक-दूसरे के सन्निध्य की आवश्यकता नहीं होगी। उस

अतिविकसित समाज में मनुष्य का चिंतन भी उसके 'स्व' के सुख तक ही सीमित होगा। योगवादी यह मशीनी व्यवस्था पूरी तरह रोबोट संचालित होगी और मनुष्य नाम के जीव की इच्छाएँ आदि भी उन्हीं की तरह की मशीनी एवं पूर्व-निश्चित होंगी। इस मशीनी बँध-हुए समाज में न तो वैयक्तिकता होगी और न ही सामाजिकता। यह 'ब्रेव न्यू वर्ल्ड' कैसा होगा, इसके कुछ संकेत आज के तेजी से अमानुषिक-मशीनी होते वैश्विक परिवेश से मिलने लगा है। अब सोचना यह है कि क्या मनुष्य-जाति का यह विकास और मनुष्य द्वारा सुख की तलाश की यह दिशा, सच में, स्पृहणीय हैं? हक्सले के उपन्यास के नायक-नायिका अंततः एक आदिम जंगली समाज में पहुँच जाते हैं, जहाँ उन्हें अपनी मानुषी वृत्तियों को जानने-पहचानने का मौका मिलता है और तब वे जान पाते हैं कि उनकी तथाकथित सभ्यता का विकास कितना अधूरा, कितना आँगिक, कितना दिशाहीन है। ऑल्डस हक्सले ने अपनी उस प्रासँगिक कृति के माध्यम से जो यक्ष-प्रश्न आज की वैज्ञानिक प्रगति के बरअक्स उठाये हैं, उन पर भी पूरी गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

हम जिस 'ब्रेव न्यू वर्ल्ड' को रचने का आज दंभ कर रहे हैं, उसमें सामाजिक उत्तरदायित्व केवल पूँजीवादी व्यवस्था के तहत एक ऐसे समाज के निर्माण तक सीमित है, जो विशुद्ध भोगवादी होगा और जिसकी संस्कृति पूरी तरह बाहरी चमक-दमक और बाज़ार की होगी। हाट-संस्कृति प्राकृतिक संसाधनों के अँधाधुंध दोहन और वैयक्तिक प्रतिभा के शोषण तक ही सीमित होती है। उसका सामाजिक उत्तदायित्व इतना ही होता है कि उसके माध्यम से पूँजीपतियों को इस बात का अवसर मिल सके कि वे ऐसा कर सकें। ईसाई धर्म में एक परिकल्पना है 'ऐंटीक्राइस्ट' की, जिसके आकर्षक व्यक्तित्व को कोई नकार नहीं पाता और जो क्राइस्ट के पुनरागमन से पूर्व एक ऐसे समाज की संरचना करेगा, जिसमें पाप-पुण्य का संज्ञान नहीं होगा और जो शुद्ध रूप से भोगवादी होगा। मैरी कैरोली के प्रसिद्ध उपन्यास 'सॉरोज ऑफ सैटन' में इसी ऐंटीक्राइस्ट' की परिकल्पना की गई है, जो अपनी सर्वव्यापी पदार्थिक समृद्धि एवं स्वरूपवान चुंबकीय व्यक्तित्व से हर व्यक्ति को अपना दास बना लेता है। किंतु वह स्वयं दुखी है, क्योंकि उसे तलाश है एक ऐसे मनुष्य की, जो क्राइस्ट की तरह उसके दैहिक-भौतिक आकर्षण को कर सके। आज हम उसी शैतानी 'ऐंटीक्राइस्ट' व्यक्तित्व के आकर्षण की चपेट में हैं। वह 'ऐंटीक्राइस्ट' और कोई नहीं, हमारी स्व-केंद्रित भोगवादी दृष्टि ही है। बाइबिल की आदम-हौव्वा की जो रूपक कथा है, उसमें 'गार्डन ऑफ ईडन' का वर्जित फल, जिसे खाने को शैतान उन्हें प्रेरित करता है, और जिसे खाते ही वे दोनों यानी आदि-मानव युगल अपनी सरल निर्दोष भाव स्थिति को खो बैठते हैं और भोग दृष्टि के अधीन हो जाते हैं, यही मात्र भौतिक दैहिक सुखों का आकर्षण ही तो है। क्राइस्ट का अवतरण इसी अभिशप्त स्थिति से मनुष्य को उबारने के लिए होता है। हमारे सामाजिक उत्तरदायित्त्वबोध का निरस्त करने वाली इस दृष्टि का आख्यान हर धर्म में हर मसीहे-पैगंबर-संत-महात्मा द्वारा किया गया है, जिससे हम इसकी चपेट में आकर दूसरों के प्रति सहानुभूति और करुणाभाव को त्याग कर अपने सामाजिक उत्तरदायित्त्वबोध को न खो बैंठे।

हमारा सामाजिक उत्तरदायित्त्व इतने तक ही सीमित नहीं होना चाहिए कि हमने अपने बाल-बच्चों को पाल-पोस कर बड़ा कर दिया और उन्हें इस योग्य बना दिया कि अपनी स्वार्थ-सिद्धि वे दूसरों के मुकाबले अधिक सक्षमता एवं चतुराई से कर सकें। आज हम 'सर्वाइवल' की दुहाई देकर स्वयं को और अपनी संतानों को अधिक-से-अधिक आत्म-केंद्रित और स्वार्थी बना रहे हैं। किंतु हम भूल जाते हैं कि समाज के स्वस्थ विकास से ही हमारा व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्ध हो पायेगा। अस्तु यह आवश्यक है कि हम उन रागात्मक-भावनात्मक प्रविधियों को न मरने दें, जिनसे सदियों-सदियों समाज और व्यक्ति के स्वार्थों में सामंजस्य बना रहा और जिनके माध्यम से मनुष्य-समाज की जीवंतता निरंतर संवर्धित होती रही। कम्प्यूटर-आधृत अपने मानसिक कौशल को ही परमसिद्धि न मान कर यदि हम मनुष्य को मनुष्य बनाने वाले कला और साहित्य के संसर्गों से स्वयं को और अपने निकटस्थ परिवार को समृद्ध करते रहें, तो संभवतः उस त्रासदी से हम मनुष्य जाति को बचा पाएँगे, जो सामाजिक उत्तरदायित्वबोध के क्षरण से आज हमारे समय खड़ी है।

संपर्क : 'क्षितिज' 310, अर्बन एस्टेट-2
हिसार-125005 (हरियाणा)

साई तेरी समाधि

मोहन लाल मगो

देखी जबसे तेरी समाधि उसने हर विपदा मेरी दूर भगा दी।
जगबंधन के विष काटने अमृत की बूंद पिला दी,
दिशाहीन जीवन को जीने की विधा बता दी।
मोहमाया के फंदे छुड़ाकर प्यार मोहब्बत की जोत जगा दी,
हँसते-हँसते दरबार तेरे आया तूने खुशियाँ और बढ़ा दीं।
समाधि पे बीते जीवन की पहली सुबह और अंतिम शाम,
तेरी समाधि ने परमार्थ की ज्वाला जगा दी।

संपर्क : 132ए, पॉकेट-1 मयूर विहार,
फेज-1, दिल्ली-91
मो. 9818978484

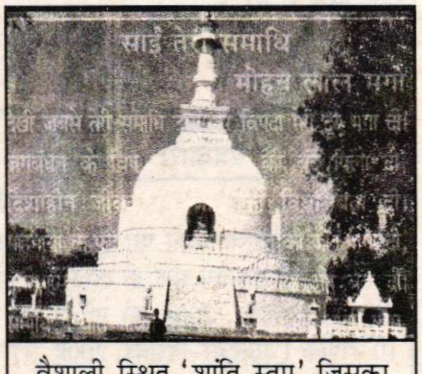

वैशाली स्थित 'शांति स्तूप' जिसका पिछले दिनों राष्ट्रपति ने मुआयना किया।

दो लघुकथाएँ

○ डॉ. रामनिवास 'मानव'

टॉलरेंस

दिन में देखी 'शहीद' फिल्म उसकी आँखों के सामने घूम रही है। भगतसिंह के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है ... बर्फ की शिला पर लिटाया जाता है ... चाबुकों से पीटा जाता है ... गंदा खाना दिया जाता है। फिर भी वह अपनी माँ को पत्र में लिखता है-'तुम किसी प्रकार की चिंता मत करना। यहाँ के लोगों का बर्त्ताव बहुत अच्छा है। जेलर बड़े मेहरबान हैं।'

'ग्रेट टॉलरेंस!' उसके मुख से निकलता है। उसका मन भगतसिंह के प्रति श्रद्धा से भर जाता है। वह धीरे-से करवट बदलता है।

रील फिर चल पड़ी। उसकी पत्नी उसके बराबर सर्विस करती है। सुबह-सांझ घर का काम करती है, वह अलग। बीमार भी रहती है। वह रोज शराब पीकर गई रात घर लौटता है। बात-बात पर तुनकता है, डांटता है, पीटता भी है। वह घर पत्र लिखती है-'मेरी चिंता मन करना मम्मी। ये बहुत ही अच्छे हैं। सच, इनके साथ रहकर बहुत खुश हूँ मैं।'

'ग्रेट टॉलरेंस !' उसके मुख से फिर निकलता है। उसका मन अपनी पत्नी के प्रति प्यार से भर आता है। वह फिर करवट बदलता है।

'ऐं!' वह अर्धनिद्रा में ही चौंकता है। पत्नी अभी भी उसके पैर दबा रही है। वह गुस्से

से गुर्राता है-'कमबख्त, अभी तक सोई नहीं! आधी रात हो गई।

और पत्नी को एक लात जमाकर वह एक बार फिर करवट बदल लेता है।

मुक्ति

बंधुआ मज़दूरों की मुक्ति के लिए सर्वोदयी नेता पुलिस की चौकसी में ट्रक लेकर ईंट-भट्ठे पर पहुँच गये। उनके आह्वान पर सभी मज़दूर तत्काल अपना सामान बाँध कर चलने को तैयार हो गये।

ट्रक के पास आकर मज़दूरों के मुखिया के पैर ठिठक गये। उसने और उसके साथ सभी दूसरे मज़दूरों ने अपना-अपना सामान ज़मीन पर रख दिया।

'चलिये-चलिये, अपना-अपना सामान जल्दी से ट्रक में रखिये, सर्वोदयी नेता ने कहा।

सभी मज़दूर मुखिया की ओर देखने लगे। वह चुप रहा।

'बुधराम, क्या बात है भई ! खामोश क्यों हो? अपने साथियों को सामान रखने के लिए कहा न!'

मुखिया अब भी चुप था, जसे कुछ सोच रहा हो। सर्वोदयी नेता ने समझा, ये पुलिसवालों से डर रहे हैं अतः उनकी ओर संकेत करते हुए बोले-'ये सिपाही तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे। ये तो हमारे साथ हैं, तुम्हारी मुक्ति के लिए आये हैं।'

'सा' ब! म्हां की किस्मत में तो यों ही लिख्यों है।' मुखिया बोला-'काल इपैं नाया तो दूजा ओर भट्टा पै सही, एई मजूरी करनी पड़ैली।'

'क....क्यों ?'

'ऐं भट्टा ली कैद सैं तो थे मुक्त करा द्यो ला, पण भूख सौं मुकत कोण करावैलो सा 'ब!'

संपर्क : 706, सैक्टर-13, हिसार-
125005 (हरियाणा)

लेखकों व पत्रकारों के लिए

आवश्यक सूचना

मंच द्वारा राष्ट्रीय निर्देशिका का निःशुल्क प्रकाशन

मान्यवर,

हमें यह जानकारी देते हुए बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि 'राष्ट्रीय विचार मंच' द्वारा भारतीय संविधान में स्वीकृत सभी भाषाओं के भारतीय / भारतीय मूल के लेखकों / साहित्यकारों एवं पत्रकारों का जीवन-वृत (**Bio-Data**) देवनागरी लिपि में निःशुल्क प्रकाशित तथा 31 अक्टूबर, 2008 को नई दिल्ली में सरदार पटेल की 133 वीं जयंती के अवसर पर 'विचार दृष्टि' के पत्रकारिता पर केंद्रीत 10-वर्षांक (अक्टूबर-दिसंबर, 2008, 37 वें अंक) के साथ ही इस निर्देशिका का लोकार्पण किया जाएगा। टंकित / सुस्पष्ट हस्तलिखित अपना जीवन-वृत (**Bio-Data**) एक पासपोर्ट आकार के हालिया फोटो के साथ निम्नांकित प्रपत्र में यथाशीघ्र अधोहस्ताक्षरी को उपलब्ध कराने का कृपया कष्ट करें।

:: प्रपत्र ::

1. पूरा नाम **2.** साहित्यिक/ उप नाम **3.** पिता का नाम **4.** जन्म तिथि **5.** जन्म स्थान का ज़िला एवं राज्य **6.** शैक्षिक योग्यता **7.** पेशा / संबंद्धता **8.** लेखन / पत्रकारिता की भाषा **9.** प्रमुख विधाएँ / कार्यक्षेत्र **10.** प्रकाशित पुस्तकें **11.** पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाओं की संख्या **12.** प्राप्त सम्मान / पुरस्कार **13.** अभिरुचि **14.** अन्य उल्लेखनीय बातें **15.** संपर्क सूत्र (दूरभाष संख्या सहित)

प्रमाणित किया जाता है कि उपर्युक्त सभी सूचनाएँ सत्य हैं।

स्थान .... तिथि .... हस्ताक्षर

प्रेषण का पता : डॉ॰ शाहिद जमील, उप संपादक, आवास सं॰- सी॰- 6, पथ सं॰- 5, आर॰ ब्लॉक, पटना - 800001

दूरभाष संपर्क : 09430559161(मो॰) / 0612-2226905 (कार्या॰)

बिहार

○ सुरेन्द्रनाथ तिवारी

आम्रपाली की आम्रवाटिका, बोधिसत्त्व का यह ज्ञानस्थल,
वैदेही की जन्मभूमि यह, यह बिहार भारत का गौरव।
यह विदेह का नंदनवन जो होता था अभिराम कभी,
छवि-गृह की वह दीपशिखा, जिस पर भ्रमरे थे राम कभी।
इन कुँजों को याद अभी भी सियाराम की प्रणयकथा है,
झुकीं झुकीं आँखें सीता की, और राम की मनोव्यथा है।
इस धरती को याद अभी भी, शिव धनु के टंकारों की है,
परशुराम के दर्प-गर्व की, लक्ष्मण के हुंकारों की है।
नालंदा के खंडहरों में छुपा ज्ञान विज्ञान यहाँ
याद करो वह बोधि-वृक्ष, सिद्धार्थ हुआ भगवान जहाँ।
गाँधी जी का कर्म-स्थल यह, सत्याग्रह की मानस-भू है,
जीरादेई की यह धरती, वह वसुधा राजेंद्र-प्रसू हैं
नागार्जुन से विद्यापति से पुत्रों की यह माँ है मिथिला
भारती-मंडन से मंडित यह प्रज्ञा-प्रतिम रसा है मिथिला
बागमती-सिकरहना सिंचित धान्य-पुष्प वसुधा है मिथिला
मैथिल बोली-सी मीठी यह, एकमात्र मिथिला है मिथिला।
विद्यापति की गीति-वीथि यह,
दिनकर का यह कविता कानन।
यह बिहार भारत का गौरव।
इन कुँजों में खेल-खेल कर बड़ी हुई होगी अंबपाली
उसके अल्हड़पन से गुँजित अब भी इसकी डाली-डाली।
आम्रपाली के प्रथम प्यार की साक्षी इसकी गलियाँ आँगन,
उस अल्हड़ नूपुर की धुन को अब भी ढूँढ़ रही वैशाली।
बाबु कुंअर सिंह, तेगवा बहादुर से वीरों की माटी अपनी,
गौरव औ बलिदान-धर्म की, सदा रही परिपाटी अपनी।
यह पवित्र स्थल सिक्खों का, हम थे कभी निहाल यहाँ,
ग्रंथियों के ऊँचे सुर में था गूँजा 'सत श्री अकाल' यहाँ।
सिंहभूमि यह, मानभूमि यह, वीरों की अभिमान भूमि यह,
विरसा की बलिदान भूमि यह, यह गौरव आह्वान-भूमि यह।
शेरशाह सूरी की माटी, सहसराम अपना बिहार है,
बाबा वैद्यनाथ का घर यह, देवधाम अपना बिहार है।
गाँधी-गौतम-महावीर का, कर्मस्थल अपना बिहार है,
लिच्छवियों का, रोहिताश्व का, राजमहल अपना बिहार है।
मौर्य-शौर्य की यह जननी है,
यह अशोक का है गौरव-गढ़।
यह बिहार भारत का गौरव।
इन राहों से गुजरा होगा, लुंबिनी का वह राजकुमार,
महाबुद्ध बनने की इच्छा ले, तज माया का संसार।
चलते चलते क्लांत-श्रांत हो, थका दिवस के ढल जाने पर
किसी आम्र-तरुवी के नीचे, बैठ किसी ऊँची उड़ेर पर
संध्या के एकांत और पथ से विकलित विश्रांत हृदय में,
उसे याद आई होगी यशोधरा, विरह-सिक्त एकांत निलय में।
स्नेह-सिक्त भुज-पाश प्रिया का, यादें भोली राहुल की
यशोधरा के मृदुल प्यार की, तुतली बोली राहुल की
क्या हिल नहीं गया होगा,
उस गौतम का विश्वास गहन?
यह बिहार भारत का गौरव।
कहाँ गई यतिवर की शांति, महावीर का महाज्ञान वह?
जगती को नीति सिखलाने वाला नालंदा महान वह?
बोधिवृक्ष की शांत छांह में कैसे होती हैं हत्याएँ?
सीता की धरती पर कैसे लूटी जाती हैं ललनाएँ?
विमल बुद्ध का कर्मस्थल क्यों आज घिनौना हुआ बताओ?
संस्कृति का उत्तुंग-शिखर यह, कैसे बौना हुआ बताओ?
है योगी जो योग छोड़ कर, जगे धरा का मान बढ़ाने?
लिए सुजाता खीर खड़ी है, आज उसे भगवान बनाने।
किस रावण के पापों का शोणित-घट इसको सोख रहा है?
सीताओं की दबी आह से इसका अंतर नोच रहा है
क्या फिर राम अवतरित होंगे, धर्मयुद्ध का शंख बजेगा?
रावण के मद-मर्दन हेतु, क्या फिर कोई सैन्य सजेगा?
सीताओं की रक्षा खातिर, दो तपसी आयुध धारेंगे?
जन-गण का नेतृत्व करेंगे, असुरों का दल संहारेंगे?
गज को ग्राह से मुक्ति दिलाने, केशव, तुम फिर आओगे क्या?
गंगा-गंडक के संगम को फिर पावन कर जाओगे क्या?
मौर्यों को फिर शौर्य सिखाने, क्या आमात्य-नायक आएगा?
अर्जुन को कर्त्तव्य बताने, गीता का गायक आएगा?
क्या विदेह फिर राजा होंगे? क्या नरेश का हल निकलेगा?
शुष्क क्षितिज के दूर कोर से क्या कोई बादल निकलेगा?
बरस-बरस जो न्याय नीति से सींचेगा यह पावन उपवन
फिर जग का नेतृत्व करेगी, नालंदा की धरती पावन?
संस्कृति का ध्वंसावशेष क्या पुनः बनेगा गौरव-गढ़?
आम्रपाली की आम्रवाटिका, बोधित्त्व का यह ज्ञानस्थल,
वैदेही की जन्मभूमि यह, यह बिहार भारत का गौरव!

संपर्क : 23, रूट, 519 नार्थ, न्यूटन, न्यू जर्सी-07860,
यू॰ एस॰ ए॰ फोन 973-579-1565

डॉ0 देवेन्द्र आर्य के पाँच मुक्तक

(1)

रात-दिन की जुस्तजू है यह सवेरा
खूबसूरत गंध यह मन का चितेरा
मुद्दतों से भोर का अनुबंध है जब
क्या करेगा घेर कर मुझको अंधेरा।

(2)

नाग दंशों पर चलो अंकुश लगाएँ
और चंदन गंध से मंदिर सजाएँ
शब्द के पिन तो जमाने ने चुभोएँ
नेह के संबंध से मन को मनाएँ

(3)

नेह की वंशी बजाना चाहता हूँ
यातना से मुक्त करना चाहता हूँ
कपट का वातावरण चारों तरफ है
आँसुओं को गीत देना चाहता हूँ

(4)

पाँखुरी से गंध की पाती लिखो तो
ज़िंदगी में प्रेम दो आखर लिखे तो
हर तरफ से चांदनी मौसम खिला है कंटकों
में सृजन पथ का सुख लिखो तो

(5)

ज़िंदगी कितनी हसीं है, क्या बताएँ
व्यर्थ में रो-रो इसे हम क्यूँ गवाएँ
संसार की हर-चीज़ कमतर जिंदगी से
प्यार के दो बोल से इसको सजाएँ।

संपर्क: बी॰98, सूर्य नगर, गाज़ियाबाद

ग़ज़ल

○ डॉ. दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'

संध्या हुई तो रात होनी है,
पूरी हृदय की बात होनी है।
होगी जहाँ भी चाँदनी गौरी,
रस से वनस्पति स्नात् होनी है।
कृति को सिरजते सोचकर यह ही,
कल लोक में विख्यात होनी है।
पहना कवच यह मानकर रण में,
लड़ते कभी तो घात होनी है।
गरजें घटाएँ बिजलियाँ कड़कें,
मानें, सघन बरसात होनी है।
खोएँ विजय तो प्रेम में खोएँ,
जिसमें न जय या मात होनी है।

संपर्क : सिविल लाइन्स, कोटा-324001

मैं गौतम बुद्ध नहीं होता

○ जियालाल आर्य

जग में करुणा का भाव अगर
ईश्वर ने नहीं दिया होता
मानव बचपन की याद लिए
दो पग यदि नहीं चला होता।
शैशव की किलकारी में यदि,
माता का प्यार नहीं होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होता।
लुम्बिनी-ग्राम-तरुछाया में
यदि माँ को प्रसव नहीं होता।
वैशाख पूर्णिमा का पावन
दिनमान नहीं चमका होता।
रानी को माँ कहलाने का
पद उस दिन नहीं मिला होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होता।
बन-वाग-तड़ाग-नगर-दर्शन
बचपन में यदि दुर्लभ होता।
विंध तीर रक्त में लथपथ हो
पक्षी यदि नहीं गिरा होता।
भाई-भाई के बीच अहिंसा-
हिंसा कलह नहीं होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होता।
झुर्रियाँ त्वचा पर परिलक्षित
मुख पर नैराश्य नहीं होता।
आँखों का तेज क्षीण होते
यदि उन्हें दिखाई न देता।
वात्सल्य पिता शुद्धोदन की
आँखों में अगर नहीं होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होता।
रुग्णित काया की सुन कराह
यदि मानव दुखित नहीं होता।
कंधों पर शव का भार लिए
ना 'रामसत्व' गाया होता।
वृक्षों की स्वासों में जीवन
माली का प्यार नहीं होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होगा।
रोहिणी नदी के जल को ले,
झगड़ा यदि नहीं हुआ होता।
संकल्प स्वदेश छोड़ने का
गौतम ने नहीं लिया होता।
पीपल की ठंढी छाया में
यदि आश्रय नहीं मिला होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होता।
चाँदनी पूर्णिमा का नभ से
पृथ्वी पर नहीं विछा होता।
धरती पर वोध गया की तब
पावन बुद्धत्व नहीं होता।
भगवान बुद्ध का जन्म लोक में
अब तक नहीं हुआ होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होता।
मनभावन हिरण्यवती तटपर,
यदि कुशीनगर-वन ना होता।
निर्वाण वहाँ पर गौतम का
निश्चय ही नहीं हुआ होता।
जन-जीवन ज्योति जलाने को
निर्वैर तथागत न होता।
मैं गौतम बुद्ध नहीं होता।

संपर्क : 23, आई॰ ए॰ एस॰ कॉलोनी
किदवईपुरी, पटना-1

ग़ज़ल

• उदय कुमार 'राज़'

दोनों तरफ में वही चाह बरक़रार रहे
दिल में हो दर्द मगर प्यार बेशुमार रहे

खिज़ाँ के संग तो नाता मेरा पुराना है
जहाँ भी वह रहें चारों तरफ बहार रहे

मेरे हिस्से में ग़म उनका खुशी से बढ़कर है
मैं चाहता हूँ उनके ग़म पे अख़्तियार रहे

इसी उम्मीद पे कि मुलाक़ात होगी कभी
मुझको उनका, उनको मेरा भी इंतज़ार रहे

बीच मझधार से किश्ती को बचा ही लेगा
हौसले वाले के गर हाथ में पतवार रह

'राज़' सुनकर मेरे दिल का वह मुस्कराते रहे
साथ हो उनका तो फिर ज़िंदगी गुलज़ार रह

संपर्क : एस॰-107, स्कूल ब्लॉक,
शकरपुर, दिल्ली-92

हाइकु

हिंदी जगत के जाने-माने हाइकुकार डॉ. सुरेन्द्र वर्मा ने देश के 27 सुप्रसिद्ध हाइकुकारों के एक-एक हाइकु छंद 'विचार दृष्टि' के जनवरी-मार्च 08 अंक-34 में प्रकाशनार्थ नववर्ष की शुभकामनाओं सहित बतौर अभिनंदन-पत्र भेजे थे, पर विलंब से मिलने के कारण उस अंक में उनका समावेश न हो सका। पाठकों के हित में उन्हें प्रस्तुत अंक 35 में स्थान देना हमने लाज़िमी समझा है। ❋ संपादक

सुंदर धरा
कमी अयोध्या सहे
कभी गोधरा

पवन कु॰ जैन

कहाँ है गाँव?
मेने पूछा गाँव से
रो पड़ा गाँव

पासर दासोद

नदी किनारे
सरके जैसे साँप
राह गाँव की

भगवत भट्ट

लंबे होते हैं
हमसे भी अधिक
हमारे साये

भासकर तेलंग

बासों में आग
रगड़ खा-खाकर
होती है फाग

मदन मोहन उपेंद्र

परछाई भी
करती मुखबिरी
दु:ख की घड़ी

महावीर सिंह

खुल गए हैं
'पी कहाँ' पुकार से
पृष्ठ पिछले

रमाकांत श्रीवास्तव

फूलों के बीच
बेखबर फूलों से
बैठा है श्वान

रमेश कु0 त्रिपाठी

प्रेम राधा से
व्याह रूकमणि से
खेल सबसे

रमेश चन्द्र 'चंद्र'

बुढ़ऊ बाबा
गाँव के बरगद
हैं काशी काबा

राजेंद्र 'राजन'

बंद आँखों से
खोजते हैं प्रकाश
अंतर्मन में

राजेंद्र 'बंधु'

वक्ता पढ़ाता
सोलह दूनी आठ
हम पढ़ते

राजेंद्र वर्मा

चाँद का हाला
रजनी के गले में
मंगल सूत्र

ललित पावर

नींद के मारे
ओस बन लुढ़के
आकाश तारे

शंभु शरण 'बंधु'

अंकुर फूटा
चट्टान को फाड़ के
नंहा कोमल

श्याम खरे

युगों युगों से
अर्ज करते रहे
प्रभु लापता

सदाशिव 'कौतुक'

रोक न सका
समय को कोई भी
हम ही रुके

सिद्धेश्वर

चिड़िया रानी
चार कनी बाजरा
दो घूँट पानी

सुधा गुप्ता

निष्कम्प शिखा
जलते दीपक की
रश्मि बिखेरे

सूर्यदेव पाठक

फूलों में छिपी
गंध करे चुगली
चम्पा शर्माई

सुरेन्द्र वर्मा

अभिनंदन-पत्र

नव-वर्ष की शुभकामनाएँ

आँखें हैं झील
किश्तियाँ मछलियाँ
यादें ही यादें

शैल रस्तोगी

उकड़ूँ बैठी
शर्मसार पहाड़ी
ढूँढ़ती साड़ी

उर्मिला कौल

कभी पराए
कभी छलते रहे
अपने साये

केशव शरण

न हो आकुल
छोटी सी गिलहरी
बड़ा सा पुल

गोपाल बाबू

अंत: सलिला
पूजी जाती रहेगी
दिखे न दिखे

जवाहर इन्दु

डाल पै कौए
संसद में सांसद
शोर मचाते

नलिनी कांत

कालिख धुली
हँसी की रोशनी से
सुबह हुई

नीलमेंदु सागर

सौजन्य सुरेन्द्र वमा
10, एच॰ आई॰ जी॰-1,
सर्कुलर रोड, इलाहाबाद

पपीहा के प्रति

पी॰ बी॰ शेली
अनुकृति
❍ डॉ॰ विजय प्रकाश

वंदे हर्षित-हृत साकार्!
विहग? स्वर्ग से तव उद्‌गार
अथवा उसके कहीं निकट से
सात सुरों का मधु व्यापार
इतनी प्रचुर कला से पूर्ण
श्रवण करे जग पहली बार।
सिखला दो अपना-सा गान
विमल विचारों की यह खान
मैंने सुना नहीं, खग श्रेष्ठ!
ऐसा स्वर्गिक वर व्याख्यान
क्या है यह? मदिरा या प्रेम-
की महिमा का विमल बखान?
मधु स्वर का यह निर्झर कांत
स्रोत कहाँ इसका उद्‌भ्रांत?
निष्कुट, लहर या कि आकाश
पर्वत या समतल भू प्रांत?
अपने तरह का अद्‌भुत प्रेम
पीड़ा से बिल्कुल अनजान।
हर्षित हिय का यह उल्लास
नहीं क्लांति का कलित निवास
परांग मुख की छाया, हाय!
आयी नहीं कभी भी पास;
प्रीत किया लेकिन निष्पाप
हुए नहीं तुम कभी उदास।
हानि-लाभ की करते माप
हम अभाव हित करें विलाप
और हमारा सच्चा हास-
भी संयुक्त कछुक संताप
गीत मधुरतम वहीं जहाँ कि
खिन्न विचारों का आलाप।
सिखला दो आधा उल्लास
जो तेरी मेद्या के पास
मेरे मुख नि:सृत हो आज
तुम-सा उन्मत्त स्वर-लय खास
और सुने तब यह संसार
जैसे सुनता मैं भर सांस।

संपर्क : मंत्रिमंडल सचिवालय (राजभाषा) विभाग, बिहार सरकार, पटना-800015

दोहे : बजे प्रेम की बीन

○ डॉ0 रामनिवास 'मानव'

दीपक बनकर मैं जलूं, नेह भरा दिन-रात।
चमके तम को चीरकर, आभा की सौगात।।
प्रेम-भाव का मैं करूं, जग में नित्य विधान।
मानवता का मैं बनूं, सुंदर-सा प्रतिमान।।
चाहे कुछ न मिले मुझे, पाये सब संसार।
अपना भी दे दूं उसे, ऐसा बने विचार।।
दुनिया सुख का पूरा हो, बचे न कोई दीन।
जीवन महफिल-सा सजे, बजे प्रेम की बीन।।
क्यों कोई प्राणी रहे, निर्बल औ निष्चेष्ट।
सोएँ सब संतृप्त हो, खाकर नित भरपेट।।
रोग, शोक, सब व्याधियां, रहें मनुज से दूर।
मस्ती औ' उल्लास से, जीवन हो भरपूर।।
खिले फूल-सा मन रहे, करे प्रेम की बात।
वैर परस्पर का मिटे, संवरें सब हालात।।
मर्यादित रिश्ते रहें, हों लघु-गुरु अनुकूल।
छंद मधुर परिवार हो, दोषों के प्रतिकूल।।
समता को संबल मिले, ममता को आधार।
मानवता की विश्व में, बने कसौटी प्यार।।
दीपक से दीपक जले, फैले नव आलोक।
जग-जीवन उज्ज्वल बने, मानव बने अशोक।।
जले दीप जब नेह का, उर में भरे उजास।
तन-मन को पुलकित करे, प्रेम और विश्वास।।
रोशन हो पाये अगर, जीवन की कंदील।
खुशियों के बिखरें सदा, फूल, बतासे, खील।।

संपर्क : 706, सैक्टर-13, हिसार-1285005

अहम् का बोझ

○ श्रीमती नीलम साह

ओ मूढ़! व्यर्थ प्रयत्न मत कर
खुद को खुद के कंधों पर
उठाने की चेष्टा मत कर।
हे भिक्षु!
अपने ही द्वार पर भिक्षा माँगने जा।
समस्त भार तू उसी को दे
जो सबका भार उठा सकता है
पश्चाताप कदापि न कर।
इच्छाएँ देती बुझा
रोशनियों को सदा
सांस ले रही इच्छाओं से
बुझ जाता रोशनी का दीया।
उस परमात्मा से उपहार मत ले
मत चल अधर्म की राह पर
हस्त नहीं है स्वच्छ अभी
असीम प्यार से मिला उपहार ही ले।

संपर्क : 117/बी, श्रीकृष्णपुरी, पटना -

बात को टाला जाये

○ हितेश कुमार शर्मा

आओ फिर कांटे को कांटे से निकाला जाए,
लड़खड़ाते हुए रिश्तों को संभाला जाए।
वह मेरा दोस्त है, रूँठा है मान जाएगा,
उसपे कमजर्फिये एहसास, क्यों डाला जाए।
मेरी मजबूरी समझता, तो बहुत अच्छा था,
नासमझ है वो, चलो बात को टाला जाए।
मेरी छत पर कभी, जब प्यार का चिराग जले,
दूर तक उसके भी आँगन में उजाला जाए।
प्यार की भूख कभी जब उसे हितेश लगे,
उसके मुँह तक, इन्हीं हाथों से निवाला जाए।
अपना-अपना है, कभी गैर नहीं हो सकता,
नाम क्यों उसका रकीबों में उछाला जाय।
साथ रहकर जो बिताएँ हैं, कई दिन हमने,
आओ फिर से उन्हीं, लम्हों को खंगाला जाए।

संपर्क : गणपति कॉम्प्लैक्स, सिविल लाइन्स, बिजनौर-246701 (उ.प्र.)

माँ

○ नलिनीकान्त

कितना बड़ा
कितना ऊँचा तना
आकाश सूना।
माँ का हृदय
माँ की दया करुणा
नभ से दूना।
आँगन की है
तुलसी माँ, बाहर
नहीं ढूँढ़ना।
सिर ऊपर
छत, दीवारों की है
निर्मल चूना।
माँ ममता है
नहीं मुंबई, नहीं
दिल्ली या पूना।
मोम की मूर्ति
माँ, उसका स्पर्श है
प्रभु को छूना।
सारे मंत्रों को
भूल जाना, किंतु न
माँ को भूलना।

संपर्क : अंडाल, पं. बंगाल-713321

आज के नेता

○ राजभवन सिंह

नेताजी थे वीर सुभाष,
नेता थे राजेन्द्र प्रसाद।
नेता थे जवाहर लाल,
और पटेल को रखो याद ।।
राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी,
वैसा तो कोई हो न सकेगा।
पर कुछ अन्य व्यक्ति भी थे,
उन्हें भी क्या कोई भूलेगा?
वे सारे नेतागण अपने,
वैभव, पद-प्रतिष्ठा छोड़।
देश के हित में लगे हुए थे,
सारे भोगों से मुख मोड़ ।।
पर देखो ये आज के नेता,
क्या कर रहे क्या हो रहा।
जन्मजात ये लोभी-लोलुप,
क्या इनका षड्यंत्र हो रहा।
देश जहन्नुम में चल जाए,
ये अपने घर भरके रहेंगे।
जनता से इनको मतलब क्या,
तीन पाँच ये करके रहेंगे।।
पूर्व के नेताओं का जीवन,
त्याग की शिक्षा देता है।
पर सदैव जो लेता रहता,
वही आज का नेता है।।

संपर्क : पोस्टल पार्क, बुद्धनगर, पथ सं०-2, पटना-800001

यथार्थ और आदर्श का मणि-कांचन योगः यह सच है

समीक्षक ○ प्रो० (डॉ०) सुन्दरलाल कथूरिया

'यह सच है' कविश्री सिद्धेश्वर का चौथा काव्य-संग्रह है। इसके पूर्व प्रकाशित अपने तीन कविता-संग्रहों के द्वारा वे हिंदी काव्य-जगत् में प्रवेश कर चुके हैं। श्री सिद्धेश्वर मूलत: सामाजिक-राष्ट्रीय विषयों के चिंतक-मनीषी हैं। उनकी इसी दृष्टि का प्रतिफलन उनकी कविताओं में भी हुआ है। उनकी कविताओं में भावुकता कम, चिंतन और वैचारिकता ही अधिक है। कहीं-कहीं लयात्मकता के बावजूद उनकी कविताएँ प्राय: गद्यात्मक हैं, विचार-कविता के अधिक निकट हैं। भाव और कल्पना की बजाय उनमें बुद्धि-तत्त्व की प्रधानता है, पर संवेदना और कल्पना से वे नितांत शून्य भी नहीं हैं। पाठकों-श्रोताओं से सीधे संवाद करती संग्रह की कविताएँ समकालीन परिवेश और समसामयिक संवेदना को वाणी देती हैं। युगीन यथार्थ से जुड़ी 'यह सच है' की अधिकतर कविताएँ जीवन के किसी न किसी आदर्श को भी स्थापित करती हैं और कोरी लाफ्फ़ाजी होने से बच जाती हैं। जन-जीवन के निकट होने से इन कविताओं की भाषा बोधगम्य, उलझावरहित और सहज संवेद्य है तथा कथ्य की अभिव्यक्ति में संप्रेषणक्षम है। सिद्धेश्वर उन कवियों में नहीं हैं जो अपने पाठकों को जटिल संवेदनाओं और भाषिक पहेलियों के बीहड़ जंगल में उलझाने में अपने कवि-कर्म की सार्थकता मानते हैं, बल्कि उन कवियों में हैं, जो सहजता में ही कवि-कर्म की सार्थकता मानते हैं-कथ्य, शिल्प और भाषा की सहजता। शिल्प के अनगढ़पन के बावजूद सहज-संप्रेष्य भाषा और उलझावरहित कथ्य ने 'यह सच है' की कविताओं को एक नयी भंगिमा और नवीन सौंदर्य प्रदान किया है, अत: इस संग्रह का कवि साधुवाद का पात्र है।

वर्तमान समय की सबसे बड़ी समस्या आतंकवाद की है। यह राष्ट्रीय ही नहीं, अंतर-राष्ट्रीय समस्या भी है। आतंकवाद की विभीषिका और त्रासदी का शिकार भारत और पाकिस्तान जैसे एशियाई देश ही नहीं, अमेरिका जैसे यूरोपीय देश भी हैं। आतंकवाद का शिकार आम आदमी ही नहीं, बड़े-बड़े राजनेता भी हुए हैं और हो रहे हैं। इस भयावह, त्रासद समस्या का समाधान खोजने में अभी कोई भी देश पूरी तरह सफल नहीं हुआ है। इस दैत्याकार, भयावह, त्रासद, विश्व-व्यापी समस्या से अपनी अनेक कविताओं में श्री सिद्धेश्वर दो-चार हुए हैं। उनकी वह कविता, जिसके आधार पर इस कविता-संग्रह का शीर्षक 'यह सच है' रखा गया है, के केंद्र में यही

समीक्ष्य कृति	:	यह सच है
समीक्षक	:	प्रो० सुंदर लाल कथूरिया
कवि	:	श्री सिद्धेश्वर
प्रकाशक	:	सरदार पटेल साहित्य, प्रकाशन
प्रकाशन	:	'दृष्टि' यू-207, शकरपुर दिल्ली-110092
पृष्ठ	:	160
मूल्य	:	150 रुपए

समस्या है। वह महिला, जिसका पति आतंकवाद का शिकार हो जाता है, तमाम नारों, दावों और आश्वासनों के बावजूद कहीं से कोई सहायता नहीं पाती-न सरकारी, न गैर सरकारी। उसके जीवन की विभीषिकाएँ, विडंबनाएँ, त्रासदियाँ लोमहर्षक, अमानवीय, पैशाचिक और रोमांचकारी हैं। 'यह सच है' शीर्षक कविता में आतंकवाद के फलस्वरूप विधवा बनी महिला व उसकी बेटियों पर होने वाले अत्याचारों, उनकी लुटती अस्मत और उसके बच्चों पर लगते झूठे आरोपों का करुणा-विगलित चित्रण है, साथ ही सत्तासीन लोगों को चेतावनी भी दी गयी है; 'संभलो, ये सत्ताधारियों / कबतक उनकी आँखों में धूल / तुम झोंकते रहोगे? / और कबतक रास्ते की धूल / वे फाँकते रहेंगे? / कबतक चलेगा / तुम्हारा ये ताना बाना / इसलिए बदलो, तुम अपने को बदलो / नहीं तो बदल देगा तुम्हें ये जमाना।' (यह सच है, पृ० 53) निपट सपाट बयानी में लिखी होने पर भी यह एक मार्मिक कविता है, जो इस संकलन का शीर्षक बनी। कवि ने 'फकीर का सवाल' शीर्षक कविता में भी आतंकवाद पर प्रश्न चिह्न लगाया है।

आतंकवाद के ही समान-धर्मांधता और धार्मिक उन्माद, चाहे वह किसी भी संप्रदाय की ओर से हो, कवि को असह्य है। 'फिर बसंत आया' में बाबरी मस्जिद का ध्वंस संकेतित है। कवि ने इस पर चिंता व्यक्त की है। बसंत के अवसर पर खून-खराबे के लिए उत्तरदायी तत्त्वों पर कवि ने 'हैवानियत का भूत सवार' (पृ० 41) देखा है। इस कविता में कवि की ऐतिहासिक चेतना को समसामयिक संदर्भों के बीच गतिमान देखा जा सकता है। हैवानियत के प्रति कवि की चिंता वस्तुत: उसकी मानवीय संवेदना से जुड़ी है। कवि की यह मानवीय संवेदना धर्म के नाम पर होने वाली ठगियों और अत्याचारों के प्रति व्यक्त चेतना में भी लक्षित की जा सकती है। 'अँध विश्वास' शीर्षक कविता में कवि ने यह व्यक्त किया है कि अँध विश्वास धर्म के ठेकेदारों का भोली भाली जनता को ठगने का साधन है। 'ठीकेदार धर्म के' में कवि ने धर्म के नाम पर होने वाले अत्याचारों, धर्म के ठेकेदारों की मुखौटाधर्मिता और कथनी-करनी को बेनकाब किया है। कवि की मूल दृष्टि धर्म और धर्म के ठेकेदारों के अंतर्विरोध पर टिकी है। धर्म के वास्तविक और मूल स्वरूप को भुलाकर आज के धर्माचार्य, पण्डे-पुजारी अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए जिस प्रकार के अँध-विश्वासों में उलझा कर आस्थाशील आम जनता को दिग्भ्रमित कर रहे हैं और उनका दोहन कर रहे हैं, वह कवि की चिंता का विषय है, क्योंकि इससे समाज, राष्ट्र और धर्म रसातल की ओर जा रहे हैं।

सिद्धेश्वर जी मूलत: सामाजिक चेतना के कवि हैं, अत: 'यह सच है' की अधिकतर कविताएँ सामाजिक चिंताओं से

जुड़ी हैं। 'दहेज का दर्द', 'मेरी होली', 'तूफान तलाशता एक नया रास्ता', 'आर्थिक सुधार', 'खत्म होती जवाबदेही', 'बढ़ती आबादी', 'एक सवाल', 'विचित्र है विधाता का विधान', 'आज के लोग', 'महंगाई के तेवर', 'रिश्वत का रोग', 'दर्द से कोई वास्ता नहीं' आदि सामाजिक समस्याओं को उकेरती कविताएँ हैं। इन कविताओं में सामाजिक विसंगतियों, कुरीतियों, विडंम्बनाओं, विषमताओं आदि का चित्रण तो कवि ने किया ही है, उन पर दु:ख और चिंता भी व्यक्त की है तथा यथा-संभव उनके निराकरण के उपाय भी सुझाए हैं। 'दहेज का दर्द' में दहेज के अभिशाप चित्रित हैं तो 'मेरी होली' में होली की मस्ती के बीच कवि ने निर्धनों की विवशता पर चिंता व्यक्त करते हुए महंगाई पर व्यंग्य किया है। 'महंगाई के तेवर' में बढ़ती महंगाई और उपभोक्ताओं पर पड़ते उसके दुष्प्रभाव को कवि ने रेखांकित किया है 'तूफान तलाशता एक नया रास्ता' में कवि सिद्धेश्वर के तेवर काफ़ी तल्ख़ हो गये हैं। कवि को सबकी रोज़ी-रोटी, न्याय प्राप्ति और जीने के अधिकार की चिंता है और इस सामाजिक समरसता की प्राप्ति के लिए कवि सिद्धेश्वर को लगता है कि क्रांति ही नहीं, संभवत: खूनी क्रांति आवश्यक हो। कारण यह कि अन्यायकारी सत्ता बिना प्रहार के समझने वाली नहीं है। 'आर्थिक सुधार' और अमीर-ग़रीब के बीच बढ़ती खाई को पाटना आज की महती आवश्यकता है। 'विचित्र है विधाता का विधान' में कवि ने अमीरों-ग़रीबों के बीच बढ़ती खाई को 'कंट्रास्ट' के द्वारा उजागर किया है। यदि हम सामाजिक वैषभ्य को वस्तुत: समाप्त करना चाहते हैं, तो हमें उन सामाजिक बुराइयों से सख़्ती से निबटना होगा, जो हमारे समाज को घुन की तरह भीतर से खोखला कर रही हैं और वे सामाजिक समस्याएँ हैं सांप्रदायिकता, दहेज, महंगाई, रिश्वतखोरी, अमीरों-ग़रीबों में बढ़ती खाई, लिंग-भेद, अन्याय, पक्षपात, सामाजिक शोषण आदि। औद्योगिकीकरण, विदेशी कंपनियों के बढ़ते वर्चस्व, उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रचार-प्रसार, बाजारवाद आदि के फलस्वरूप उक्त समस्याओं के साथ भ्रष्टाचार एवं राजनैतिक दुराचार के साथ अपराधीकरण की घटनाओं ने सुरसा के समान अपना वदन (मुख) फैला लिया है, किंतु शुभ बात यह है कि कवि सिद्धेश्वर ने अपनी सहज-प्रसन्न शैली में इन पर जम कर प्रहार किया है।

'यह सच है' के अन्य वर्ण्य-विषय है प्रकृति, पर्यावरण, नगर-गाँव, नारी, हिंदी, राष्ट्र, संस्कृति, लोक-परंपराएँ, तीज-त्योहार आदि। बिहारी परिवेश, संस्कृति एवं भाषा की छौंकन भी इस संकलन की कविताओं में यत्र-तत्र देखी जा सकती है। कवि ने अपनी अनेक कविताओं में राजनेताओं के भ्रष्ट चरित्र, कथनी-करनी के अंतर, आम जनता की उपेक्षा, लोकतंत्र के हनन, स्वार्थपरता, अनैतिक आचरण, देश-सेवा की बजाय आत्म सेवा, बढ़ती आपराधिक प्रवृत्ति, अभिनेताओं जैसा आचरण आदि पर छींटाकशी की हैं ऐसी कविताओं में कुछ उल्लेख्य कविताएँ हैं 'आर्थिक सुधार', 'एक सवाल', 'जहरीला नाग', 'नेताजी', 'लोकतंत्र की रक्षा', 'संसदीय लोकतंत्र', 'दागी-दागी का खेल' आदि। आज देश की जो भी दुर्दशा है, उसका बहुत कुछ उत्तरदायित्व राजनेताओं पर है। बेरोजगारी, बीमारी, भुखमरी, भ्रष्टाचार, महंगाई, बिजली-पानी-दवा आदि का अभाव, बेतहाशा भीड़, खस्ताहाल सड़कों, अन्यान्य जन-समस्याओं, बढ़ते अपराधों, घोटालों आदि के पीछे उन्हीं का तो हाथ होता है। उनकी गलत और भ्रष्ट नीतियाँ ही तो इसके लिए उत्तरदायी होती हैं। उन्हीं की शह पर पुलिस या अधिकारी आम जनता पर अत्याचार करते हैं और उन्हें लूटते-खसोटते हैं तथा माफिया आपराधिक गतिविधियों को अंज़ाम देता है। यदि राजनेता अपना काम ईमानदारी और जन-सेवा की भावना से करें, तो बहुत-सी समस्याओं का स्वत: ही समाधान हो जाए तथा सामाजिक न्याय की स्थापना भी सहज-सरल हो जाए; किंतु राजनेताओं की वोट बैंक की राजनीति, भ्रष्ट आचरण और भाई-भतीजावाद की राजनीति के चलते यह संभव नहीं हो पा रहा है। देश का हर नेता भ्रष्ट और दुराचारी हो, यह आवश्यक नहीं है, पर अधिकांश आकण्ठ पंक में लिप्त हैं, इसमें भी कोई संदेह नहीं है।

श्री सिद्धेश्वर की अनेक कविताओं का वर्ण्य-विषय नारी है। आज हम नारी की जागरूकता और महिला अधिकारों की कितनी ही दुहाई क्यों न दें, वह पहले के ही समान प्रताड़ित, दलित, बेबस और दीन-दु:खी हैं। उसकी स्थिति में विशेष अंतर नहीं आया है। स्त्रियों पर होने वाले अत्याचारों, बलात्कार की घटनाओं, दहेज को लेकर होने वाले मन-मुटावों-तनावों-हत्याओं आदि से दैनिक समाचार-पत्र रंगे पड़े होते हैं। इन घटनाओं से कवि सिद्धेश्वर पीड़ित, उद्वेलित और करुणा-विगलित हैं। 'औरत', 'आज की नारी', 'खत्म होती जवाबदेही', 'दहेज का दर्द' आदि में कवि ने औरत के दु:ख-दर्द, बेबसी, टीस, नारकीय जीवन, व्यथा एवं दैनंदिन जीवन की समस्याओं को वाणी दी है। 'आज के लोग' अपनी आँखों के सामने होते अन्याय को देखकर भी मौन रह जाते हैं-सभी शिखण्डी बन गये हैं। अपनी एक कविता में कवि ने 'महाभारत' का मिथकीय उपयोग किया है। आज के व्यक्तियों की मुखौटाधर्मिता एवं कायरता पर कवि सिद्धेश्वर ने 'स्वाभाविक है' शीर्षक कविता में व्यंग्य किया है।

नगर से गाँव के 'कंट्रास्ट' को व्यक्त करते हुए कवि ने ग्रामीण युवकों के गाँवों से नगरों की ओर पलायन पर चिंता व्यक्त की है। प्रकृति और भारतीय संस्कृतिक का उद्गम स्रोत गाँव आज के युवकों का आकर्षण केंद्र नहीं रह गया है वहाँ भी सांस्कृतिक मूल्य टूट रहे हैं और नगरों-महानगरों के समाज 'सांस्कृतिक प्रदूषण' वहाँ भी मुँह बाये खड़ा है। पर्यावरण असंतुलन एवं मानव-मूल्यों के विघटन की समस्या आज केवल महानगरों-नगरों की ही नहीं है, कमोबेश गाँवों की भी है। 'बदरंग हो रहा फूलों का रंग', 'शिकायत फितरत की', 'आरोप गलत है', 'शहरी जिंदगी', 'सांस्कृतिक प्रदूषण' आदि में कवि ने प्रदूषण की समस्या को उकेरते हुए उस पर गहरी चिंता व्यक्त की है। यह प्रदूषण प्राकृतिक भी है और सांस्कृतिक भी। आज स्थिति यह है कि व्यक्ति ठीक-से 'बसंत का एहसास' भी नहीं कर पाता। कवि

वसंत को 'स्वागत' को समुत्सुक है, उसे प्राकृतिक एवं युवतियों की आंगिक चेष्टाओं का एहसास होता भी है, किंतु मनुष्य के भीतर का वसंत, ऋतुओं का अर्थ और मानवता लुप्त हो रही है और कवि के हृदय में इसी की टीस है।

कवि की राष्ट्रीय चेतना 'फिदा' कविता में बख़ूबी व्यक्त हुई है। पति-पत्नी के पारस्परिक संवादों एवं नोक-झोंक के बीच कविता की अंतिम परिणति इंसानियत, ईमान, आत्मविश्वास और राष्ट्र पर फिदा होने में होती है। इस संकलन की एक और श्रेष्ठ कविता है 'जीवन का सच'। हर व्यक्ति के लिए जीवन का सच अलग-अलग होता है, किंतु वृद्धावस्था में व्यक्ति के सामने 'जीवन-मरण का प्रश्न/आ खड़ा होता है' और 'वक्त ही आदमी व समाज को सही दिशा देता है'। अपनी कुछ कविताओं में कवि ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रश्न को उठाया है, जो निश्चय ही आज के समय का अहम सवाल है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि 'यह सच है' की कविताओं में श्री सिद्धेश्वर का जीवन और जगत् के प्रति चिंतन, जीवन-संघर्ष और जीवंतता प्रतिबिंबित है। कवि की मूल्य-दृष्टि, राष्ट्रीय-सांस्कृतिक अनुराग, शोषितों के प्रति सहानुभूति, पर्यावरण-प्रेम एवं समतामूलक जीवन-दर्शन भी इन कविताओं में लक्षित किया जा सकता है। हर कविता अपनी अंतिम परिणति में कोई-न-कोई संदेश देती है। निष्कर्षत: 'यह सच है' में यथार्थ और आदर्श का मणि-कांचन योग है।

संपर्क: 3बी-अ/79, जनकपुरी, नई दिल्ली 110058

पूर्व प्रोफेसर-अध्यक्ष, हिंदी-विभाग, भावनगर वि॰ वि॰ भावनगर (गुजरात)

विचार दृष्टि

(राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक पत्रिका)

राष्ट्रीय कार्यालय : 'दृष्टि', यू-207, विकास मार्ग, शकरपुर, दिल्ली-110092

पत्रांक : विदृ/579 **दिल्ली, दिनांक : 21.02.2008**

सेवा में,

श्री / श्रीमती / मेसर्स ....

....

विषय: विज्ञापन-दर-तालिकानुसार 'विचार दृष्टि' में अपने प्रतिष्ठान का एक विज्ञापन देकर इसके नियमित प्रकाशन के जरिए स्वस्थ्यसमाज के निर्माण में सहयोग करने के संबंध में।

महाशय,

यह जानकर प्रसन्नता होगी कि राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक संस्था-राष्ट्रीय विचार मंच के मुख-पत्र के रूप में 'विचार दृष्टि' पिछले दस वर्षों से देशवासियों में राष्ट्रीय चेतना जागृत करने हेतु लगातार प्रयासरत हैं विचारों पर केंद्रीत आधुनिक दृष्टि और बिना कोई चटपटी मसालेदार व अश्लील सामग्री प्रस्तुत किए संभवत: यह पहली पत्रिका है, जो हिंदी पत्रकारिता में आने वाले परिवर्तनों का कुछ आभास देती है और पाठकों को स्वस्थ्य समाज और सबल राष्ट्र के निर्माण हेतु स्वस्थ मानसिक खुराक प्रदान करती है। बड़े स्तर पर समाज या संचार माध्यम इसे तवज्जो दें या नहीं, मगर समाज के प्रबुद्ध एवं सद्‌चित्तजन तथा रचनाकार एवं साहित्य से जुड़े सुधी लोगों के मन को इसमें लौ लग चुकी है जिसके बल पर मुझे लगता है कि बारिश की मामूली फुहार से यदि एक कोपल भी फूट जाती है, तो लोगों को अहसास होगा कि जमीं पर किसी ने मुट्ठी भर तारे बटोर लाए हैं।

बिना कोई सरकारी आर्थिक सहयोग के यह पत्रिका अपने उद्देश्यपूर्ण संघर्ष के लिए अग्रसर है यह सोचकर कि
कहीं न कहीं से किसी न किसी को, शुरुआत तो करनी होगी,
भारत की तस्वीर बदलनी होगी, अपनी लड़ाई खुद लड़नी होगी।

तो आइए, आप भी इस लड़ाई का एक हिस्सा बन निम्नांकित विज्ञापन-दर-तालिकानुसार अपने प्रतिष्ठापन का एक विज्ञापन देकर इसके नियमित एवं स्तरीय प्रकाशन के जरिए स्वस्थ्य समाज के निर्माण में सहयोग प्रदान करें, यह आप और आपके प्रतिष्ठान की गरिमा के अनुरूप होगा और राष्ट्रीय दायित्व के निर्वहन में आपका यह सहयोग एक महत्त्वपूर्ण योगदान माना जाएगा।

विज्ञापन राशि चेक/बैंक ड्रॉफ्ट 'विचार दृष्टि' के नाम से अथवा नकद अधिकृत अधिकारी को देय होगी। पत्रिका की पाँच हजार प्रतियाँ **10½" x 7½"** (मुद्रित स्थान **9½" x 7"**) आकार की प्रकाशित होती हैं।

विज्ञापन-दर-तालिका

आवरण पृष्ठ			भीतरी पृष्ठ
1. मुख्य पृष्ठ सुरक्षित	सुरक्षित	6. रंगीन पूर्णपृष्ठ	रु. 8,000/-
2. अंतिम रंगीन पूर्णपृष्ठ	रु. 15,000/-	7. रंगीन आधा पृष्ठ	रु. 5,000/-
3. अंतिम रंगीन आधा पृष्ठ	रु. 10,000/-	8. सादा पूर्णपृष्ठ	रु. 2,500/-
4. पृष्ठ सं. एक और दो रंगीन पूर्णपृष्ठ	रु. 10,000/-	9. सादा आधा पृष्ठ	रु. 1,500/-
5. पृष्ठ सं. एक और दो रंगीन आधा पृष्ठ	रु. 6,000/-	10. सादा चौथाई पृष्ठ	रु. 500/-

नोट: उपर्युक्त दर एक अंक के विज्ञापन का है। कुल चार अंकों में विज्ञापन देने से 20 प्रतिशत की रियायत दी जाती है।

विनीत

संपादक

युग-निर्माण और मूल्यबोध की कविताएँ

समीक्षक ○ डॉ॰ मृत्युंजय उपाध्याय

समीक्ष्य कृति युगीन संदर्भों की गहन पड़ताल ही नहीं करती, देश, समाज, राष्ट्र, संस्कृति, सृजन की समस्याओं पर भी विचार करती है। देश निर्माण, समाज की मुख्यधारा के प्रति सापेक्षया और संपृक्ति उसकी मूल चेतना है। लेखक के आत्म साक्ष्य से इसका पता चलता है।

''इन कविताओं में युगबोध और युगीन संदर्भ तो अपनी तल्ख वास्तविकता के साथ प्रतिबिंबित हुए ही हैं, सामाजिक संबंधों का खोखलापन, मित्रों की स्वार्थपरता, कृतघ्नता मठाधीशों की अहमन्यता, शासन सत्ता के अत्याचार, चापलूसों के उत्कर्ष मानव-मूल्यों के विघटन, अन्याय-अत्याचार महँगाई आदि की टीस भी है।''

इसके साथ-साथ मानवता का उत्कर्ष हो, मनुष्य की मनुष्यता का जागरण हो। आस्था और आस्तिकता का भाव जो और सर्वत्र प्रकाश की तलाश हो। दैन्य जड़ता का नाश हो और कविता निर्माण के सत्य का उद्घाटन करती रहे। यह निर्माण अनेकार्थक है, विकास है तो सृजन भी है और सर्वोपरि है मानवता विजयती हो जाए, 'वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मतें (मैथिलीशरण गुप्त)

इतना जरूर है
कि मैं सच्चे मन से
सेवा करता हूँ उन प्रणियों की
जिन्हें उसकी जरूरत है
और चाहता हूँ
मेरा यह शरीर
किसी के काम आ सके
किसी का दु:ख मिटा सके।

-पूजा, पृ० 640

'अबू बेन अधम' (अँग्रेजी कविता) में देवदूत भगवान की पूजा करने वालों के नाम लिखता है। मनुष्य-सेवा करने वाला हिम्मत कर अपना नाम उसकी लिखाता है। अगले दिन देवदूत की सूची में वही-प्रथम आता है। नर की सेवा ही नारायण की सेवा है।

अगली कविता 'आत्यंतिक सत्य' में मनुष्य के दंभ अहंकार की विवेचना है, भले ही विद्वान हो।

1. निर्माण का सत्य कवि डॉ॰ सुंदरलाल कथूरिया, प्रथम संस्करण 2007 अवधप्रकाशन, 3897ध13, शांति मौहल्ला, पुराना सीलमपुर रोड गाँधीनगर, दिल्ली-110031, डिमाई पृ० 96, मूल्य 120.00रु

विद्याददाति विनयम्

अब मुझे उपहास्यास्पद लगती है। पृ० 42

कारण वह गधे की तरह सारा खेत चर जाती है और अपने ही कथन को मानती है जीवन सत्य। इसीलिए कवि किसी गोष्ठी में आमंत्रित हैं फाँतो में घसीटा जाना नहीं चाहता।

तथाकथित प्रगतिवादी कवियों पर कवि की टिप्पणी मारक है। कहाँ गीत गाते हैं दलित, पिछड़ों, नि:स्व हाशिए के आदमी के पर तम। बिना विलायती शराब के / बदलते हो करवटें रात रात भर''। भावुकता के क्षण बिना शराब पिए उन्हें नींद नहीं आती है। आप प्रगतिवादी सरकार में आकर सत्ता सुंदरी के लिए कैसी बाजीगरी कर रहे हैं। कोई शर्त रख दे। कि सरकार चलाने के लिए उसे मानना अनिवार्य होगा परमाणु समझौता हो या अन्य प्रस्ताव बिना विरोध किए उसकी महत्ता पर रंग कैसे चढ़ेगा।

'कालकूट' कविता एथेंस के सत्यार्थी के नायक देव कुलीश की याद दिला देती है, जो सत्य को नंगी आँखों से देखने के कारण अद्धा हो गया था। सत्य, कठोर सत्य होता है। कालकूट की तरह, जिसका पान शिव ही कर सकते हैं, ''किंतु हलाहल भवसागर का शिवशंकर ही पीते हैं।'' उसका सद्य: प्रभाव ध्यातव्य है।

तुम्हारी भौहें तथ गई
मुट्ठियाँ मिंच गई
आँखें लाल हो गईं
तर्क बाण नि: शेष हो गए।-पृ०26

'अवसरवादी' (पृ० 34.35) किसी हद तक नीचता पर उतर सकते हैं। चूस सकते हैं किसी का खूथ अपने स्वार्थ के खातिरा। अवांछित व्यक्ति को दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंक सकते हैं। परंतु उन्हें यह भी याद रखना होगा कि वक्त बदलता भी है और '' सूई भी काम आती है। और तब भी तलवार धरी रह जाती है।'(पृष्ठ 34)

'व्यक्ति और व्यक्ति' में यह व्यंग्यार्थ है कि पूजा होती है चापलूसों की समझौतापरस्तों की। पंडित और विद्वान ऐसा गुण अपना नहीं सकते। अत: उनका उपेक्षित रहना स्वाभाविक है यही युगधर्म भी है। वे विद्रोह करते हैं- ''देखकर उनको/कर बार/ जोगी है विद्रोहाग्नि मेरे मन में।'' (पृ० 3) पर यह व्यर्थ नहीं हैं। कामू लिखता है कि शोषित, लांछित प्रताड़ित हो कर भी विद्रोह का स्वर न फूटे तो समझो कि शोषण में तुम्हारी भी भागीदारी है। आह्वान: आदि कवि का' (पृ० 48.49) कवियों पर गहराते मूल्यहृास, मूल्य संकट को रेखांकित करती है। कहाँ कवि मिथुन रत नरकौंच के वंध पर करुणा का सागर बहाता है, वहाँ इस कविता कामधेनु से लोग हृष्ट-पुष्ट हो रहे हैं। कविता को उद्योग बताया है और लाभ कमा रहे हैं परंतु कितनी बड़ी विंडबना है कि

प्रश्न नहीं है आज कौंच वध का
सिसक रही है स्वयं मातवना
दानव के दंष्ट्रों में। - पृष्ठ 48

हर युग में प्रश्न वही रहता है। क्रौंचवध हो या होटलों क्लबों में बलात्कार शीलहरण मानवता सदैव लजाती है, पराजित होती है। रावण मरा कहाँ है। बार-बार रूप बदल कर आता है और जग को रूलाता है। इसीलिए कविता की प्रासंगिकता अनिवार्यता सदैव रहेगी। कवि का धर्म है कि वह युग-सत्य का सामना करे और उसे अभिव्यक्ति का

आकाश दे।

लगता है दाशरथि
बध कर पाए नहीं रावण का
ठीक से
जी उठता है वह बार-बार
नाना रूप धर के। - पृ० 40

आज ऐसे रामकाव्य की आवश्यकता है, जिससे दानवता का नाश हो और मानवता अमर हो।

युग, समकालीन जीवन-संदर्भ, शाश्वत-प्रश्न साहित्य, जीवन मानवता पर कवि निरंतर चिंतन करता रहता है और अनुभूत सत्य को काव्य-स्वर देता है। वह बर्टील्ट-बेरट की तरह है, जो डटकर उसका मुकाबला करता है। ब्रेक्ट ने कवियों के उत्तरदायित्त्व की चर्चा करते हुए लिखा है कि वे अँधकार युग की चर्चा कर चुप नहीं होंगे, बल्कि पूछेंगे कि कवि खामोश क्यों है? उसने इसका समाधान क्या निकाला? यहाँ डॉ. कथूरिया का कवि निरंतर जाग रहा हैं; चौकन्ना है समाज के शोषण को और छद्मधारियों के प्रति वह सभी मसलों पर ईमानदारी से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। वह विश्वस्त है ''एक दिन ऐसा जरूर आता है। जब आतंक का तिलिस्म टूट जाता है। और तब/ अनुशासन पर्व (!)/ काली अँधेरी रात के नाम से/जाना जाता है। (शासन और अनुशासन पृ० 63)

सभी कविताएँ सार्थक हैं। अहसास और आश्वस्ति जगाने वाले संभावना के द्वार खटखटाती हैं और मानवता की विजय के गीत गाती हैं। कवि आस्वस्त है कि मनुष्यता अभी शेष है। भाषा सरल, बोधगम्य तो है ही उपमा विंब, रूपक के प्रयोग विरमाते हैं। कवि के लिए साधुवाद के शब्द नहीं मिलते।

संपर्क: वृंदावन, मनोरम नगर, एल० सी० रोड, धनबाद-826001, झारखण्ड दूरभाष: 9334088307 मो०

समय की वास्तविकता दर्शाती कृति

समीक्षक ○ डॉ सुषमा शर्मा

प्रस्तुत कृति दो भागों में विभाजित है-दोहा रचनावली और राग विराग। इन भागों के आधार पर रचनाकार ने जीवन को जीवन के मूल्यों को, समय को, समय की वास्तविकता को दर्शाया है। इस प्रकार दार्शनिकत्व को उजागर करते हुए इस जीवन को नीकस नहीं स्वीकारा है, अपितु जीवन को संगीतमय बनाते हुए जीने की कला में आनंद को भी विखेरा है-रचनाकार की मान्यता है कि यद्यपि संसार में बंधन है, मनुष्य इन बंधनों को संगीतमय बनाना हो, तो ऐसे भी राग पनपते हैं जिन्हें गुनगुनाने की चाहत भी होती है, क्योंकि जहाँ चाह है वहाँ राह है। यह भी स्वाभाविक है कि एक राग को भी अपनाना उसे गवारा नहीं इसलिए दूसरे नए राग की खोज करता है। इस प्रकार इस प्रक्रिया में नए राग की निर्मिती होती है, जहाँ एक निष्कर्ष समाधान पर ये नए राग परिवर्तित होते हैं, इसी परिवर्तन में विकास है। रचनाकार ने द्रोहा की शैली को अपनाते हुए गागर में सागर की उक्ति को चरितार्थ किया है। इन दोहें के माध्यम से इस संसार की प्रत्येक वस्तु को बहुआयामी दृष्टि दी है। यदि हम इस शैली का अन्वेषणात्मक दृष्टि से देखें, तो पाएँगे कि ये दोहे आधुनिक काव्य परंपरा का अनुसरण है- इसमें एक तरह कवि शिरोमणि बिहारी के दोहों और रहीम के दोहों की भाव प्रोणत्ता के दर्शन होते हैं, तो दूसरी ओर निर्गुण संत कबीर के दर्शन का रहस्य और गूढ़ तात्विक ज्ञान का साक्षात्कार होता है। इस प्रकार यह कहना होगा कि परंपरा टूटती नहीं है अनवरत, टूटती है, अक्षुण्य बनाए रखने का प्रयास रहता है।

समीक्ष्य कृति: दोहा रचनावली
रचनाकार-प्रो० (डॉ०) वीरबाला भावसार
प्रकाशक-साहित्यागार धामानी मार्केट, चौड़ा रास्ता, जयपुर,
मूल्य-100 रुपए पृष्ठ-91

रचनाकार ने दोहा रचनावली के अंतर्गत शब्दों और भावों का बेजोड़ नमूना दिखाया है जहाँ सार्थकता है, वास्तविकता है और शाश्वत सत्य का आभास है। रचनाकार यद्यपि भावों की गहराई में उतरकर कई प्रश्न करती हैं, कई संकल्प करती हैं, कहीं एक निष्कर्ष पर उतरकर समाधान भी कर लेती है और हमें भी समाधान कर संतुष्टि प्रदान करती है। शब्दों की सार्थकता और भावों की अभिव्यक्ति की बानगीं-

''नीर सी दिखती रेत में
जल है समझकर जाती मैं
मरीचिका लहरों में फँसे
डूब तृष्णा में जाती हूँ'' पृष्ठ 44

कृति के फोल्डर में डॉ. कृष्णवीर सिंहजी के विचार बोधगम्य हैं इनका कथन है कि इस दमघोटू वातावरण में राहत की सांस तक मनुष्य को नहीं पाता- अत: सूने जीवन में नए रागों को फूँकने का प्रयास रचनाकार ने किया है, नई दृष्टि के साथ प्रत्येक शब्द शांति, सुकून व वास्तविकता से परिचय करवाते हैं।

'दोहावली' में भी एक न एक कटाक्ष है, कटु सत्य है 'घाव करे गंभीर' की उक्ति भी है. ''वानर से मानव बना, अब विकास की चाल। मानव विकसित हो गया, दानव बना विशाल'' 'समय' के सच को भी दर्शाते हुए कहती है-

आता जाता समय है, संध्या लेकर आया
यौवन भी तो समय है, संध्या लेकर जाय।।

जीवन की परिभाषा की गूढ़ता को दर्शाते हुए कहती हैं

देख रही हूँ वह सभी, दिखा रहा संसार।
समझ सका न पर कभी, मुझको जीवन सार ॥

तमाम संदर्भ, विषय वस्तु का विवेचनात्मक चित्रण है जहाँ सैद्धांतिक पक्ष भी है, तो व्यावहारिक भी! एक संदेश भी इनमें छिपा है वह है आशावादी दृष्टिकोण-

समय मनुज को दे रहा, एक नया विश्वास।
इसलिए तो कर रहा, नित्य नया इतिहास

आशावादी दृष्टि में संकल्प भी है-

''पल-पल जीवन घट रहा पूरे कर ले काम!''

संपर्क: ''प्रेममंजरी'' डी-20, चोमू हाउस, जगन पथ, सी-स्कीम जयपुर (राजस्थान) फोन-2372523

नयी साहित्यिक पत्रिका/वाक् : हिंदी का 'हिंदीपन' नष्ट करने की साज़िश

○ प्रो० कमल किशोर गोयनका

डॉ. सुधीश पचौरी पुराने मार्क्सवादी हैं, लेकिन इधर वे कहते हैं कि उन्होंने मार्क्सवादी पार्टी छोड़ दी है, यद्यपि वे काम वहीं करते हैं जो हिंदी में एक मार्क्सवादी करता रहा है। वे अभी जब विभागाध्यक्ष बने तो अपने पुराने साथी होने के कारण मैंने उन्हें बधाई दी और वे भी बड़ी शालीनता से मिले और बोले कि वे विभाग का संचालन राजनीतिक प्रतिबद्धता से न करके तटस्थता तथा योग्यता को ध्यान में रखकर करेंगे। इसका निर्णय तो भविष्य करेगा कि जिस राजनीति और राजनेताओं एवं एक्सपर्टों ने उन्हें प्रोफेसर बनाया, वे उन्हें कितनी चुनौती दे पाएँगे, परंतु इधर उनके संपादकत्व में प्रकाशित साहित्य की नयी पत्रिका 'वाक्' के आरंभिक दो अंकों से तो यही निष्कर्ष निकलता है कि वे एक हिंदुस्तानी कम्युनिष्ट की तरह ही हिंदू समाज के ऐतिहासिक ग्रंथों, हिंदू संस्कृति तथा हिंदी का विरोध एवं उसे विकृत करने के लिए ही पत्रिका के संपादक बने हैं। 'वाक्' के पहले अंक में यह घोषणा है कि यह 'नये विमर्शों की वैचारिकी' की पत्रिका है, लेकिन इस नये विमर्श के लिए उनके पास कोई नया शब्द नहीं है। यह उनकी विवशता एवं असमर्थता है कि उन्हें अपने नये चिंतन तथा विमर्श के लिए संस्कृत के पुराने शब्द 'वाक्' को लेना पड़ा है। पुराने शब्द से नया विमर्श होगा, यह तो हास्यास्पद है और यह और भी हास्यास्पद है कि यह नया विमर्श हिंदी भाषा को विकृत्त करके 'हिंग्लिश' से प्रस्तुत किया जाना है। डॉ० पचौरी का पहला संपादकीय ऐसी ही हिंग्लिश से भरा पड़ा है जो भाषा को विकृत्त करता है विकसित नहीं। डॉ० पचौरी ब्रज प्रदेश (हाथरस) में जन्मे हैं। अत: हिंग्लिश उनकी मातृभाषा नहीं है, उनकी शिक्षा भी हिंग्लिश में नहीं हुई तथा जो पाठ्य-पुस्तकें पढ़ीं वे भी इस भाषा में नहीं थीं अत: जो भाषा संपादक के संस्कार, परिवेश तथा लोक जीवन में नहीं थी, उसे नये विमर्श के संप्रेषण का हथियार बनाने का क्या औचित्य है? 'वाक्' के प्रवेशांक में जिन लेखकों की रचनाएँ छपी हैं, उनकी भाषा भी हिंग्लिश नहीं है। इस प्रकार हिंदी को हिंग्लिश का बाना पहनाना हिंदी विरोधी है और उसे उसकी बुनियाद और परंपरा से काटना है।

डॉ० पचौरी ने अपने संपादकीय में दावा किया है कि वे नयी सदी के पाठक को जानते हैं और वह ग्लोबल माइंड का है तथा वह शुद्ध 'साहित्यवाद' तक सीमित न होकर समाज को उसके समग्र रूप में समझना चाहता है। नयी सदी को शुरु हुए केवल सात वर्ष हुए हैं और डॉ. पचौरी की प्रतिभा देखिए कि उन्होंने इतनी अल्पावधि में अपने देश के हिंदी पाठक के माइंड को पढ़ लिया है। असल में डॉ. सुधीश पचौरी कई अखबारों में नियमित टिप्पणियाँ लिखते हैं और स्वाभाविक है कि उन्हें नये-नये विषयों की तलाश रहती है, इस कारण उन्हें ग्लोबल होना पड़ता है और वे इस प्रकार स्वयं के ग्लोबल होने को पाठक पर आरोपित कर देते हैं। इस पर भी वे कितने ग्लोबल हैं, इसमें मुझे संदेह है। अमेरिका को गाली देना तथा रूस-चीन तथा मार्क्सवाद का समर्थन करना ही ग्लोबल होना नहीं है। मुझे संदेह है कि उन्होंने कभी फीजी, मॉरिशस, सूरीनाम, जापान, कोरिया, फिलिपाइंस, बर्मा तथा योरप एवं दक्षिणी अमेरिका के छोटे-छोटे देशों के बारे में कभी सोचा हो या लिखा हो तथा उन पर पड़ने वाले ग्लोबल दवाब को जानने की चेष्टा की हो। ग्लोबल माइंड है तो ग्लोबल को जानना जरूरी है और ग्लोबल में मनुष्य ही नहीं संपूर्ण जीव-सृष्टि आती है तथा ब्रह्मांड की वे शक्तियाँ भी आती हैं जो इस पृथ्वी की जीव-सृष्टि को प्रभावित करती हैं। ऐसा ग्लोबल माइंड रखने का दावा क्या डॉ. पचौरी कर पाएँगे? हाँ, यह सत्य है कि नये-नये वैज्ञानिक आविष्कारों से विश्व एक गाँव में बदल रहा है, लेकिन भारत के तो असंख्य गाँव आज भी शहरों तक से जुड़े नहीं हैं और ऐसे गाँवों के नयी सदी के बच्चे कार को बस का बच्चा ही कहते हैं। देश के करोड़ों लोग आज भी अपनी भूख से लड़ रहे हैं, अत: ऐसे लोगों के पास ग्लोबल माइंड होने का दावा करना उनसे साथ भारी मजाक है और कम्युनिष्ट विचार के डॉ. पचौरी का इन करोड़ों भारतीयों को परिदृश्य से हटाकर थोड़े से भद्र समाज को केंद्र में रखकर उसके ग्लोबल माइंड के होने की चर्चा करना तो इससे भी बड़ा मजाक है। वैसे भी डॉ० पचौरी ग्लोबल माइंड के जिस पाठक को खोजने का दावा करते हैं, उनकी कुल संख्या एक सौ दस करोड़वाले इस देश में कुछ हजार से अधिक नहीं होगी। ग्लोबल होने की प्रक्रिया भी नयी नहीं हैं। जिन लोगों ने अमेरिका, भारत आदि देशों की खोज की, वह अन्य भूमंडलों क पहुँचने का ही प्रयास था। ब्रिटेन ने अपने साम्राज्य का जो विस्तार किया और औद्योगिक क्रांति के उत्पादनों से जो विश्व के बाजारों को पाट दिया, क्या वह भूमंडलीकरण का प्रयास नहीं था? आज डॉ. पचौरी नये ग्लोबल नहीं हुए हैं, वे प्रेमचंद की वे टिप्पणियाँ पढ़ें जिसमें वे स्टालिन, मुसौलिनी, चर्चिल आदि के साथ इंग्लैण्ड, अमेरिका, रूस, जर्मनी, जापान आदि की बार-बार चर्चा करते हैं और भारतीय दृष्टि से हिताहित की विवेचना करते हैं। आज हम कितने ही ग्लोबल माइंड के हो जाएँ, उसकी निर्णायक शक्ति राष्ट्रीयता ही होगी। डॉ० पचौरी का यह दावा भी हास्यास्पद है कि आज का हिंदी पाठक, जिसे उन्होंने अदृश्य लोक से खोज निकाला है, साहित्य और समाज को समग्रता में समझने के लिए बेताव है। ये नए पाठक कौन हैं- उनके छात्र, उनके साथी

> समीक्ष्य पत्रिका : वाक्
> समीक्षक : डॉ० कमल किशोर गोयनका
> संपादक : डॉ० सुधीश पचौरी,
> प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष,
> दिल्ली विश्वविद्यालय,
> दिल्ली

अध्यापक एवं लेखक अथवा हिंदी समाचार-पत्र पढ़ने वाले साधारण नागरिक? वैसे तो डॉ॰ पचौरी भी समग्रता में कहाँ देखते हैं? उनकी दृष्टि और समझ को मार्क्सवाद ने बाँध रखा है। वे ऐसे अकेले नहीं हैं, राजेन्द्र यादव जैसे अनेक लेखक गांधारी की तरह आँखों पर पट्टी बाँधे हैं और दावा करते हैं कि वे समग्रता में देखते हैं। ये सभी लोग उन सब चीज़ों के विरोधी हैं, जिन्होंने मनुष्य को सुसंस्कृत बनाया है, जैसे धर्म, संस्कृति, राष्ट्र-प्रेम, व्यक्ति का उन्नयन, व्यक्ति-स्वातंत्र्य, मूल्यवत्ता एवं नैतिकता आदि। मार्क्सवाद इन सबका विरोधी है, अत: समग्रता का दावा धोखा एवं शब्दाडंबर मात्र है।

डॉ. पचौरी संभवत: अपने इस छल-कपट को समझते हैं, इसीलिए वे आत्मरक्षा में कहते हैं कि 'वाक्' पात्रिका बंद टेक्स्टों (पाठों), विचारों, विमर्शों को खोलने का उद्यम करता रहेगा। मुझे लगता है, उन्हें सबसे पहले यह नियम स्वयं पर तथा मार्क्सवाद पर लागू करना होगा। मार्क्सवाद पूरी दुनिया को अपने कमरे में बंद करना चाहता है और वह उसके लिए अपने विरोधियों को रूस और चीन में लाखों लोगों का संहार कर चुका है। हिंदुस्तानी कम्युनिस्टों ने नंदीग्राम में सैकड़ों किसानों की हत्या करके यह सिद्ध कर दिया कि वे स्टालिन और माओ जैसे ही तानाशाह हैं। मैं जानता हूँ, वे ऐसा नहीं कर पाएँगे, क्योंकि जिन लोगों ने उन्हें प्रोफेसर बनवाया है, वे मार्क्सवाद के बंद दरवाजे को खोलने नहीं देंगे। 'वाक्' के प्रवेशांक में तुलसी के टेक्स्ट को खोला गया है और दावा है यह पहली बार हो रहा है। यह एकदम असत्य है। तुलसी के पाठ की विभिन्न दृष्टियों से बराबर चर्चा होती रही है और पुस्तकें-लेखादि लिखे जाते रहे हैं। संपादक को यदि इसका ज्ञान नहीं है तो आश्चर्य है। असल में संपादक की तकलीफ़ यह है कि तुलसी को क्यों हिंदुत्ववादी पाठ बनाया गया, क्यों आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तुलसी को 'हिंदू कैनन' में रूपायित किया और क्यों तुलसी के राम को उग्र राष्ट्रवादी एजेंडे का अंग बनाया गया। हिंदुस्तानी कम्युनिष्ट हिंदू समाज की धार्मिक कथाओं तथा प्रतीकों को नष्ट-भ्रष्ट करते रहे हैं, क्योंकि उसके द्वारा ही हिंदुओं के सांस्कृतिक एवं धार्मिक एकत्त्व को समाप्त किया जा सकता है। वे धर्म को अफीम मानते हैं, परंतु वे इस्लाम और ईसाई धर्म के साथ हिंदू धर्म जैसा व्यवहार नहीं करते। डॉ. पचौरी 'हिंदू कैनन' की बात तो करते हैं, लेकिन 'मुस्लिम कैनन' तथा 'इसाई कैनन' की चर्चा से डरते हैं। उनके सामने सलमान रूशदी, तस्लीमा आदि के जो उदाहरण सामने हैं। वे इतना इतिहास तो जानते ही हैं कि हिंदू धर्म के पास कोई धार्मिक कैनन कभी नहीं रही, जैसी इस्लाम और ईसाई धर्म के अनुयायियों के पास रही। हमारे यहाँ धर्म-युद्ध तो हुए, परंतु धर्म के विस्तार तथा धर्मांतरण के लिए दूसरे देशों पर कभी आक्रमण नहीं किए गए। अत: 'रामचरित मानस' के हिंदू कैनन को देखने से पहले उन्हें इस्लाम और ईसाई धर्म के ग्रंथों के धार्मिक कैननों को देखने का साहस जुटाना चाहिए। जो धर्म एवं विचार-दर्शन एक पैगंबर, एक ग्रंथ के साथ दुनिया को अपना जैसा बनाना चाहते हैं, उन सबके पास अपना-अपना कैनन है। वह चाहे इस्लाम हो, ईसाई धर्म हो या मार्क्सवाद हो, सब एक जैसे हैं, केवल हिंदू धर्म ही सबको अपने-अपने विश्वासों के साथ जीने की स्वतंत्रता देता है। डॉ. पचौरी इस सत्य को जानते हैं कि हिंदू समाज कैनन वाला समाज नहीं है, वह तो सर्वहिताय एवं सर्वसुखाय वाला समाज है और इस समाज की संरचना में तुलसी का योगदान कम नहीं है, परंतु इस अंक के लेखक राजेन्द्र यादव मानते हैं कि 'रामचरितमानस' और गंगा ने इस देश को बरबाद किया है। यह डॉ. पचौरी का नया विमर्श है कि तुलसी उग्र राष्ट्रवाद एवं सांप्रदायिकता के कवि हैं और वे हिंदू तोपखाना लेकर चलते हैं। डॉ. पचौरी तथा राजेन्द्र यादव जनवादी हैं, परंतु देश की बहुसंख्यक हिंदू जनता और उसकी भगवान राम एवं तुलसी के प्रति आस्था दिखायी नहीं देती। कम्युनिस्टों के समर्थन से चलने वाली काँग्रेस और पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री को भी हिंदुओं के भगवान राम काल्पनिक लगते हैं। यह धर्मनिरपेक्षता नहीं है, यह तो हिंदू धर्म और हिंदू समाज को लांछित, अपमानित और नष्ट करने की साज़िश है। यह मार्क्सवाद की वैज्ञानिकता है जो सबसे अधिक मानवीय धर्म को तथा एकमात्र हिंदू राष्ट्र नेपाल को नष्ट करने का उद्योग करता है, और इस्लाम एवं ईसाई धर्मावलंबी देशों की कट्टरता पर मौन रहता है। भारत का राष्ट्रवाद तथा तुलसी एवं शुक्ल का राष्ट्रवाद उन्हें अँधा और उग्र दिखायी देता है, लेकिन आश्चर्य है कि देश की करोड़ों-करोड़ों जनता को वह दिखायी नहीं देता। भारतीय जनता को पाकिस्तान और बंगला देश की मुस्लिम कट्टरता और जिहादी आतंकवाद तथा कम्युनिस्ट चीन का भारतीय क्षेत्रों पर कब्जे की साज़िश स्पष्ट दिखायी देती है, परंतु डॉ पचौरी, राजेन्द्र यादव आदि कम्युनिस्टों को वे दिखायी नहीं देते, और दिखायी भी दे कैसे, ये तो राष्ट्रवाद में विश्वास ही नहीं करते, परंतु आश्चर्य है कि रूस, चीन, क्यूबा आदि कम्युनिस्ट देशों की राष्ट्र-चेतना का समर्थन करते हैं। इनका लक्ष्य है कि भारत को भारत न रहने दिया जाए लेकिन सत्तर-अस्सी करोड़ हिंदू जनता की आस्था, विश्वास एवं धर्मगत मानवीयता को ये नष्ट नहीं कर पाएँगे।

'वाक्' में एक और चमत्कार है। उसमें 'टेलैंट हंट' शीर्षक स्तंभ है। 'वाक्' प्रतिभाओं की खोज ('सर्च') नहीं 'हंट' (आखेट, शिकार) करती है। इससे 'वाक्' का चरित्र-दर्शन स्पष्ट हो जाता है। मार्क्सवादी अभी तक राजनीति में शिकार करते थे, अब साहित्य में करेंगे। यह काम राजेन्द्र यादव 'हंस' में पहले से कर रहे थे, अब डॉ. पचौरी 'वाक्' से करेंगे और वे अब हिंदी के प्रोफेसर और अध्यक्ष हैं, उनका यह आखेट-कर्म और भी सरल हो जाएगा। हिंदी के सीधे-सरल युवा छात्र 'वाक्' की हंटिंग के शिकार बनेंगे और वह नयी पीढ़ी को अपना अनुयायी बनाएगा। 'वाक्' यह कार्य भूमंडलीकरण और नये विचार-विमर्श के नाम पर करेगा। हथौड़े-हँसिये पर लाखों बेकसूर लोगों का खून लगा है, अत: वे ऋषियों के पवित्र शब्द 'वाक्' से अपनी बंदूकें चलाएँगे, लेकिन मार्क्सवाद और पुरातन मनीषा की यह कोकटेल भारतीय समाज कभी स्वीकार नहीं करेगा। 'वाक्' की सार्थकता भारतीय होने में ही होगी। यदि हिंदी का 'हिंदीपन', हिंदू का 'हिंदूपन' तथा हिंदुस्तान का 'हिंदुस्तानीपन' नष्ट कर दिया तो आपके पास क्या बचेगा?

संपर्क-ए-98, अशोक विहार,
फेज प्रथम, दिल्ली-110052

वर्ष : 10 अंक : 34 जनवरी-मार्च 2008 RNI REG. NO. : DEL HIN/1999/791

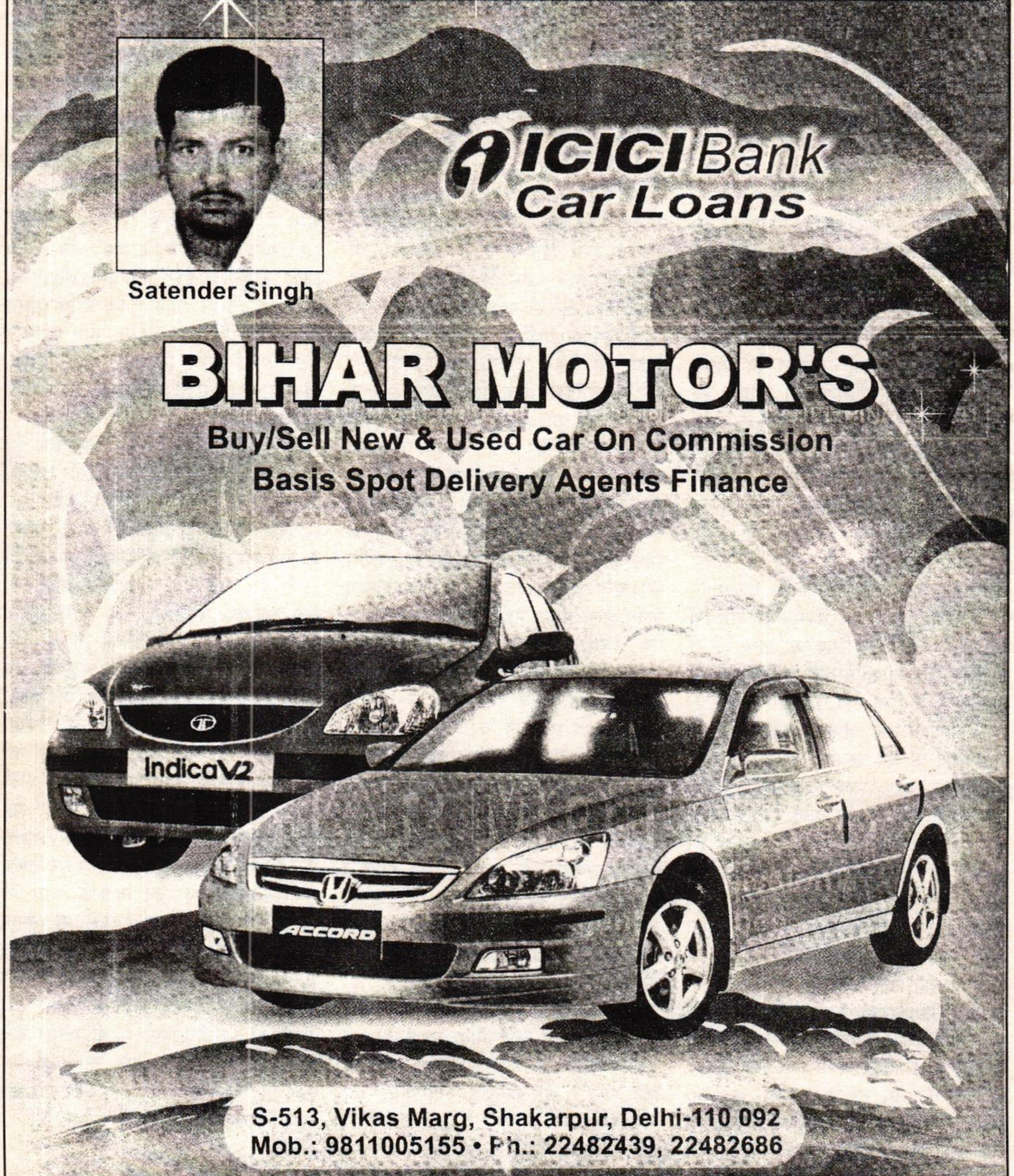

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी सिद्धेश्वर द्वारा 'दृष्टि', यू-207, विकास मार्ग, शकरपुर, दिल्ली-92 से प्रकाशित एवं प्रोलिफिक इनकारपोरेटिड, एक्स-47, ओखला फेस-2, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित। संपादक-सिद्धेश्वर

With Best Compliments from :

R.S. SHARMA CONTRACTORS (P) LTD.

C-3/60, Janakpuri, Delhi-110058

Tel. : 011-2552 7060 Fax : 011-4157 6062
Mob. : 9810148036
E-mail : rsscpl@gmail.com

With Best Compliments from :

D. C. Enterprises

New Delhi

With Best Compliments from :

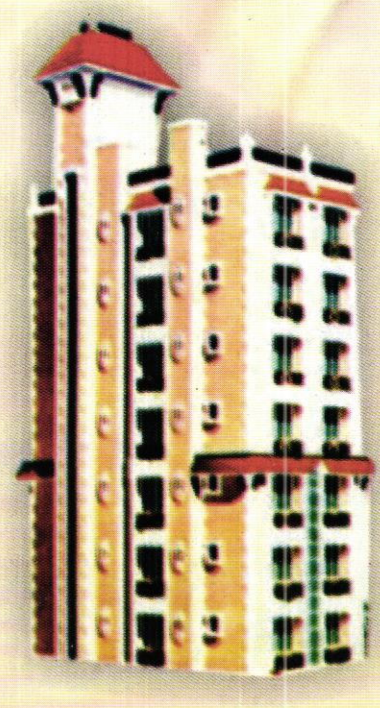

SHIV
Construction Co.

Govt. Approved

41-A, New Govind Pura, Delhi-110051
Tel. : 2204 5577, 2201 1104,
2205 5107

M/S. AJAB SINGH & CO.

With Best Compliments from :

Ajab Singh & Co.

(Developers & Contractors)

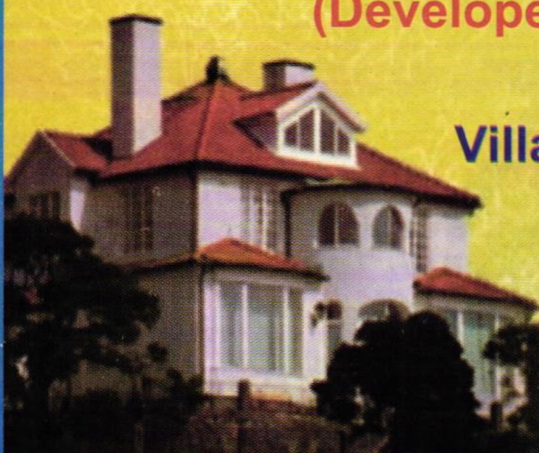

Village Gakalpur, Wazirabad Road
Shahdara, Delhi-110094
Tel. : 011-2281 6914
Fax : 011-2281 2363
Mob. : 98719 21295

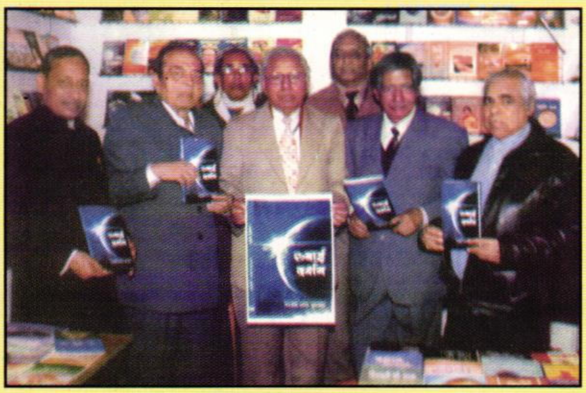

कविवर धनसिंह खोबा 'सुधाकर' की नवीनतम कृति
'रुबाई दर्शन' का लोकार्पण
दाएँ से : सर्व श्री देवेन्द्र मॉझी, डॉ० शेरजंग गर्ग,
धनसिंह खोबा 'सुधाकर' (रचनाकार),
डॉ० सुलेख चन्द्र शर्मा और डॉ० सुन्दरलाल कथूरिया
पीछे दाएँ से : श्री योगेश चन्द्र भार्गव तथा उनके मित्र

कविवर 'सुधाकर' की कृति 'रुबाई दर्शन' का लोकार्पण

पिछले 8 फरवरी 2008 को नई दिल्ली के विश्व पुस्तक मेले में कविवर धनसिंह खोबा 'सुधाकर' की अद्यतन कृति 'रुबाई दर्शन' का सम्मिलित रूप से लोकार्पण करते हुए डॉ० शेरजंग गर्ग, डॉ० सुलेख चन्द्र शर्मा, डॉ० सुन्दरलाल कथूरिया और श्री देवेन्द्र सिंह मॉझी ने 54 औज़ान के आधार पर रचित चार सौ रुबाईयों के इस संकलन को उपलब्धि का एक नया ऐतिहासिक संदर्भ और सूफ़ी दर्शन, अध्यात्म तथा दिव्य संदेश का वाहक बताया। अंत में 'सुधाकर' जी ने अपने कुछ प्रभु विष्णु रुबाईयों के पाठ से श्रोताओं को रस-सिक्त किया।

प्रस्तुति : सुमित भार्गव

कवि का पता : 33, गंगोत्री एपार्टमेंट, विकास पुरी, नई दिल्ली-18

With Best compliments from :

Aadhar Stumbh Township Pvt. Ltd.

PROMOTERS & DEVELOPERS

IInd Floor, Plot No. 2, Anand Plaza L.S.C.,
Sainik Vihar, Pitampura, Delhi-110034
Telefax : +91-11-27011155, 47018932

A RAY OF HOPE

श्रद्धा, आस्था और भाईचारे की मिसाल दरगाह की इबादत यात्रा

● सिद्धेश्वर

भारतीय संस्कृति ने सदियों से अपनी महानता का परिचय दिया है, क्योंकि इस देश में न जाने कितने विभिन्न धर्म और संस्कृतियाँ फल-फूल रही हैं। परस्पर विवाद और असहमति होते हुए भी यहाँ कई ऐसे स्थान हैं जहाँ सच्ची भारतीयता का परिचय मिलता है। ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की अजमेर स्थित दरगाह एक ऐसा स्थान है जहाँ हिंदू और इस्लाम धर्म सहित विभिन्न धर्म के लोग जाकर न केवल ख़्वाजा के मज़ार की ज़्यारत करते हैं, बल्कि सच्ची भारतीयता का परिचय भी देते हैं। जाति-पाँति का बंधन तोड़कर सभी पाक दिल से यहाँ हाज़री देने ज़रूर आते हैं। ऐसा लगता है कि वास्तव में ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ में ऐसी तेजस्विता है कि श्रद्धालु स्वयं ही खिंचे चले आते हैं और यहाँ आकर उन्हें आत्मिक शांति और तेजोमय आनंद का अनुभव होता है।

अब यही देखिए न, मैंने विगत एक दशक में अहमदाबाद, सूरत आदि अनेक स्थानों की यात्रा रेलवे हिंदी सलाहकार समिति के सदस्य की हैसियत से की है या फिर अणुव्रत महासमिति की राष्ट्रीय कार्यकारिणी में रहकर अणुव्रत अनुशास्ता अचार्यश्री महाप्रज्ञ के चातुर्मास की अवधि में अणुव्रत महासमिति के अधिवेशनों अथवा अहिंसा समवाय के राष्ट्रीय कार्यशाला में भाग लेने का मौक़ा मुझे मिला है, किंतु अजमेर से गुज़रते वक़्त ख़्वाजा की दरगाह की ओर अपना सिर झुकाने का ही काम अबतक मैं करता रहा था। मन में कई बार आया कि क्यों न अजमेर स्थित ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की

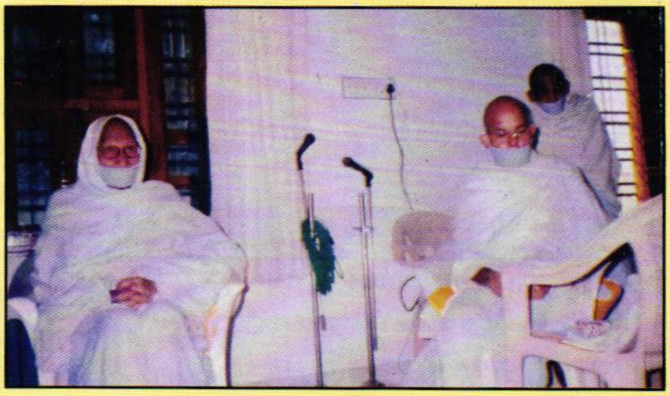

दरगाह तक हो आऊँ, पर चाहकर भी वैसा हो नहीं पाया। कहा जाता है कि मन में यदि आपके कोई बात बैठ जाए, तो वह लालसा कभी न कभी अवश्य पूरी हो जाती है सो इस बार वैसा ही हुआ। इस संदर्भ में मैं यह भी बता दूँ कि धार्मिक स्थलों में जाने के पीछे मेरी कोई धार्मिक भावना आजतक नहीं रही, कारण कि उन स्थानों पर जाकर संतों, मनीषियों, धर्मगुरुओं से न तो कभी मुझे कुछ प्राप्त करने की लालसा रही और ना ही बिना कुछ कर्म किए किसी से आशीर्वादस्वरूप कुछ पाने की इच्छा। मसलन याचक बनकर किसी के सामने खड़ा रहना मेरी आदत नहीं रही। यह भी नहीं कि मुझे अभाव नहीं है, पर जो कुछ मेरे पास है उसी को मैं अपनी थाती मानता हूँ और इसी को मैं आज बचा लूँ, तो मैं अपने जीवन को सार्थक समझूँगा। इस सिलसिले में मुझे एक छोटी-सी घटना याद आ रही है। मात्र एक दो वर्ष पहले की घटना है। जब मैं पटना प्रवास में था, तो एक दिन सुपुत्र सुधीर रंजन ने मुझे दूरभाष पर बताया कि वह अपने सुपुत्र यानी मेरे पौत्र समीर रंजन और पुत्रवधु सुनीता रंजन के साथ वैष्णो देवी के दर्शन के लिए कार्यक्रम बनाया है। साथ में उसके मौसा ई० विशेश्वर प्र० सिन्हा तथा उनके सुपुत्र विनोद एवं पुत्रवधु मीनाक्षी भी रहेगी। रंजन ने इच्छा जताई कि मैं भी उसकी माँ के साथ वैष्णो देवी का दर्शन करने चलूँ। यक़ीन मानिए, मैंने अपने

सुपुत्र को धन्यवाद देते हुए कहा कि आख़िर किस लालसा को लेकर मैं वैष्णो देवी के पास जाऊँ जब कि मेरी कोई लालसा है ही नहीं। सच तो यह है कि जो कुछ आज मेरे पास है यानी शरीर से स्वस्थ और दूसरों तक कुछ पहुँचाने की इच्छा, वे सब उसी वैष्णो देवी की कृपा से है। ऐसे में यदि मैं उनके पास पहुँचता हूँ, तो मुझपर उनकी भृकुटि तनना और उनका क्रोधित होना स्वाभाविक होगा और यों ही किसी की नाराज़गी मोल लेना मुझे पसंद नहीं। यह सब दूरभाष पर सुनकर मेरे रंजन ने अपनी बात वापस ले ली और वह अन्य लोगों के साथ जाकर वैष्णो देवी का दर्शन किया।

यह भी बताता चलूँ कि आयोजन स्थल आसिंद से अजमेर शरीफ़ की दूरी मात्र 160 किलोमीटर की है, जहाँ ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह है। हर वर्ष ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की पाक मज़ार पर अनगिनत श्रद्धालुओं में विदेशी सैलानियों की संख्या भी अच्छी-ख़ासी रहती है। मैं बताऊँ कि इस्लाम के साथ-साथ विश्व में सूफ़ी मत का प्रादुर्भाव भी हो चुका था। यह सूफ़ी मतावलंबी एकेश्वरवाद पर आस्था रखने वाले थे। धार्मिक आडंबरों से परे इन सूफ़ियों ने अल्लाह को अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया। उदारता और धार्मिक सौहार्द के साथ इन्होंने प्रेम और भाईचारे को ही सर्वाधिक महत्त्व दिया। ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती उन्हीं सूफ़ी संतों में से एक थे, जिन्होंने धार्मिक एकता को बढ़ावा देते हुए समाज को सहिष्णुता का संदेश दिया।

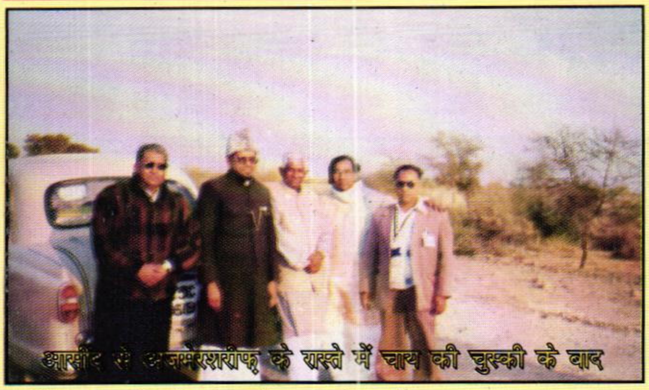

आसींद से अजमेरशरीफ़ के रास्ते में चाय की चुस्की के बाद

इन्होंने जाति-पांति के बंधन में स्वयं को कभी जकड़ने नहीं दिया। यही वे सब तथ्य हैं, जिसने मुझे उस स्थल पर जाने के लिए प्रेरित किए, क्योंकि मैं भी इस दर्शन का क़ायल हूँ।

उल्लेख्य है कि अजमेर शरीफ़ के उर्स की शुरुआत हिंदू परिवार द्वारा चादर चढ़ाकर होती है। यही उर्स यहाँ का मुख्य पर्व भी है। धार्मिक सद्भाव के लिए प्रेरित करती यह दरगाह भाईचारे की मिसाल है। सभी धर्म के श्रद्धालुओं की उपस्थिति दुनिया को शांति और सद्भावना का संदेश देती है।

राजस्थान के अजमेर शरीफ़ की दरगाह तारागढ़ पहाड़ी की तलहटी में स्थित है। वास्तुकला की दृष्टि से भी यह जगह विशेष है। यहाँ ईरानी और भारतीय वास्तुकला का अद्भुत संगम देखा जा सकता है। हिंदू और मुस्लिम एकता की पावन धरा की इस दरगाह की मुहार और गुंबद बेहद सुंदर हैं। मान्यता है कि इस दरगाह का कुछ हिस्सा अकबर ने और कुछ भाग जहाँगीर ने बनवाया था। इसे वर्तमान स्थिति में लाने का काम ग़यासुद्दीन ख़िलजी ने किया था। दरगाह के आस-पास कई और ऐतिहासिक इमारतें भी हैं। दरगाह में स्थित कटघरा जयपुर के राजा जयसिंह ने बनवाया था। धार्मिक कट्टरता को प्रोत्साहन देने वाले धर्मांधों को इस दरगाह पर आकर सीख लेनी चाहिए।

ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ मोइनुद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी की दरगाह-यात्रा के पीछे एक और मक़सद भी था वह यह कि राजस्थान के भीलवाड़ा जिलांतर्गत आसीन्द में 27 एवं 28 जनवरी 2008 को अणुव्रत महासमिति की ओर से आयोजित अहिंसा समवाय की राष्ट्रीय कार्यशाला में मुझे भाग लेना था। सो पटना से दिल्ली पहुँचने के कुछ दिन बाद यानी 26 जनवरी, 2008 की रात 10 बजकर 40 मिनट पर अपने सहयोगी उदय कुमार 'राज़' के साथ अहमदाबाद मेल से मैं व्यावर पहुँचा जहाँ डॉ॰बी॰ एन पाण्डेय सहितचार और लोग यात्रा में शामिल हुए। अणुव्रत की ओर से व्यावर स्टेशन पर मौजूद गाड़ी से हम सभी छह जनें आसीन्द पहुँचकर सीधे आचार्यश्री महाप्रज्ञ के सान्निध्य में आयोजित कार्यशाला में सम्मिलित हुए। डॉ॰ शाहिद जमील अन्य मार्ग से आए। 27 जनवरी 2008 के मध्यांहकालीन सत्र में 'अहिंसक समाज रचना के सूत्र 'विषय के विविध पहलुओं पर हुई समूह चर्चा में सब ने भाग लिया। मैंने निर्धारित विषय पर आलेख प्रस्तुत किया। डॉ॰ नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम' के संयोजकत्व में संपन्न इस कार्यशाला में डॉ॰ सरोज कुमार वर्मा ने जहाँ विषय प्रवर्तन किया, वहीं कार्यशाला में पधारे हमारे सहयोगी डॉ॰ शाहिद जमील ने भी चर्चा में भाग लिया। फिर रात नौ बजे आसीन्द के तेरापंथ भवन में आयोजित कवि सम्मेलन में पालीवाल, उदय कुमार 'राज़', डॉ॰ वर्मा, डॉ॰ नरेन्द्र शर्मा आदि ने अपने काव्य-पाठ सुधा-रस का पान प्रतिनिधियों को कराया।

राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर के साथ मंच की राजस्थान इकाई के पदाधिकारीगण

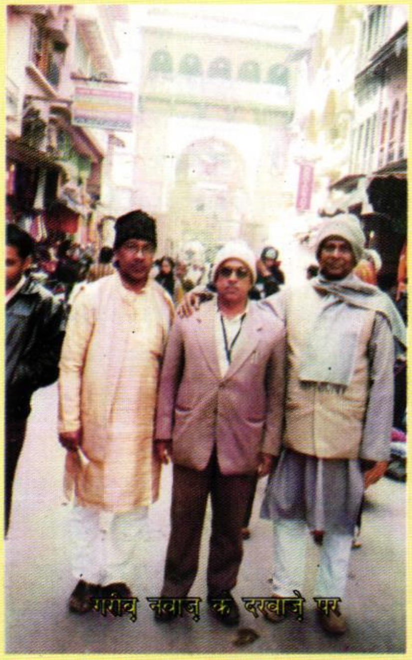

ग़रीब नवाज़ के दरवाज़े पर

कार्यशाला के दूसरे दिन यानी 28 जनवरी को हम 'कैसे लड़ें आतंकवाद से' पर युवाचार्यश्री के बाद आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने आत्मानुशान पर अपने रोचक विचार प्रस्तुत किए तथा मध्यकालीन सत्र इस माने में जीवंत रहा कि जी॰एल॰ नाहर के संयोजकत्व में डॉ॰ नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम', प्रो॰ प्रेम मोहन लखोटिया, कृष्ण वीर द्रोण, डॉ॰ बी॰एन॰ पाण्डेय, सुखवीर सिंह सैनी, प्रो॰ एम॰एन॰ बजाज, प्रो॰ सलीम इंजीनियर ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए जहाँ आतंकवाद से मुक्ति पाने के व्यावहारिक तथ्यों को रखा, वहीं मैंने राजनीतिक पार्टियों सहित केंद्रीय एवं राज्य के नेताओं की इच्छाशक्ति में कमी को ज़िम्मेदार ठहराया। अणुव्रत महासमिति के अध्यक्ष डॉ॰ महेन्द्र कर्णावट के उद्गार तथा आभार के उपरांत कार्यशाला का समापन हुआ।

28 जनवरी 2008 को अपराह्न 4 बजे राष्ट्रीय तकनीकी संस्थान के इलेक्ट्रॉनिक विभाग के प्राध्यापक प्रो॰ सलीम की गाड़ी से डॉ॰ जमील, श्री 'राज़' तथा किशनगढ़ के श्री सुरेश कुमार जामड़ के साथ मैंने अजमेर के लिए प्रस्थान किया और रास्ते में एक ढाबा पर चाय की चुस्की लेने के बाद रात आठ बजे अजमेर पहुँचकर लोढ़ा धर्मशाला में तीन बिस्तरवाले एक

साधारण कमरे में श्री 'राज़' के ना-नुकुर के बाद भी ठहर गया। इसके पहले कि अजमेर की छटा तथा ख़्वाजा अजमेरी की ख़ूबसूरती से आपको वाक़िफ़ कराऊँ, मो० सलीम की सदाशयता व उदारता के प्रति अपना आभार प्रकट करते हुए आसीन्द से अजमेर भाया गुलाबपुरा तक की लंबी व दिलचस्प यात्रा का वर्णन करना मैं इसलिए लाज़िमी समझता हूँ कि चार घंटे का वह सफ़र वाक़ई यादगार साबित हुआ, कारण कि एक तो रास्ते भर डॉ० शाहिद जमील ने इस्लाम और आतंवाद, निकाह-तलाक़, ज़कात और हराम-हलाल आदि के संबंध में बड़ी बारीकी से और गहराई में जाकर इस्लामिक क़ायदे-क़ानून से न केवल जानकारी कराई, बल्कि आम जनमानस खासकर ग़ैर-मुस्लिमों में घर कर गई कई भ्रांतियों को दूर करने में वे सफल रहे। बीच-बीच में मो० सलीम डॉ० जमील को सहयोग दे रहे थे। श्री जामड़ उनकी बातों को इतनी तन्मयता से सुन रहे थे कि कई बार मुझे लगा कि इनके किशनगढ़ स्थित 'जामड़ हाउस' में हम सब को ठहरना पड़ेगा। इसी तन्मयता का प्रतिफल रहा कि श्री जामड़ ने किशनगढ़ की यात्रा करने का हमें न्योता दे डाला, ताकि पत्थरों की चट्टानों के गढ़ का मुआयना कर सकें। यही नहीं, रास्ते में राष्ट्रीय उच्च पथ पर जब हमलोगों की गाड़ी सरपट भागी जा रही थी, तो कार में ही एक दौर मुशायरा-सह-कविगोष्ठी का भी चला, जिसमें मो० सलीम, श्री "राज़" तथा डॉ० जमील ने तो ग़ालिब इक़बाल, अकबर इलाहाबादी आदि के उमदा अशआर सुनाए हमने भी हाइकु के चंद-छंद प्रस्तुत किए, मगर आश्चर्य तो तब हुआ जब श्री जामड़ और कार चालक मो० अशफ़ाक़उल्ला ने भी एक-एक मुक्तक सुनाए तो हम सब हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए। आप पाठक भी उसे सुनने को बेताव हो रहे होंगे, मगर अभी नहीं, कभी किसी और अंक में आप पढ़ लेंगे। अभी तो केवल संपादक के वादे पर आप भरोसा रखें, क्योंकि यह राजनेताओं और जनप्रतिनिधियों के वादे नहीं।

हाँ, जब मैं, डॉ० शाहिद जमील और उदय कुमार 'राज़' ब्रह्मा-विष्णु-महेश सरीखे धर्मशाला में प्रातःचर्या से निवृत्त हुए, तो डॉ० महेन्द्र कर्णावट द्वारा बड़े प्रेम से दिए रात के खाने का डब्बा बग़ल में दबाए अजमेर स्टेशन के ठीक सामने स्थित एक रेस्ट्राँ में आ धमके ताकि वहाँ एक रसदार सब्जी लेकर पराठे खा लेंगे। रेस्ट्राँ के बैरा सहित उसके मालिक ने हम तीनों मोटे आसामियों को देख अति प्रसन्न हुए। जब डॉ० जमील ने बैरा से सब्ज़ियों की जानकरी माँगी तो बैरा दस-बारह सब्ज़ियों का नाम गिनाकर अन्य खानों के बारे में बताने लगा। श्री 'राज़' ने गंभीर मुद्रा में आलू-मटर-पनीर की सब्ज़ी एक प्लेट लाने का आदेश दिया, तो उसके पैर के नीचे से ज़मीन खिसक गई, क्योंकि खाना हमलोग लेकर आए हैं, इसका अंदाजा उन्हें इसलिए नहीं हुआ कि खाने के डिब्बों पर 'जोधपुर की मिठाइयाँ' लिखी थी। यह तो हुई रेस्ट्राँ के अंदर की कहानी, अब होटल के बाहर श्री 'राज़' के कारनामे सुनिए। हमनें सोचा कुछ मिठाईयाँ ख़रीदी जाएँ। श्री राज़ ने डॉ० शाहिद जमील तथा मुझे होटल से थोड़ी दूर पर इंतज़ार करने को कहा और वे खुद चले होटल, मिठाई पसंद करने। कई मिठाई का स्वाद चखने के बाद होटल के मालिक से बाहर खड़े अपने तथाकथित 'बॉस' को चखाने हेतु कुछ मिठाइयों की वानगी ले आए, मगर होटलवालों से यह कहकर श्री राज़ ने वहाँ से विदा ले ली कि कल सुबह मिठाई ख़रीदकर ही जयपुर के लिए हमलोग रवाना होंगे और इस प्रकार बेचारे मिठाईवाले आज तक इंतज़ार कर रहे होंगे कि श्री 'राज़' कब उनके यहाँ की मिठाई ले जाएँगे।

जो हो, हम तीनों 29 जनवरी 2008 को प्रात: आठ बजे तैयार होकर ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती अजमेरी के आसताने पर हाज़री देने पैदल निकल पड़े। ग़रीब नवाज़ के दरबार का नज़ारा देखा। मुझे तो कुछ माँगना था नहीं, क्योंकि सब कुछ उसकी दुआ से मेरे पास है, जिनसे मुझे ज़रूरतमंद को कुछ देना है। ऐसा नहीं कि धर्म में मैं विश्वास नहीं करता। असल में मुझे धर्म से नहीं, धार्मिक आडंबरों, रूढ़ियों, अँधविश्वास, उसकी संकीर्णता और कट्टरता से सख़्त एतराज़ है। मैं ऐसे किसी भी धर्म को पूरी तरह ख़ारिज करता हूँ जो मानवीय संवेदना और भाईचारे से हमें दूर करता है। जो लोग सिर्फ़ मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारा जाने, प्रार्थना करने और भगवान के सामने मत्था टेकने को धार्मिक होना समझते हैं, मुझे उनपर तरस आती है, चाहे वो किसी भी धर्म से जुड़े हों, इसलिए दरगाह के प्रांगण का भ्रमण कर मैं पुन: मुख्य दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ जहाँ श्री "राज़", डॉ० जमील और मेरे जूतों की रखवाली कर रहे थे। श्री 'राज़' जब ख़्वाजा के मज़ार पर माथा टेकने चले गए तो उनके चप्पल की रखवाली मैं करने लगा। दरवाज़े की सीढ़ी पर खड़े ख़ादिम ख़्वाजा साहब सैयद इस्तक़ामत अली चिश्ती जी से बातकर दरगाह शरीफ़ की विस्तृत जानकारी ले रहा था। इसी बीच एक सज्जन ने श्री 'राज़' की क़ीमती चप्पल पहन ली और वे यह कहकर जाने लगे कि वे दरगाह में डियूटी पर हैं और शीघ्र ही वापस आ जाएँगे। ख़्वाजा की दरगाह पर अविश्वास का कोई प्रश्न नहीं, यह समझकर मैंने उन्हें जाने की इजाज़त दे दी और बग़ल में खड़े सैयद इस्तक़ामत अली को मैंने यह घटना सुना दी। उन्होंने मुझे यह कहकर सांत्वना दी कि यदि श्री 'राज़' की चप्पल लेकर वह ग़ायब हो जाता है, तो मेरे लिए अच्छी बात यह होगी कि संपादक होने के नाते मुझे एक अच्छा-ख़ासा मसाला मिल जाएगा। उन्होंने चप्पल ले जाने वाले का नाम बता देने का आश्वासन भी दिया। ख़ैर! चप्पल ले जाने वाले ने मेरे विश्वास को मज़बूत किया। संभवत: यह सोचकर कि ख़्वाजा उसे कभी माफ़ नहीं करेगा या यह भी हो कि ग़रीब नवाज़ ने ही उसे चप्पल वापस करने का आदेश दिया हो। जो हो, डॉ० जमील व श्री 'राज़' लौटे, तो उन्हें इस घटना की जानकारी दी। फिर उन दोनों ने 'ग़रीब नवाज़ की मुकम्मल जीवनी' नाम्नी पुस्तक की ख़रीद पर पुस्तक बिक्रेता और उसके पालतू पहलवानों से हुई बकझक की घटना सुनाई। ख़ादिमों की हरकतों व इरादों को देख-सुनकर जिस नतीजे पर मैं पहुँचा, वह यह कि देवघर, वैष्णो देवी, बालाजी हो या ख़्वाजा व अन्य दरगाह सभी के पंडे-पुजारी अथवा ख़ादिम

एक ही थैले के चट्टे-बट्टे हैं, जो अपने- अपने धर्मों की पवित्रता-आस्था पर प्रश्न चिह्न लगा रहे हैं, वरना कोई भी धर्म ख़राब नहीं होता, वह तो व्यक्ति के विवेक को जगाता है और विवेक के जागरण से व्यक्ति को उचित-अनुचित एवं हित-अहित का बोध हो जाता है तथा धर्म हमें उदार बनने तथा आत्म विस्तार करने का पाठ पढ़ाता है। इसलिए हमें यह कहना होगा कि ख़्वाजा "ग़रीब नवाज़" हैं। उनकी दुआ खुदा कुबूल करता है। हाजतमंदों की मुरादें पूरी होती हैं। उनका आसताना सबों के लिए है।

इमारत दरगाह शरीफ के बारे में कुछ न बताऊँ, तो हमारा यह यात्रा-वृतांत अधूरा समझा जाएगा। अजमेर शहर ऊँची पहाड़ियों के बीच आबाद है जैसे चारदीवारी में एक किला हो। इसके पश्चिम और दक्षिण पहलू से मिला हुआ तारागढ़ पहाड़ी का सिलसिला है, इसी पहाड़ी के दामन में ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ की दरगाह है जो एक बड़े क्षेत्रफल में चारदीवारी के अंदर है। दरगाह शरीफ़ के चारो तरफ़ दरवाज़े हैं जिनमें सबसे ऊँचा और आलीशान दरवाजा निज़ाम गेट कहलाता है। इसके अतिरिक्त कलिमा दरवाज़ा, अकबरी मस्जिद, बुलंद दरवाज़ा, सेहन चिराग़, संदल ख़ाना, औलिया मस्जिद, शाहजहानी मस्जिद, बेगमी दालान, रौज़ा-ए-मुनव्वरा, अहाता-ए-नूर तथा चार यार क़ब्रिस्तान हैं। अजमेर शरीफ़ के दूसरे पाक मक़ामात में आना सागर, चिल्ला ख़्वाजा ग़रीब नवाज़, चिल्ला कुतुब साहब, दौलत बाग़, शाहमदार, ढाई दिन का झोपड़ा, क़िला तारागढ़, ख़ूनी रात का वाक़िया तथा चिल्ला बड़े पीर साहब के मुक़ाम हैं। आख़िर तभी तो कहा गया है,

हम से जो लाखों करोड़ों से न अब तक हो सका।

हल वो एक अल्लाह वाले ने मुअम्मा कर दिया।।

29 जनवरी 2008 को राज्य परिवहन से मैं अपने कर्मठ व विश्वासी सहयोगी डॉ॰ शाहिद जमील और उदय कुमार 'राज़' के साथ ठीक दो बजे प्रो॰ राज चतुर्वेदी के निवास 'राजहंस' 23, चंद्रपथ, सूरज नगर प॰, जयपुर पहुँचा जहाँ उनके हाथों का बना लाज़ीज़ खाना खाया। सुश्री पल्लवी ने खाना बनाने से लेकर खिलाने तक में उनका साथ दिया। फिर तीन बजे से पाँच बजे संध्या तक दो चरणों में दो कार्यक्रम संपन्न हुए। पहले चरण में राष्ट्रीय विचार मंच की राजस्थान ईकाई की कार्यकारिणी का पुनर्गठन हुआ जिसमें प्रो॰ राज चतुर्वेदी की अध्यक्षता में कुल ग्यारह पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्यों की एक सूची प्रो॰ चतुर्वेदी के द्वारा प्रस्तुत हुई जिसका मंच के राष्ट्रीय महासचिव की उपस्थिति तथा राष्ट्रीय सचिव उदय कुमार 'राज़' के पर्यवेक्षण में अनुमोदन किया गया और शेष दस सदस्यों के मनोनयन के लिए इस कार्यकारिणी को अधिकृत किया गया।

दूसरे चरण में चार से पाँच बजे तक 'राष्ट्रीय एकता आज इस देश में क्यों आवश्यक' विषय पर डॉ॰ नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम' की अध्यक्षता में आयोजित विचार संगोष्ठी में जहाँ मैंने बीज वक्तव्य प्रस्तुत किया, वहीं कृष्णवीर द्रोण, प्रो॰ राज चतुर्वेदी, डॉ॰ शाहिद जमील, उदय कुमार, मनोरमा, कृष्णा साहनी आदि ने अपने विचार प्रस्तुत कर संगोष्ठी को जीवंत बनाया। कार्यक्रम का संचालन किया मंच की महासचिव सुश्री पल्लवी सिंह चौहान ने तथा मंच के पुस्तकालयाध्यक्ष ने आभार व्यक्त किया। दस बजे रात्रि में बस द्वारा हम तीनों दिल्ली वापस लौटे विभिन्न स्थलों की यादों को समेटे।

राष्ट्रीय कार्यालय, विचार दृष्टि
'दृष्टि', यू 207, शकरपुर, विकास मार्ग दिल्ली-110092
दूरभाष: 011-22530652, 22059410,0612-2228519
सिद्धेश्वर, संपादक

अत्यावश्यक सूचना

सूचित किया जाता है कि इस वर्ष के दिसंबर 2008 में 'विचार दृष्टि' के दस वर्ष पूरे होने पर अक्टूबर-दिसंबर 2008 में प्रकाशित 37 वाँ अंक 10-वर्षांक होगा और यह वर्षांक पत्रकारिता पर केंद्रीत होगा। किसी साहित्यिक व वैचारिक पत्रिका का नियमित रूप से दस वर्षों तक लगातार प्रकाशित हो पाना निश्चित रूप से एक उपलब्धि कही जाएगी। पत्रिका को जो स्नेह और विश्वास इसके पाठकों व लेखकों से मिला है उसके लिए मैं आभारी हूँ। पत्रिका के जो उद्देश्य हैं और जो मानदंड इसने तय किए हैं उन पर अनवरत रूप से मैंने चलने की कोशिश की है।

पत्रकारिता पर केंद्रीत 'विचार दृष्टि' के 37 वें दस-वर्षांक के लिए संपादक-समूह ने निम्नलिखित विषयों का चयन किया है जो पत्रकारिता के विविध आयामों पर आधारित हैं

1. 21वीं सदी में पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका
2. लघु पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन में बाधक तत्त्व
3. साहित्यिक व वैचारिक पत्रिकाओं के संकट
4. वैचारिक पत्रिकाओं की चुनौतियाँ
5. राष्ट्रीय एकता को जाग्रत करने में पत्रिकाओं का योगदान
6. मौजूदा दौर की पीली पत्रकारिता और हमारा समाज
10. पत्र-पत्रिकाओं का वर्तमान परिदृश्य
11. भारतीय राजनीति और पत्र-पत्रिकाएँ
12. भारतीय संस्कृति और संचार माध्यम
13. मीडिया और साहित्य
14. वैश्वीकरण और मीडिया
15. पत्र-पत्रिकाएँ : दशा और दिशा
16 आतंकवाद और पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका
17. मीडिया और भारतीय संस्कृति
18. विज्ञापन और पत्रिकाएँ
19. राष्ट्रीय अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखने में पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका ..
.20. हिंदी का साहित्यिक समाज और लघु पत्रिकाएँ।
21. वर्तमान दौर में वैचारिक पत्र-पत्रिकाओं की स्थिति और उसकी भूमिका।
22. दक्षिणी भारतीय भाषाएँ और पत्र-पत्रिकाएँ।
23. हिंदी साहित्य का विकास और पत्रिकाएँ।
24. बेहतर समाज के लिए ज़रूरी है बेहतर पत्र-पत्रिकाएँ
25. पत्र-पत्रिकाएँ ही हैं भरोसेमंद मित्र।

अतएव सहयोगी लखकों से निवेदन है कि उपर्युक्त विषयों अथवा अपने द्वारा पत्रकारिता के किसी आयाम पर विषय का चयन कर अधिकतम एक हजार शब्दों में 'विचार, दृष्टि' के राष्ट्रीय/ स्थानीय पटना कार्यालय में 15 सितंबर 2008 तक अपने लेख भेजने की कृपा करें। हम आपके आभारी होंगे।

संपादक

:: उत्तरापेक्षी ::

डॉ॰ शाहिद जमील, उप संपादक
सी-6 पथ सं॰ 5, आर ब्लॉक, पटना-1
उदय कुमार 'राज़', सहायक संपादक
एस॰ 107, स्कूल ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली-92

'भारत रत्न' को माखौल बनाया राजनेताओं ने

○ सिद्धेश्वर

देश का सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' के हकदार को लेकर इस देश के राजनीतिक दल और उसके नेता इस प्रकार लामबंद हुए जैसे अपने-अपने शीर्ष नेता को यह पुरस्कार दिलाकर छोड़ेंगे। इस देश को आजादी मिलने के बाद यह तय किया गया कि बेहतर सामाजिक जीवन जीने वाले किसी राष्ट्रभक्त को, जिसने साहित्य व समाज सेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान किया हो, हर साल 'भारत रत्न' पुरस्कार से नवाजा जाएगा, किंतु खेद है कि आजादी के साठ सालों में किसी भी साहित्यकार व समाज सेवियों को यह सम्मान न देकर इधर राजनीतिज्ञों को दिए जाने की परिपार्टी चल गई है। संभवत: इसी से उत्साहित होकर इस बार लोक सभा में प्रतिपक्ष के नेता लालकृष्ण आडवाणी ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर इस साल का 'भारत रत्न' श्री अटल बिहार वाजपेयी को देने का अनुरोध क्या किया मानो देश के राजनीतिक दलों में भुचाल-सा आ गया। तकरीबन सभी पार्टियाँ अपनी ओर से अपने आलाकमान के नामों का प्रस्ताव देने में जुट गईं। ऐसे नामों में अबतक भाजपा से अटल बिहारी वाजपेयी, वाम की ओर से ज्योति बसु, बसपा की ओर से कांशीराम तथा लोजपा की ओर से बाबू जगजीवन राम के उछाले गए हैं। संभव है अभी आने वाले समय में कई और नाम बतौर दावेदार सामने आ सकते हैं। क्षेत्रीय दलों का दावा आना अभी बाकी है। बलियावासियों की ओर से चंद्रशेखर के अतिरिक्त कई लोगों ने चौधरी चरण सिंह, देवीलाल, एन.टी.रामाराव आदि के नाम भी आगे बढ़ाए। शिव सेना ने इस सम्मान के सही हकदार रतन टाटा को बताया, जिन्होंने लाखों लोगों को रोजगार मुहैया कराने के साथ-साथ मध्यवर्गीय के लिए लखटकिया कार बनाकर कमाल कर दिखाया है।

मुझे ऐसा लगता है कि 'भारत रत्न' जैसे सर्वोच्च नागरिक सम्मान के लिए न केवल शुद्ध राजनीति की जा रही है, बल्कि राजनीतिक दलों ने 'भारत रत्न' का माखौल उड़ाया है, वरना आज तक तो ऐसा कभी नहीं हुआ कि राजनीतिक दल की ओर से किसी नेता का नाम प्रस्तावित किया गया है, राजनेताओं को एक खास खांचे में फिट करने का प्रयास भी है, जबकि मौजूदा दौर में इस देश के आमजन का विश्वास राजनेताओं पर से उठता चला जा रहा है। ऐसे में राजनेताओं को अपने आप में झाँकने की कोशिश करनी चाहिए। सच तो यह है कि जिनके लिए राजनीतिक दल यह सम्मान माँग रहे हैं उनकी आभा और गरिमा को भी कम कर रहे हैं।

अब तक कुल चालीस लोगों को 'भारत रत्न' से सम्मानित किया जा चुका है जिनमें से दस व्यक्तियों को यह सम्मान मरणोपरांत दिया गया है। जिस एकमात्र शख्सियत को दिया गया यह अलंकरण वापस लिया गया उनका नाम नेताजी सुभाष चंद्र बोस है। उन्हें यह सम्मान 1992 में मरणोपरांत देने की घोषणा की गई थी, लेकिन पुरस्कार समिति यह साबित नहीं कर पाई कि नेताजी का निधन हो चुका है। प्राप्त चालीस व्यक्तियों में दो विदेश और एक कुदरती ढंग से भारतीय बनी हस्ती शामिल हैं। ये हैं सीमांत गाँधी खान अब्दुल गफ्फार खन, नेल्सन मंडेला और एग्नेस गोंक्शा बोयाक्शू जो मदर टेरेसा नाम से लोकप्रिय हुईं।

इतनी बड़ी-बड़ी हस्तियों को 'भारत रत्न' मिलने के बाद आज राजनीतिक दलों द्वारा अजीबोगरीब ढंग से कुछ हास्यास्पद माँगें भी की जा रही हैं। 'भारत रत्न' के हकदारों में राम मनोहर लोहिया, मुलायम सिंह यादव, लाला जगत नारायण, बी.पी. मंडल, मोहम्मद रफी, ज्योतिबा फूले, लाल बहादुर शांस्त्री, डॉ. मनमोहन सिंह, बहादुर शाह जफर, भगत सिंह, बीजू पटनायक तथा बाबा रामदेव का नाम भी शामिल है। मैं यह नहीं कहता कि इन हस्तियों का समाज व राष्ट्र में योगदान नहीं है, किंतु जिस प्रकार, राजनीतिक दलों और उसके नेताओं ने आपाधापी में अपनी-अपनी अभिरुचि के लोगों को 'भारत रत्न' दिलाने की माँग की है उससे ऐसा लगता है कि 'भारत रत्न' को लोगों ने माखौल बना रखा है। बेतहर तो यह होगा कि केंद्र सरकार राजनेताओं के स्थान पर किसी समाज सेवी, कलाकार, साहित्यकार, पत्रकार, उद्योगपति अर्थात गैर राजनीतिक हस्तियों को 'भारत रत्न' से सम्मानित करने पर विचार करे। ऐसा नहीं है कि कुछ राजनेताओं के योगदान को हम कम करके आँक रहे हैं, किंतु यह भी न हो कि उनके आगे अन्य विभूतियाँ उपेक्षित रह जाएँ। वैसे यदि किसी व्यक्ति में तेजस्विता है प्रतिभा है, कर्म-शीलनता है, पीढ़ियों तक प्रभाव छोड़ सकते की क्षमता है, तो फिर जनमानस में खुद को प्रतिष्ठित करने के लिए और किसी उपकरण की आवश्यकता ही नहीं रहती। बड़प्पन हासिल करने के लिए किसी को भी किसी किस्म के सहारे की जरूरत नहीं होती। इतिहास साक्षी है कि जिन महापुरुषों ने अपने हिसाब से जीवन जीया, कर्म किया, छाप छोड़ गए जन सामान्य आज तक उनका दीवाना बना हुआ है। इस दृष्टिकोण से इस देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' को हल्के ढंग से नहीं लिया जाना चाहिए। जब 'भारत रत्न' के लिए मारामारी है, तो फिर सम्मान काफी भले लोगों को क्यों न मिले, जिसने देश के लिए कुछ किया है। सुपात्र को सम्मान , मिलने पर विवाद नहीं होते। इसलिए प्रयास हो कि ऐसे मुद्दों को हवा न दी जाए और कोशिश यह भी हो कि विवादास्पद नामों को पुरस्कार से न नवाजा जाए। 'भारत रत्न' जैसे सर्वोच्च नागरिक सम्मान को विवाद से परे रखने के जतन होने चाहिए।

अपनी राजनीति के हिसाब से अपना 'भारत' बनाने और मनमाफिक 'रत्न' के लिए 'भारत रत्न' माँगने वाले नेताओं को भले ही राजनीति से इत्तर किसी और क्षेत्र में भारत का कोई 'रत्न' नजर आया हो; किंतु इंटरनेट यूजर्स ने रतन टाटा और

सचिन तेंदुलकर जैसी हस्तियों को भी इस लायक माना है।

दरअसल, जब राष्ट्र प्रेम के मानक टुटते तब राष्ट्र जयचंद और पृथ्वीराज में फर्क करना भूल जाता है। 'भारत रत्न' इस देश की शान है। जिस भी व्यक्ति का राष्ट्र की प्रति व्यापक अवदान रहा है। जिसकी जड़ें भारतीय सभ्यता-संस्कृति से आँचवन ग्रहण करती रही हैं, जिसने समाज व राष्ट्र के वृहत्तर हित में काम किया है, वही इस सम्मान का अधिकारी हो सकता है। मगर जिनकी आस्था का केंद्र भारत भूमि नहीं है वही इस सम्मान को राजनीति का मोहरा बनाने पर आमादा दिखते हैं। लेकिन वस्तुनिष्ठ नजरिए से विचार करें तो सवाल यही उभरेगा कि क्या देश में कला, साहित्य, ज्ञान विज्ञान एवं सार्वजनिक जीवन में उत्कृष्ट सेवाएँ देने वालों की कमी है? आज भी इस देश में ऐसे लोगों की तादाद है जो लोगों की नजरों से दूर अपनी धुन में समाज के लिए सक्रिय योगदान कर रहे हैं, लेकिन उनके नाम उभर नहीं पाते। सच तो यह है कि 'भारत रत्न' ऐसे व्यक्ति को दिया जाना चाहिए जिसे अपने लिए कोई लालच न हो और जो भारत राष्ट्र और इसकी जनता की प्रगति के लिए अपने आपको न्योछावर कर दे। पुरस्कार का सम्मान तब और बढ़ जाता है, जब पुरस्कृत होने वाला व्यक्ति उससे भी बड़ा हो। अब तो स्थिति यह है कि पुरस्कार समिति राजनीति का शिकार हो गई है। दरअसल, देशहित में कार्य करने वाले समाज सेवी को ही यह सम्मान मिलना चाहिए।

यह कड़वा सच है कि महानता किसी रत्न की मोहताज नहीं होती। उनके लिए कार्यों को जनता सर आँखों पर बैठा लेती है जैसे कि आजादी की लड़ाई में नेताजी सुभाष चंद्र बोस, भगत सिंह, महात्मा गाँधी इत्यादि को जनता ने सर आँखों पर बैठाया है। इन्हें तो 'भारत रत्न' देने की किसी ने माँग नहीं की। ये महान व्यक्तित्व किसी भी रत्न के मोहताज नहीं हैं।

संपर्क : दृष्टि', यू-207, विकास मार्ग, शकरपुर, दिल्ली-110092

भारत की सांस्कृतिक एकता साध्य और साधन

❍ एच.बी. मुरकूट

संस्कृति शब्द की निष्पत्ति संस्कार शब्द से हुई है। जन्म से लेकर मृत्यु तक मानव अनेक संस्कारों का पालन करता है। भारत की सांस्कृतिक एकता सबसे श्रेष्ठ है। ऋषियों से लेकर आज के वैज्ञानिक, औद्योगिक और राजनैतिक युग में वह फैली हुई है।

सागर के पानी को हाथ में उठाकर यह नहीं कहा जा सकता कि यह अमुक स्थान का ही है। इसी प्रकार भारतीय संस्कृति है। नाना जाति, धर्म, दर्शन, सभ्यता और संस्कृतियों का मेल समय-समय पर होता रहा है। यही भारतीय संस्कृति की विशेषता है विविधता में एकता।

भारत आज जो कुछ है, उसकी रचना में भारतीय जनता के प्रत्येक भाग का योगदान रहा है। मनुष्य पंजाब और शिवालिक की ऊँची भूमिपर विकसित हुआ होगा। सिंधु के पठार में कृषि सभ्यता बनी होगी, सिंधु के पाठार में आज भी प्राचीन संस्कृति के लोक अवशेष मिलते हैं।

भारत की संस्कृति में थिग्रो आष्टिक आर्य, यूनानी, यूची शक, आभीर, हुज, मंगोल और मुस्लिम, तुर्क और द्रविड़ों की संस्कृतियाँ भी हैं। परंतु पानी का नाम नदी के नाम पर पड़ता है उसी प्रकार संस्कृति सभ्यता और इतिहास भूगोल का नाम देश के आधार पर बनता है।

भारत बहुभाषी देश होते हुए भी इसकी सांस्कृतिक एकता ही साध्य और साधन हैं। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तथ कच्छ से लेकर कलकत्ता सब एक सूत्र में आते हैं। आपस में व्यवहार करते हैं। यही भारत की सांस्कृतिक एकता की महत्ता है।

राजभाषा हिंदी भारत की एकता और अखंडता की कड़ी है। हर एक धर्म के आदमी एक दूसरे धर्म के आदमी से मिलजुलकर एकता दिखाते हैं।

भारत का जनतंत्र दुनिया में सबसे बड़ा लोक जनतंत्र है। संसद में अलग-अलग जाति, धर्म, भाषा के लोग एकता के साथ जनतंत्र चलाते हैं। सच है भारत कि सांस्कृतिक एकता साध्य और साधन है।

भारत की संस्कृति में मानव संरक्षण और आस्तिक भावना का समावेश है। अपना विकास दूसरों के सहयोग से ही होगा।

संपूर्ण भारत में वर्ष भर होने वाले प्रमुख पर्व, होली दीपावली, दशहरा, रक्षा बंधन, ईद, क्रिसमस, वैशाखी की ही तरह पुरी रथ यात्रा पर्व भी महत्त्वपूर्ण है। पुरी का प्रधान पर्व होते हुए भी यह रथ यात्रा पूरे भारत में लगभग सभी नगरों में उतनी ही श्रद्धा और प्रेम के साथ मनायी जाती है। जो लोग पुरी की रथ यात्रा में शामिल नहीं हो पाते हैं, वे अपने नगर की रथयात्रा में अवश्य शामिल होते हैं। रथ यात्रा के इस महोत्सव में जो सांस्कृतिक और पौराणिक दृश्य उत्पन्न होता है, उसी तरह प्राय: सभी देशवासी सौहार्द, भाईचारे और एकता के परिप्रेक्ष्य में देखते हैं, जिस श्रद्धा और भक्ति से पुरी के मंदिर में सभी लोग बैठकर एक साथ श्री जगन्नथ जी का महाप्रसाद प्राप्त करते हैं, उत्साहपूर्वक श्री जगन्नाथजी का रथ खींचकर लोग अपने को धन्य मानते हैं।

सांस्कृतिक एकता का सहज सौहार्द रूप जगन्नाथ की यात्रा से प्रतीत होती है।

उसी तरह मैसूर का दशहरा, उत्तर भारत में होली का त्योहार, ईद, क्रिसमस के त्योहार भारत के भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी, विविध जाति, धर्म के लोग अपने-अपने ढंग से मनाते हैं। यही भारत की सांस्कृतिक एकता की कड़ी है।

एकता साध्य और साधन के आधार पर भारत की प्रगति होगी। दुनिया में हम सबसे ऊँचा स्थान प्राप्त करेंगे।

कभी हमारी सांस्कृतिक एकता साध्य साधन बने तब।

संपर्क: क्रॉस नं.-2, आनंदनगर, वड़गाँव, बेलगाँव-5, फोन-2481526

भारत राष्ट्र : वर्तमान चिंताएँ: साहित्यिक परिदृश्य

(संदर्भ: २१वीं शती [विगत सात वर्ष] की हिंदी-कविता)

❍ प्रो० (डॉ०) सुन्दरलाल कथूरिया

भारत राष्ट्र का समकालीन परिदृश्य बहुत सुखद नहीं है। राष्ट्रीय स्तर पर भारत नाना प्रकार की चिंताओं से घिरा है। भारत शाब्दिक अर्थ है- भा (प्रकाश) +रत (संलग्न) अर्थात् वह देश जो चारों ओर से प्रकाशमान हो, सुखी हो, चिंता-विनिर्मुक्त हो, किंतु आज भारत की स्थिति उसके शाब्दिक अथ के अनुरूप नहीं है। जिस देश में रामराज्य की कल्पना की गयी है, वह देश आज एक भयावह दौर से गुज़र रहा है। देश का वर्तमान परिदृश्य निःसंदेह चिंताजनक है। सुख-शांति का स्थान अशांति और दुःखों ने ले लिया है। आज देश में आतंक, उग्रता, हिंसा, बर्बरता, अत्याचार, आपराधिक घटनाओं का बोलबाला है। भ्रातृत्व, प्रेम, नैतिकता, शुचिता, सत्यवादिता, अहिंसा, न्यायप्रियता, समता, ईमानदारी, देश-प्रेम, निःस्वार्थ त्याग-भाव, सच्चरित्रता आदि मानव-मूल्यों को बालाये-ताक रख दिया गया है और उनके स्थान पर सांप्रदायिकता, जातिवाद, विघटन, बेईमानी, भ्रष्टाचार, धन-लोलुपता, अपराध -भावना, धोखेधड़ी, मार-काट, पाश्चात्य सभ्यता के अँधानुकरण के फलस्वरूप नग्नता, उन्मुक्त सेक्स, बलात्कार आदि की अँधी प्रवृत्तियाँ अपने चरम पर हैं। राजनीति में भी अब शुचिता, ईमानदारी, त्याग और सेवा-भाव का अभाव है। वोट बैंक की राजनीति गर्मा गयी है, फलतः राजनीतिक दल अपने-अपने वोट बैंक को भुनाने-लुभाने में लगे हैं और इसके चलते आरक्षण अपनी सीमा को लाँघता चला जा रहा है। 'राज' के साथ जुड़ी 'नीति' ने अनीति का स्थान ले लिया है। आरक्षण के लिए आये दिन होने वाले आंदोलनों से आम जनता पीड़ित और त्रस्त है तथा सामान्य जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है। राजनीतिक दल आम जनता से ही वायदा-खिलाफ़ी नहीं कर रहे हैं, सत्ता-मद और सत्ता मोह में अन्य दलों-पार्टियों के साथ हुए करारों और समझौतों को भी बेशर्मी के साथ तोड़ रहे हैं। ऐसे में प्रकाशमान भारत चारों ओर से अँधकार से घिर गया है, बल्कि यह अँधेरा दिनोंदिन बढ़ रहा है। (पद्मश्री) चिंरजीत के शब्दों में-

यह अँधेरा और बढ़ता जा रहा है,
डाकुओं का नित नया दल आ रहा है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि वह भारत, जो कभी विश्व-गुरु था और जिसने सृष्टि के प्रारंभ में ही वेद-ज्ञान से विश्व को आलोकित किया था, आज स्वयं तमसाछन्न हो गया है-वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर नाना प्रकार की चिंताओं-समस्याओं से घिर गया है। इन चिंताओं में आतंकवाद, अपराधीकरण, अपसंस्कृतिकरण, महंगाई, भ्रष्टाचार एवं राजनीतिक छल-छद्म, सांप्रदायिकता आदि की समस्याएँ भयावह, चिंताजनक एवं राष्ट्रघाती हैं। राष्ट्रहित में इन समस्याओं का शीघ्रातिशीघ्र निदान अत्यावश्यक है।

राष्ट्र के अन्य चिंतकों के समान साहित्यकार भी राष्ट्रव्यापी इन समस्याओं से चिंतित और व्यथित हैं तथा अपनी रचनाओं में इन्हें वाणी दे रहे हैं। कारण यह कि राष्ट्र का कोई भी जागरूक और प्रबुद्ध नागरिक राष्ट्रीय चिंताओं से अछूता नहीं रह सकता, फिर साहित्यकार, विशेषतः कवि जो अन्य नागरिकों की अपेक्षा अधिक संवेदनशील और प्रबुद्ध होते हैं, उनसे अछूते कैसे रह सकते हैं। यों भी, साहित्य तो समाज का दर्पण होता है। कोई भी प्रबुद्ध साहित्यकार अपने समय के सरोकारों, राष्ट्र की चिंताओं- समस्याओं, युग-यथार्थ की उपेक्षा नहीं कर सकता। महान्-साहित्यकार भी अपने समय की चिंताओं से जुड़े रहे हैं, बल्कि जो युग जितनी बड़ी अथल-पुथल का रहा है, उसमें उतने ही बड़े रचनाकार पैदा हुए हैं। यदि हम भारतीय स्वाधीनता संग्राम के दिनों को याद करें तो पाएँगे कि राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा नवीन, माखनलाल चतुर्वेदी आदि उसी युग की देन थे। महाकवि तुलसीदास ने अपने महाकाव्य 'रामचरित मानस' को यत्र-तत्र अपने युग-यथार्थ से जोड़ कर हताश और निराश हिंदू जाति में नवीन उत्साह एवं आशा का संचार किया है। कहने का अभिप्राय यह कि राष्ट्रीय चेतना-सम्पन्न कोई भी जागरूक एवं प्रबुद्ध रचनाकार अपने युग की चिंताओं से अछूता नहीं रह सकता, उनका समावेश प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उसकी रचनाओं में होगा ही, वह उनकी कलात्मक अभिव्यक्ति करेगा ही। यदि हम इक्कीसवीं शती की हिंदी-कविता अर्थात् विगत सात वर्षों की हिंदी-कविता पर दृष्टिपात करें तो हम पाएँगे कि उनमें यत्र-तत्र भारत राष्ट्र की वर्तमान चिंताओं की अनुगूँज है। कहीं सपाटबयानी के धरातल पर तो कहीं व्यंग्य के धरातल पर ये चिंताएँ समकालीन कवियों के संकलनों में व्यक्त हुई हैं।

इस समय भारत की सबसे बड़ी चिंताओं में से एक है आतंकवाद से निबटने की। विगत अनेक वर्षों से यह राष्ट्र आतंकवाद की निभीषिका से आक्रांत है। आतंकवाद, विशेषतः इस्लामिक आतंकवाद वर्तमान समय का युग-यथार्थ है। इसके भयानह चेहरे से न व्यक्ति बचा है, न समाज, न महानगर नगर या गाँव, न संसद् और न धर्म-स्थान। हिंदुओं के सभी धर्मस्थान-अयोध्या, काशी, मथुरा, अक्षर धाम, वैष्णो देवी, तिरुपति मंदिर आदि इस्लामिक आतंकवादी संगठनों के निशाने पर रहे हैं और हैं, यह हम सबकी चिंता का विषय है और होना चाहिए। जिस देश में आतंकवाद हमलों से संसद्, लालकिला या लाखों-करोड़ों हिंदुओं की आस्था के केंद्र धर्मस्थान ही सुरक्षित नहीं हैं, वहाँ भला और क्या सुरक्षित हो सकता है? कुछ भी तो नहीं। संसद् भवन और धर्म स्थानों पर हुए आतंकी हमलों के प्रति अपनी चिंता को डॉ० देवेन्द्र आर्य ने इस शब्दों में वाणी दी है-

जाग मेरे देश!
अक्षर धाम, हर संसद जगी है
आज सूरज की किरण से
चेतना सजने लगी है।

-आग लेकर मुटि्ठयों में पृ०100

इस राष्ट्रघाती, बड़ी समस्या के प्रति भारत सरकार को ही नहीं, जन-जन को

जागरूक होने की आवश्यकता है, अतः कवि ने पूरे देश को जागने और एक जुट होने का संदेश दिया है।

आतंकवादियों का उद्देश्य आतंक फैलाना होता है। उनके द्वारा होने वाले बम विस्फोटों में हिंदू मरते हैं या मुसलमान, इसकी उन्हें कोई चिंता नहीं। बाज़ारों, मंदिरों, कोर्ट-कचहरियों या भीड़-भाड़ इलाकों में बम विस्फोट कर वे कितने ही निरपराध व्यक्तियों की मौत का कारण बनते हैं। कहा तो यह भी जाता है कि इन आतंकवादी गतिविधियों के पीछे अलगाववादी तत्त्वों या मुख्यतः पाकिस्तान का हाथ है। पहले पंजाब में खालिस्तान की माँ को लेकर आतंकवाद को बढ़ावा दिया गया और अब इसकी व्याप्ति पूरे देश में है। आतंकी गतिविधियों की सुनियोजित साजिश के पीछे एक मुख्य उद्देश्व भारत राष्ट्र को विखंडित करने का है। कश्मीर समस्या भी इसके पीछे है और राष्ट्र को कमज़ोर और अस्थिर बनाकर इसे और निभाजित करने का घिनौना षड्यंत्र भी। पंजाब, कश्मीर, असम, दिल्ली, मुंबई, लखनऊ, फैजाबाद, वाराणसी आदि में तो आतंकवादी धमाके और गतिविधियाँ हुई ही हैं, इसकी व्याप्ति को देखते हुए कोई भी स्थान आतंक से सुरक्षित नहीं है। आतंकवादियों के लिए धर्म-ईमान या रिश्ते-नातों का कोई महत्त्व नहीं। उनका मकसद है खून-खराबा करना और दहशत फैलाना। आतंकवादियों के इस घिनौने चेहरे को अपनी एक ग़ज़ल में बखूबी बेनकाब किया है। यहाँ उसके केवल दो-तीन शेर प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

शोर में डूबा हुआ है शहर नयों?
हर तरफ तुम ढा रहे हो कहर क्यों?
खून भाई का बहा कर भागना
क्या बचेंगे गाँव, सारे शहर क्यों?
हर तरफ फैली भयंकर आग है
बुझ न पाती, फैलती हर सहर क्यों?

– निर्माण का सत्य, पृ० 86

आतंकवाद के परवर्ती परिणाम और भी भयंकर हैं। आतंक के परिणामस्वरूप न जाने कितनी माताएँ अपने इकलौते लालों को खोकर बेसहारा हो जाती हैं, कितनी महिलाएँ विधवा हो जाती हैं और कितने बच्चे अनाथ हो जाते हैं। उन्हें दर-दर की ठोकरें खाने के बावजूद सरकारी या ग़ैर सरकारी संस्थाओं से कोई सहायता नहीं मिलती। विपरीत इसके विधवा बहनों और उनकी बालिग नाबालिग बेटियों से बलात्कार के प्रयत्न किये जाते हैं तथा उनके बेटों का अपशब्दों से स्वागत किया जाता है। निराश होकर कई बार इन विधवाओं को अपनी या अपनी बेटियों की अस्मत का भी सौदा करना पड़ता है। इन दर्दनाक स्थितियों का चित्रण कवि सिद्धेश्वर ने अपनी एक मार्मिक कविता 'यह सच है' में इन शब्दों में किया है–'यह सच है। सरकारी महकमों में/उसका कोई मददगार नहीं/....यह सच है/आतंकवाद की आग में/अपने शौहर को खोकर/बेवा बनी एक मजबूर माँ/अपने पेट की खातिर/दर-दर ठोकरें है खा रही/और जालिमों की वजह से/खानाबदोश बन/ 'अपनी बेटियों' की/ अस्मत है लुटा रही।' (यह सच है, पृ० 52) ऐसी विनाश अबलाओं के नाबालिग बच्चों पर चोरी, जेबतराशी आदि के झूठे इल्ज़ाम लगाकर उन्हें फँसाया जा रहा है, मारा-पीटा जा रहा है, कैद कराया जा रहा है।

आतंकवाद से मिलती-जुलती जो अन्य राष्ट्रीय चिंताएँ हैं, वे हैं हत्या, बलात्कार, बढ़ते अपराध, बर्बरता, अमानवीय अत्याचार आदि। आप किसी भी समाचार-पत्र को उठा लीजिए, वह अपराधिक घटनाओं/ गतिविधियों से भरा मिलेगा। इन घटनाओं या गतिविधियों में केवल सामान्य-जन या मजबूर गरीब तबके से अधिक धनाढ्य वर्ग, राजनेता, अनेक सुपुत्र या परिजन ही लिप्त पाये जा रहे हैं। वे राजनेता जिहें अपने आदर्श चरित्र से जनता को दिशा देनी चाहिए, आकण्ड भ्रष्ट्राचार और आपराधिक गतिविधियों में डूबे हैं। राजनीति का आज काफ़ी हद तक अपराधीकरण हो गया है और प्रत्येक दल या पार्टी में आपराधिक छवि के दबंग नेताओं का बर्चस्य है, जो निश्चय ही राष्ट्रीय चिंता का विषय है। पुलिस, प्रशासन, माफ्रिय और राजनेताओं की साँठ-गाँठ से बर्बर घटनाओं को अंजाम दिया जा रहा है। निठारी जैसे पैशाचिक काण्ड हो रहे हैं। गोधरा और नंदीग्राम जैसी बर्बर, अमानवीय घटनाएँ घट जाती हैं, पर पुलिस, प्रशासन और राजनेताओं के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती। बड़े-बड़े राजनेता और मंत्री अनैतिक यौन संबंधों और उनके चलते हत्याओं में लिप्त पाये जा रहे हैं। देश के कर्णधारों की यह दशा निश्चय ही चिंत्य और निंदनीय है तथा उसका जन-सामान्य पर कोई अच्छा प्रभाव नहीं पड़ रहा है। 'यथा राजा तथा प्रजा' की कहावत चरितार्थ हो रही है। देश में चारों ओर अत्याचार, उग्रता, मारकाट, हत्याओं, लूटपाट आदि का बोलबाला है। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की उक्ति आज भी सार्थक हैं। अपने एक दोहे में श्री ए०बी० सिंह ने इस भाव को यों वाणी दी है-

लाठी जिसके हाथ में, भैंस उसी की मान।
गाढ़े में जीवन पड़े, कलि में यही विधान।।

–करो राष्ट्र निर्माण पृ० 28

आज के बहुत से नेता नाना प्रकार के घोटालों में लिप्त हैं और छवि स्वच्छ नहीं है। ऐसे नेताओं की नैतिकता और ईमानदारी पर सवालिया निशान लगाते हुए राष्ट्रवादी चिंतक कविवर सिद्धेश्वर ने लिखा है, 'तस्कर और सत्ताधारी' आकंठ डूबे हैं/ तरह-तरह के/नित नए घोटालों में/ लूट ली है/ अरबों की संपत्ति/ इन मगरमच्छों में/ बोफोर्स चीन/ शेयर, हवाला में/ आवास, भूमि, यूरिया,/ व पशुपालन घोटाला बे/' (यह सच है एक सवाल, पृ० 87) इस विचारात्मक गद्य-कविता (एक सवाल) में कवि ने आज के राजनेताओं के छद्म चेहरों को बेनकाब किया है।

राजनेताओं के आपराधिक, घिनौने, दोगले, कथनी-करनी के अंतरवाले चेहरे को 'निर्माण का सत्य' की कुछ कविताओं और उनके दोहों में उजागर किया गया है। गीतकार श्री चन्द्रसेन विराट के सद्यः प्रकाशित गीत-संग्रह 'गाओ कि जिये जीवन' के कुछ गीतों में राजनीति को मायाविनी की संज्ञा दी गयी है तथा राजनेताओं में घटती एवं विलुप्त होती देश-भक्ति पर चिंता व्यक्त की गयी है। कवयित्री डॉ० वीणा घाणेकर के कविता-संग्रह 'पता है नहीं भी' की अनेक कविताओं में राजनेताओं के आपराधिक चरित्र की व्यंजना हुई है। संग्रह की कुछ कविताएँ राजनैतिक चालाकियों, बढ़ते अँधेरे और रक्षक के रूप में भक्षकों की उपस्थिति आदि की अभिव्यंजना करती हैं। श्री जहीर कुरेशी के ग़ज़ल-संग्रह 'भीड़ में सबसे अलग' की कुछ ग़ज़लों में राजनैतिक दृष्चक्रों का पर्दाफाश हुआ है। श्री लक्ष्मी नारायण पयोधि के ग़ज़ल-संग्रह 'कंदील में सूरज' की कुछ ग़ज़लों के कुछ शेरों में राजनेताओं की मुखौटा धर्मिता, दोगलापन एवं राजनैतिक दुरभिसंधियाँ चित्रित हैं। संक्षेप

में, देश में बढ़ती अराजकता एवं गहराते राजनैतिक संकट पर इक्कीसवीं शती के प्रारंभिक वर्षों के कविता-संकलनों में चिंता व्यक्त हुई है।

राष्ट्रीय स्तर पर वर्तमान में अपसंस्कृति का व्यापक प्रचार-प्रसार है। दूरदर्शन के विभिन्न चैनल, समाचार-पत्र, विशापन, प्रसारित होने वाले विभिन्न कार्यक्रम व्यापक स्तर पर अपसंस्कृति की ही परोस रहे हैं। सर्वत्र नग्नता का साम्राज्य है। कला और साहित्य के नाम पर भी बहुत से नामी-गिरामी कलाकार और प्रगतिशीलता के नाम पर बहुत से नामवर साहित्यकार भी हिंदू देवी-देवताओं को अपमानित कर रहे हैं और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की खिलली उड़ा रहे हैं। यहाँ तक कि मर्यादा पुरुषोंतम भगवान् राम और रामसेतु के अस्तित्व को नकारने का षड्नंत्र किया जा रहा है तथा हिंदुओं को आस्थाओं से खिलवाड़ किया जा रहा है मद्यपान, ड्रग्स आदि के व्यसन बढ़ रहे हैं तथा दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों पर दिखाने जाने वाले सेक्स, मारधाड़ तथा परिवार के सदस्यों द्वारा अपने ही परिवार के विरूद्ध षड्यंत्रकारी, पारिवारिक विघटनकारी कार्यक्रमों को देखकर अल्पवय के बच्चों में हिंसा और सेक्स की प्रवृत्तियाँ बल पकड़ रही हैं। स्कूलों में अल्पनय के अबोध बच्चों को, समय और परिपक्व आयु के पूर्व ही विभिन्न प्रदेशों की सरकारें यौन शिक्षा देने की योजनाएँ बना रही हैं। बहुत बड़ी संख्या में भारत राष्ट्र में बहुराष्ट्रीय विदेशी कंपनियों के आ जाने से उपभोक्तावादी पाश्चात्य संस्कृति एवं बाज़ारवाद को बढ़ावा मिला है तथा भारतीय सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों को बहुत बड़ा धक्का पहुँचा है। ये स्थितियाँ निश्चय ही राष्ट्रीय चिंता का विषय है, जबकि भारत सरकार इनकी ओर से निश्चिंत ही नहीं बैठी है, वरन् इन प्रवृत्तियों को बढ़ावा देने में ही स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रही है। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि यदि किसी देश को समाप्त करना हो तो उस देश की सभ्यता, संस्कृति और भाषा को नष्ट कर दो। बहुत पहले लार्ड में काले ने यही किया था और आज बहुराष्ट्रीय विदेशी कंपनियाँ यही कर रही हैं। भारत राष्ट्र की सभ्यता और संस्कृति नष्ट-भ्रष्ट हो रही है और उस पर संकट के गहरे बादल मंडरा रहे हैं। भारत की राष्ट्रभाषा हिंदी को उसका सुनिश्चित सभ्मान और राजभाषा का समुचित दर्जा तो आज तक नहीं मिल सका सरकारी दफ़्तरों और कोर्ट कचहरियों तथा उच्च शिक्षा के क्षेत्र में तो अँग्रेज़ी का वर्चस्व आज तक बना ही है, विदेशी कंपनियों के आ जाने से आंग्ल भाषा का वर्चस्व और भी बढ़ गया है। तथा रोज़ी-रोटी के क्षेत्र में हिंदी की स्थिति पहले से भी बदतर ही हुई है। भारतीय सभ्यता, संस्कृति, सांस्कृतिक धरोहरों, संस्कृति -पुरुषों, आस्था के केंद्र-बिंदुओं एवं राष्ट्रभाषा के संरक्षण का जैसा और जिवना प्रयास भारत सरकार को करना चाहिए, वह नहीं कर रही है। ऐसी स्थिति में यह दायित्व देश के जागरूक नागरिकों एवं संवेदनशील साहित्यकारों के कंधों पर आ पड़ा है। पढ़ने हो कुछ ज्यादा। देश ही उनता को बस्तुस्थिति से अवगत करा कर उसे जागरूक बनाने का दायित्व अब उन्हीं पर है।

सूर्य पूर्व से निकलता है और पश्चिम में अस्त होता है-यह इस बात का संकेतक है कि पूर्व की संस्कृति प्रकाशमान है ऊर्ध्वगामी है, त्याग प्रधान है प्रेय से प्रेय की ओर बढ़ने वाली है तथा पश्चिम की संस्कृति अस्ताचलगामी है, भोगप्रधान है एवं उसकी दृष्टि प्रधानतः प्रेय पर केंद्रीत है। दुःख की बात तो यह है कि आज अधिकतर भारतवासी पाश्चात्य नग्नता की ओर आकर्षित हो रहें हैं और अपनी सभ्यता को भूलते जा रहे हैं। इस ओर संकेत करते हुए कवि श्री मुरारीलाल गुप्त 'गीतेश' ने अपनी एक कविता 'सोचो तो सही' में भारतवासियों को जागरूक बनाने की चेष्टा की है। अनके शब्दों में, 'सभ्यता के कपड़े/ उतरने का सिलसिला/ स्त्री की आँख से प्रारंभ होता है/ क्योंकि स्त्री की चमड़ी के सारे भेद/समझने के कपड़े। उतने का सिलसिला/ स्त्री की आँख से प्रारंभ होता है। क्योंकि स्त्री की चमड़ी के सारे भेद/ समझने की बलातकृत इच्छा/ क्षण में सबकुछ/ योग्य लेने की लालसा/ बना रही है आदमी को/ पूर्व-मुखी से पश्चिम-मुखी/ जहाँ हर दिन/ अस्त होता है सूरज।/ अस्त होना चाहते हो। क्या?/सूर्य के वंशन/ दे सको तो/ अपने आप को जवाब दो।' (ओ मेरे बच्चे! पृ० 29) योगप्रधान संस्कृति का अंधानुकरण और उसकी ओर हमारी अंधी दौड़ हमें निश्चय ही अस्ताचलगामी बना देगी, जो चिंत्य ही नहीं, चिंतनीय भी है।

श्री मोहन कुमार डहेरिया के कविता-संकलन 'उनका बोलना' की कुछ कविताओं में पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव एवं मूल्य विघटन पर चिंता व्यक्त की गयी है। सांस्कृतिक मूल्यों की अपेक्षा विदेशी मुद्राओं के प्रति भारतीयों की बढ़ती लालसा पर कवि ने 'घेरा' शीर्षक कविता में इन शब्दों में व्यंग्य किया है- 'हो ही लुका था सिद्ध/ प्रकृति से वही है मनुष्यों की जरूरत/ आत्मा से ऊँचा मशीनों का कद/संस्कृति से मूल्यवान हैं विदेशी मुद्राएँ'। (उनका बोलना पृ० 12)निःसंदेह, आत्मा को बेच कर, आत्मा की आवाज की आनयुनीकर व्यक्ति दान-संपदा का क्रीत दास हो गया है। 'परिवेश' में श्री राम सेवक सोनी 'प्रकाश', 'गीत-संपदा' में श्री राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर', 'गाजो कि जिये जीवन' में श्री चन्द्रसेन विराट, 'निर्माण का सत्य' में डॉ० सुन्दरलाल कथूरिया, 'भीड़ में सब से अलग' में श्री ज़हीर कुरेशी, 'लहरों के सर्वदंश' में डॉ० इसाक 'अश्क', महाबली छत्रसाल' में डॉ० कृष्ण गोपाल मिश्र आदि ने अपसंस्कृति का निषेध कर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक मानय-मूल्यों का पुरजोर समर्थन किया है। भारत राष्ट्र की वर्तमान चिंताओं के प्रति ये कवि तो सजग और सचेत हैं ही, अन्य अनेक कवि भी हैं जो भारत में पनपती नपुंसक संस्कृति का विरोध कर रहे हैं।

संपर्क: प्रो० एवं पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग, भावनगर यूनिवर्सिटी, भावनगर (गुजरात)
बी-3/79, जनकपुरी, नई दिल्ली-110058

कृष्णा सोबती को व्यास सम्मान

के०के० बिड़ला फाउंडेशन द्वारा वर्ष 2007 के लिए प्रख्यात लेखिका कृष्णा सोबती को उनके उपन्यास 'समय सरगम' के लिए व्यास सम्मान से सम्मानित किया गया। 83 वर्षीय सोबती को इस सम्मान में पुरस्कार के रूप में ढाई लाख रुपए, प्रशस्ति पत्र तथा स्मृति चिन्ह प्रदान किया गया।

●

नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ

पटना हड्डी एवं रीढ़ रोग अस्पताल प्रा.लि.

Patna Bone & Spine Hospital Pvt. Ltd.

A Centre Dedicated to Advanced Care of Bone & Spine Surgery Only

1. टूटी हड्डियों को कम्प्यूट्रीकृत एक्सरे (IIT) के द्वारा बैठाने की सुविधा।
2. हाथ/पाँव की सभी हड्डियों के टूट बिना प्लास्टर, बिना ज्यादा चीर-फाड़ के क्लोज्ड इन्टर लौकिंग नेल (Close Interlocking Nail) द्वारा इलाज, ताकि मरीज तुरन्त चल सके।
3. छोटे छिद्र द्वारा (Arthroscopic) घुटने के अन्दर की खराबियों का इलाज।
4. जन्मजात, पोलियो, चोट के बाद टेढ़ी-मेढ़ी हड्डियों का इलिजारोव (Ilizarov) तकनीक द्वारा इलाज।
5. रीढ़ (गर्दन समेत) की हड्डियों एवं नस का ऑपरेशन, छोटे छिद्र (Microdiscectomy) द्वारा डिस्क प्रोलैप्स का ऑपरेशन।
6. रीढ़ की चोट की सम्पूर्ण एवं विशिष्ट चिकित्सा।
7. पूर्ण जोड़ प्रत्यावर्तन (Total Joint Replacement)।
8. वास्कुलर, न्यूरो, प्लास्टिक, फेसियोमैक्जिलरी, माइक्रो सर्जरी के विशेषज्ञों द्वारा एक दल के रूप में बहुअंगीय (Polytrauma) कठिन चोटों का इलाज।
9. हृदय, न्यूरो, छाती के औषधि विशेषज्ञों की देख-रेख।

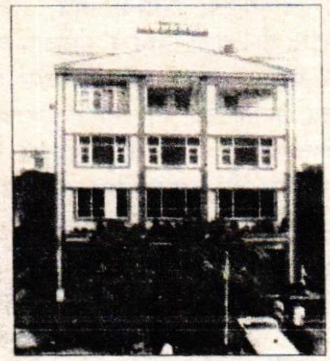

Dr. Vishvendra Kumar Sinha
M.B.B.S. (Pat.), D. orth. (Pat.) M.S. (orth.), FICS (USA) Ph.D. (orth.)

H-3, Doctors Colony, Kankarbagh, PATNA-800 020 Ph. : 2361180

एच.-3, डॉक्टर्स कॉलोनी, कंकड़बाग, पटना-800 020. फोन : 2361180

With Best compliments from :

M/s. Shiv Construction Co.

GOVT. APPROVED

S

41-A, NEW GOBINDPURA, DELHI-110051

TEL. : 22045577, 220111064

22055107

बलात्कार : महिलाएँ स्वयं भी जिम्मेदार

❍ डॉ० हितेश कुमार शर्मा

वर्तमान समय में बलात्कार और व्यभिचार की घटनाएँ इतनी बढ़ गई हैं कि प्रत्येक दैनिक समाचार पत्र में किसी न किसी महिला के साथ बलात्कार अथवा व्यभिचार की घटना सामने आ जाती है। राह चलते लड़कियों को छेड़ना, अकेली महिला के घर में दीवार पार करके कूद जाना और दुष्कर्म का प्रयास करना। चलती बस में अकेली महिला के साथ ड्राइवर और कन्डक्टर द्वारा बलात्कार का प्रयास। कॉलेज के छात्रावासों में शोर। यह सभी कुछ वर्तमान युग की देन है। आज के अखबार में लिखा है कि कुंवारी लड़कियों के गर्भपात का प्रतिशत बढ़ गया है। अपहरण एक आम बात हो गयी है कि लड़की का अपहरण करना उसके साथ सामूहिक दुष्कर्म करना और फिर या तो हत्या कर देना या जान से मारने की धमकी देकर छोड़ना रोज का मुख्य समाचार बन गया है। बुद्धिजीवियों ने अवश्य ही सोचा होगा, किंतु लिखने का साहस नहीं कर सके, मंच से बोलने का साहस नहीं कर सके कि इसके लिए कौन जिम्मेदार है। महिलाओं के साथ जो बलात्कार-व्यभिचार-अपहरण-हत्या की घटनाएँ बढ़ गई हैं इन सबका कारण क्या है।

इसके बहुत से कारण हैं, लेकिन प्रमुख कारण स्वयं महिलाएँ हैं। यदि आप गौर से देखें तो एक भरी-पूरी लड़की को आप अधिक देर तक नहीं देख सकते, खुद ही नजर झुका लेगें इसका कारण उनकी वेशभूषा है, उनकी पोशाक है। आज लड़की ऐसे कपड़े पहनती है जिसमें से उसके बदन का एक-एक हिस्सा एक-एक उभार स्पष्ट नजर आता है। जीन्स पहनकर चलने वाली लड़की की कमर की ओर देखने से सज्जन आदमी के मन में भी वितृष्णा होती है और दुष्ट आदमी के मन में काम वासना उत्पन्न होती है। यही स्थिति वक्षस्थल की है चुस्त टॉपलेस ब्लाउज पहनकर, जींस पहनकर लड़की बदन का कौन सा हिस्सा छिपाती है यह उसको पता नहीं चलता जबकि वास्तव में यदि देखा जाए, तो बदन का हर हिस्सा नंगा-सा प्रतीत होता है। ऐसी लड़की को देखकर दुष्ट मनुष्य जिनकी संख्या वर्तमान में अधिक है कामरोग से ग्रसित हो जाते हैं और यह रोग पागलपन की हद तक बढ़ जाता है। परिणाम क्या होता है कि वह व्यक्ति उस लड़की को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक प्रकार का रास्ता अख्तियार करता है। साम-दाम-दण्ड-भेद स्पष्ट रूप से अपनाए जाते हैं। लड़की की पीछा किया जाता है पीछा करना और भी खतरनाक होता है। यह रोग को बढ़ाता है। यदि व्यक्ति को सफलता मिल गई, तो सहभागिता से, बलात् , पैसे के बल पर अथवा अपहरण उद्योग के माध्यम से यौनाचार और सामूहिक बलात्कार जैसी घटनाएँ होती हैं। जब तक लड़कियों के कपड़े नग्नता को ढकने वाले नहीं होंगे तबतक लड़कियों का यही हाल होगा। या तो सहमति से बर्बाद होंगी अथवा तेजाब का शिकार होंगी। माता-पिता स्वयं अपनी लड़कियों को लाकर ऐसे कपड़े देते हैं जिनसे उनके शरीर की

नग्नता ढकती नहीं, बल्कि उघड़ती है और यही कारण है कि बलात्कार और व्यभिचार बढ़ रहा है।

युवक-युवतियों की सह शिक्षा भी इसके लिए दोषी है। पुरुष की प्रकृति में स्त्रियों की ओर आकर्षित होने की भावना प्रधान है और यही कारण है कि प्रत्येक पुरुष स्त्री की ओर आकर्षित होता है जबकि स्त्री इतनी सहजता से आकर्षित नहीं होती। सह शिक्षा में यह आसानी से संभव होता है। शौचालय में जाकर गंदे-गंदे वाक्य लिख देना भी इसका एक हिस्सा है प्रेम प्रदर्शन के तथा पत्र आदान-प्रदान के बहुत से अवसर सह शिक्षा के साथ उपलब्ध होते हैं। परिणाम भयंकर हैं और अब तो सोने में सुहागा हो गया है सह शिक्षा के साथ यौन शिक्षा भी पढ़ाई जाने लगी है अर्थात् कोकशास्त्र और कामशास्त्र का ज्ञान भी दिया जा रहा है। यही कारण है कि कुंवारी कन्याओं के गर्भपात की संख्या बढ़ रही है। विकृत मस्तिष्क के व्यक्ति ऐसी-ऐसी योजनाएँ बनाते हैं जिनसे लड़कियाँ और स्त्रियाँ असुरक्षित होती जाती हैं और आसानी से उनके चंगुल में फँस जाती हैं।

महिला आरक्षण भी बलात्कार का एक सशक्त माध्यम है। पुलिस में आरक्षण, नौकरियों में आरक्षण, विधानसभा और संसद में आरक्षण। परिणाम घर-परिवारों का विघटन और बच्चों का बिगड़ जाना। जब माँ पुलिस की वर्दी पहनकर अपने 20 साल के पुत्र के सामने से गुजरती है तो पुत्र उस चुस्त-दुरूस्त वर्दी में अपनी माँ को देखकर शर्म से सिर झुका लेता है तथा अधिकारी उस वर्दी को अच्छी तरह से निरीक्षण करके और चुस्त बनाने का निर्देश देते हैं ताकि बदन कपड़ा पहने हुए भी नंगा दिखाई दे। आरक्षण के कारण ही सरकारी नौकरियों में और विधानसभा और संसद में महत्त्वाकांक्षी युवतियाँ प्रवेश पा जाती हैं अथवा प्रवेश के लिए प्रयत्न करती है। परिणाम होता है कविता, सविता, मधुमिता जैसे काण्ड। अपहरण व्यभिचार, गर्भपात और हत्या महत्त्वाकांक्षी महिलाओं की परिणति बन जाती है। महत्त्वाकांक्षाओं के नाम पर माँ-बाप भी बच्चों पर प्रतिबंध नहीं लगाते और उन्हें स्वच्छंदता से उड़ने की छूट दे देते हैं। परिणामस्वरूप कुंवारी लड़कियाँ अपने बॉस के साथ, नेताजी के साथ अक्सर समय-बेसमय और शहरों में घूमती मिल जाती हैं। वायुयान सर्विस में तो परिचारिकाएँ कुंवारी ही ली जाती हैं। वायुयान में शराब का प्रयोग खुलेआम होता है। दूसरे शहरों में जहाँ पाश्चात्य सभ्यता में सहमति से किया गया यौनाचार जुर्म नहीं है उस रंग में जब भारतीय लड़की अपने सहयोगी पायलट के साथ रात्रि क्लब में जाती है तब परिणाम क्या होता है सोचकर भी घिन्न आती है। महिला आरक्षण के अंतर्गत महिला ग्राम प्रधान निर्वाचित हुई हैं, महिला सदस्याएँ निर्वाचित हुई हैं, अधिकांश अनपढ़ हैं और उनके पति ही उनका काम देखते हैं। स्त्रियों के बीच में यदि पुरुष अपनी स्त्रियों की

ओर से काम देखेगा तो अन्य स्त्रियों को देखकर उस पर काम का आक्रमण होना अवश्यंभावी है।

सामाजिक वातावरण कुछ ऐसा हो गया है कि प्रत्येक व्यक्ति भौतिक सुख चाहता है। गर्म पानी के लिए केवल स्विच दबाना चाहता है और गीजर से पानी गर्म चाहता है, कमरे में लेटकर टीवी देखना चाहता है, बिजली भागने पर इनवर्टर चाहता है, कार्यालय में कार्य करने को कम्प्यूटर चाहता है इस प्रकार वह इस दौर में हर प्रकार से पैसा कमाना चाहता है। जो लड़कियाँ अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी होती हैं और विवशता के कारण अथपवा स्वछंदता के कारण वैवाहिक बंधन में नहीं बँधती वह उपरोक्त सभी सुविधाओं के लिए क्या कुछ नहीं त्याग देतीं। गौर से देखिए और झाँककर देखिए, तो सुविधा शुल्क का प्रचलन इतना बढ़ गया है कि व्यक्ति जरूरतमंद स्त्रियों पर बेतादाद धन व्यय करने को तत्पर रहता है और किसी भी प्रकार से उस युवती को हासिल करना चाहता है जो उससे कुछ हासिल करना चाहती है। इस प्रकार का आदान-प्रदान भी कभी-कभी जानलेवा हो जाता है। जिस घर में रिश्वत/सुविधा शुल्क का आवागमन बढ़ जाता है वहाँ लड़कियाँ स्वछंद हो जाती हैं, लड़के निर्द्वंद्व हो जाते हैं, माएँ किटी पार्टी में व्यस्त हो जाती हैं और पति, पिता अथवा भाई काकटेल पार्टियों में व्यस्त हो जाते हैं। प्रत्येक प्रकार का पर्दा समाप्त हो जाता है और कहीं-कहीं बहन-भाई भी उस मर्यादा को तोड़ देते हैं, जो मर्यादा उनक बीच रहनी चाहिए। सुविधा शुल्क के प्रचलन से शराब का प्रचलन भी बढ़ा है। फलस्वरूप कई पिताओं के मुँह काले हुए हैं और अख़बार में उनकी घिनौनी हरकत छपी है।

बेरोज़गारी भी इस प्रकार के अपहरण, बलात्कार और व्यभिचार की दोषी है। बेरोजगार महिला विवाह नहीं करती और अविवाहित महिला क्या करती है यह वह भी नहीं बता सकती। बेरोजगार व्यक्ति कुंठाग्रस्त हो जाता है, क्योंकि उसका विवाह नहीं होता, उसकी इच्छाएँ पूरी नहीं होतीं। फलस्वरूप वह ऐसे रास्ते ढूँढ़ने लगता है जहाँ उसे शराब, आतंक, लूटमार तथा डकैती आदि का प्रशिक्षण मिलता हैं। कुंठा दूर करने के लिए वह शराब पीता है और शराब पीने से वासना जाग्रत होती है और वासना जाग्रत होने से उस पर पागलपन अथवा हीन भावना का दौरा पड़ता है और इस प्रकार का दौरा ख़राब होता है। आदमी कुछ भी कर गुजरता है तथा असफल होने पर प्रतिशोध की भावना उसके अंदर बढ़ जाती है जिससे वह प्रेमिका पर तेजाब फेंकने जैसी घटनाएँ, सड़क पर चाकू मारकर हत्या कर देने की घटनाएँ और घर में घुसकर हत्या कर देने आदि घटनाएँ अंजाम दे देता है। युवकों की बेरोजगारी सरकार द्वारा बनाई हुई है। पिछले दिनों अखबार में पढ़ा था कि रेलवे में डेढ़ लाख रिक्तियाँ रिक्त हैं। न्यायालयों में, कार्यालयों में, डाकघरों में, अस्पतालों में यातायात में, कहीं भी यदि आँकड़े एकत्रित किए गए, तो करोड़ों पद रिक्त पड़े हुए हैं, क्योंकि बगैर सुविधा शुल्क का कोई काम अब नहीं होता है इसलिए यह रिक्त पड़े हुए पद भी नहीं भरे जा रहे हैं। वैसे भी बेरोज़गारी दूर करने के लिए सेवानिवृत्त व्यक्तियों की पुनर्नियुक्तियाँ नहीं होनी चाहिए। पति-पत्नी में से किसी एक को नौकरी देनी चाहिए। परिवार में यदि चार युवक हैं तो उनमें भी दो को नौकरी दी जानी चाहिए दो को नहीं। जो कंपनियाँ महिलाओं को विशेषकर कुंवारी लड़कियों को स्वागताधिकारी की नियुक्ति अपने संस्थान में देते हैं उस पर रोक लगनी चाहिए। वायुयान की परिचारिकाएँ भी विवाहित ही होनी चाहिए। अविवाहित महिला के चाल-चलन की खुफिया जाँच करायी जानी चाहिए।

कुछ महिलाएँ शौक के कारण और कुछ विवशता के कारण ऐसा कार्य करने को तैयार हो जाती हैं, जो पुरुषों को बढ़ावा देने वाला होता है। पुराने जमाने में महिलाएँ सिर ढकती थीं, पूरी आस्तीन का ब्लाउज पहनती थीं और ऐसे कपड़े पहनती थीं जिसमें उनके शरीर का कोई भाग दिखाई न दे, केवल हाथ-पांव की अँगुलियाँ अथवा चेहरे का कुछ भाग ही दिखाई देता था। ऐसी पर्दा नशीन स्त्री को देखकर किसी भी व्यक्ति में काम वासना नहीं, बल्कि सद्भावना उत्पन्न होती है और वह श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता है, किंतु आज की अर्द्धनग्न युवती पुरुषों को आकृष्ट करती है तथा उनको छेड़छाड़ के लिए निमंत्रित करती है जिसका फल समाज को भोगना पड़ रहा है। दिल्ली में जितनी बलात्कार की घटनाएँ होती हैं उस सब का कारण अधनंगी पोशाक, चुस्त कपड़े, सह शिक्षा, महिला आरक्षण और यौन शिक्षा उत्तरदायी है। गाँव में आज भी ऐसी घटनाएँ कम होती हैं पहले बिल्कुल नहीं होती थी, लेकिन सिनेमा और टीवी के कारण इन घटनाओं की पुनरावृत्ति होने लगी है और उत्तेजक नृत्य, शराब का प्रचलन और अर्द्धनग्न कपड़ों में दौड़ती-भागती अभिनेत्रियों को देखकर पुरुष बेचारा क्या करें। यदि वह नपुंसक नहीं है तो वह सब दृश्य उसके पुरुषत्त्व को चुनौती देने वाले हैं। और चुनौती कोई भी अनदेखी नहीं कर सकता। परिणाम क्या होता है कि वह चुनौती कुछ लोगों के लिए शौक पूरे करने का माध्यम बन जाती है और कुछ लड़कियों का अपहरण करके उनकी हत्या कर दी जाती है।

यदि आप देखें तो पुरुषों को दुष्कर्मों के लिए उकसाने में महिलाओं का बहुत बड़ा हाथ है। कार्यालय में जो स्वागत करने के लिए महिला कर्मी रखी जाती है उससे लेकर संसद तक महिला आरक्षण के अंतर्गत जो महिलाएँ रख ली गई हैं उन सब की कोई आवश्यकता नहीं थी। पुराने समय में नियमानुसार महिला घर के कामकाज देखती थी और पुरुष घर के बाहर की जिम्मेदारी उठाता था। जब से इस नियम में बदलाव आया है तभी से सामाजिक कुरीतियों की जड़ें मजबूत हुई हैं। पता नहीं कब और किस प्रकार बलात्कार की घटनाओं, महिलाओं का अपहरण और हत्या जैसे घिनोने कार्य से छुटकारा मिलेगा। आवश्यकता है महिलाओं की पोशाक में आमूल-चूल परिवर्तन करने की, जिससे उनका बदन कपड़ों से बाहर झाँकता प्रतीत न हो। पुरुष अपने आप पर नियंत्रण कर सकता है, किंतु यदि खुलेआम निमंत्रण मिले तो उसे एक चुनौती सी लगती है और चुनौती स्वीकार करना पुरुष की आदत होती है।

हमें ध्यान देना होगा और महिलाओं को अपने आपको बचाने के लिए महिला आरक्षण, महिला जागरण जैसे नारों में फंसकर घर की चाहरदीवारी त्यागकर बाहर आने का लालच छोड़ना होगा और फिर पुराने तरह के कपड़े जिससे बदन ढका रहे पहनने होंगे अन्यथा यह रोग बढ़ता जाएगा और इलाज मुश्किल हो जाएगा। वास्तव में विकृत मस्तिष्क और गंदे विचारोंवाले व्यक्ति महिलाओं को घर से बाहर निकलने, काम करने, पैसे कमाने और महत्त्वाकांक्षा पूरी करने के लिए राजनीतिक संस्थाओं में सम्मिलित होने के लिए उकसाते हैं जिससे उन्हें अपने आसपास मनोरंजन का साधन उपलब्ध रहे और वातावरण मन लुभाने वाला हो। स्त्रियाँ यदि अपने ऊपर अंकुश नहीं लगाएँगी, तो बचाव मुश्किल है।

संपर्क : गणपति काम्प्लैक्स, सिविल लाइन्स, बिजनौर -246701 (उ.प्र.)

छूटता जा रहा है आत्मीय संबंधों से बना अतीत

❍ सिद्धेश्वर

दुनिया भर में आर्थिक विकास की गति कई गुणा बढ़ गई है। मगर इस दौर में सिमटते रिश्तों, टूटते परिवेश और बदलते सामाजिक मूल्यों ने कभी परिवार की आधारशिला रहे बुजुर्गों को समस्या बना दिया है और आज यह समस्या एक सामाजिक चुनौती के रुप में हमारे सामने खड़ी है। तेजी से बढ़ती आबादी और वैश्विक परिप्रेक्ष्य में वृद्धावस्था क्या मानवता के लिए आज बड़ी चुनौती नहीं बनती जा रही है?

समाज में बुजुर्गों की उपेक्षा से उभरी चुनौतियों का सामना तभी किया जा सकता है जब युवा बुजर्गों का आदर करने की परंपरा को आत्मसात करेंगे। किसी भी समस्या से मुक्ति तभी मिल सकती है जब उसकी जड़ तक पहुँचा जाए। हमारे देश की परंपराओं और संस्कृति में बुजुर्गों को सम्मान देने व उनकी सलाह को आत्मसात करने के उदाहरण भरे पड़े हैं। ऐसे में यह देखना होगा कि किस 'अपसंस्कृति' के वशीभूत होकर हम बुजुर्गों को समस्या मान बैठे हैं? दरअसल, जिस तेजी से नवधनाढ्य समाज उभरा है उसमें परिवार का जनतंत्रीकरण ज़रूरी है तभी इस समस्या से बहुत हद तक मुक्ति मिल सकती है। इस समस्या के निदान के लिए समाज के प्रबुद्ध लोगों और छात्र-छात्राओं को एक मंच पर आगे आने की जरुरत है।

मौजूदा दौर के परिवार में माँ-बाप, भाई-बहन, पिता-पुत्री, मित्र आदि के जितने भी सुदृढ़ रिश्ते हो सकते थे, उन सबके संबंध में हमारी सोच और चिंतन प्रक्रिया में एक बड़ा भारी अंतर दिखाई देता है। मानवीय संवेदना पर अर्थ का स्वार्थ हावी होकर बहुत सारे आत्मिक संबंधों को बेमानी या बेमतलब का बोझ ढोने की रस्म बना रहा है। महानगरों में आ जाने या बसने वाले लोग तो नातों-रिश्तों से दूर होकर बेगाने वातावरण में रहते हैं। उन्हें जीने की होड़ करनी है, आगे बढ़ना है। आत्मीय संबंधों से बना अतीत छूट चुका है। झपटमार वातावरण में उनका वर्तमान उलझा हुआ है खुशामद और सपने के उधेड़बुन में। जबतक वे इस वातावरण का अंग नहीं बनते, संघर्ष की जिंदगी जीते हैं या संबंधों-संघर्षों को जीवन-मूल्य की तरह बनाए रहते हैं। जैसे-जैसे संबंधों पर सफलता हावी होती जाती है, वैसे-वैसे उनके व्यक्तित्व पर अहंकार भी होता जाता है। महानगर में दोनों बातों के लिए भरपूर मौके हैं। झोपड़पट्टी की तिलझन भरी कड़वाहट है और दूरदर्शन की दमकती हुई खुशखबरी भी। लेकिन महानगर से दूर, गाँव-कस्बे के लोग आज

भी संबंधों की आत्मीयता से बहुत कुछ भीगे हुए हैं। महानगरीय होड़ा-होड़ी और सपने वहाँ भी पहुँचे हैं, मगर इस झोंके के सामने संबंधों की मजबूत जमीन पर खड़े लोग अत्यंत सशक्त अनुभवों और संवेदनाओं से रिश्तों को बरकरार रखे रह रहे हैं।

दरअसल, वर्तमान दौर की जटिलता यह है कि जो दुश्मन है, वह निराकार रहता है और जो आत्मीय है वह शत्रु दिखता है। गाँव-क़स्बे में रहने वाले लोग अपने अनुभव को अपने सामाजिक संघर्ष में पहचानने के नाते आत्म विज्ञापन से दूर हैं। यह एक अच्छी और प्रेरणाप्रद बात है। आज के महानगरीय वातावरण में इस बात का नितांत अभाव है।

भारत में जिस प्रकार बुजुर्गों की संख्या लगातार तेजी से बढ़ती जा रही है सरकार भी इनकी समस्याओं को लेकर चिंतित दिखाई दे रही है। कहा गया है कि सन 2016 तक वृद्धों की संख्या इस देश में 11 करोड़ 30 लाख तक पहुँचने का अनुमान है। सरकार यह महसूस करने लगी है कि एकल परिवारों का चलन बढ़ने से बुजुर्गों की देखभाल ठीक से नहीं हो पा रही है। इसके लिए सरकार ने आयुर्वेद, सिद्ध, यूनानी और होम्योपैथी जैसी चिकित्सा पद्धतियों से इलाज की व्यवस्था के लिए एक अभियान शुरु किया है जिसके लिए सरकार की ओर से 120 करोड़ रुपए ख़र्च करेगी ताकि देश के 208 जिला अस्पतालों में आयुष की शाखा से उपचार हो सके।

रिश्तों को अहमियत देने वाले समाज में सभी रिश्ते बेमानी होते जा रहे हैं। यहाँ तक कि पवित्र रिश्तों को बलि चढ़ाने में भी व्यक्ति को अब कोई गुरेज नहीं है, किंतु कीचड़ में पत्थर मारने से उसका छीटा अपने ही दामन पर लगता है, यह सभी को याद रखना चाहिए। आज की नई पीढ़ी यदि अपने बुजुर्ग माता-पिता की देख रेख से कतराते हैं, तो स्वयं उन्हें कई मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। वैसे सच कहा जाए, तो बुजुर्गों को खुद अपनी जिंदगी के भरपूर जीने और हर दिन का दिल खोलकर स्वागत करना चाहिए। 85 वर्षीय सदाबहार फिल्म अभिनेता देवानंद का कहना है कि जिंदगी को पूर्णता में जीना चाहिए और ज़िंदगी द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों का नई ताकत से सामना करना चाहिए। यही नहीं, वे मानते हैं कि हमेशा युवा बने रहने के लिए खान-पान की आदतों तथा शारीरिक श्रम के मामलों में अनुशासित बने रहना काफी मददगार साबित होता है, लेकिन आपका नजरिया और सोच भी महत्त्वपूर्ण कारक होती है।

वैसे भी हमेशा आगे की सोचेंगे और

नई चीजों को सीखने के लिए बेताब होंगे, तो कभी आप पर उम्र कभी हावी नहीं होगी। भविष्य की योजनाएँ अपने पास सदैव तैयार रखने से भी बुजुर्ग व्यस्त रह सकते हैं।

हाल के दौर में तो यह भी देखने-सुनने को मिल रहा है कि बच्चों ने अपने माता-पिता की संपत्ति में अपने हक को माँगना अधिक तेजी से शुरु कर दिया है। इसकी वजह से घरों में कलह-क्लेश अधिक शुरु हो गए हैं। जाहिर है कि जब पानी सिर ऊपर से बह जाता है, तो माता-पिता भी सख़्त क़दम उठाते हुए अपने जिगर के टूकड़ों से नाता तोड़ लेते हैं। कई मामलों में अभिभावक इसलिए भी अपने बच्चों से नाता तोड़ रहे हैं, क्योंकि बच्चा किसी बुरी आदत यथा शराब पीने या जुआ खेलने में फंस जाता है, कई मर्तबा अभिभावक इसलिए भी अपनी संतान से नाता तोड़ लेते हैं, क्योंकि वह माँ-बाप की मर्जी के खिलाफ जाकर अपना विवाह कर लेती है। अब भी किसी दूसरे धर्म या जाति में शादी करने को प्राय: अभिभावक ठीक नहीं मानते।

बुजुर्ग परिवार के मज़बूत स्तंभ होते हैं। घर में बच्चों एवं बुज़ुर्गों को भी ज्यादा प्यार व सुरक्षा की ज़रूरत होती है। ये चीज़ें क़ानून से नहीं, बल्कि दिल के जुड़ने से मिलती हैं। जिस प्रकार एक बच्चा अपने परिवार के संरक्षण में जिंदगी का हर कदम आगे बढ़ाता है, उसी तरह बुजुर्ग भी परिवार के प्यार और विश्वास के साथ ही ख़ुशहाल जिंदगी जीते हैं। संयुक्त परिवार में सुरक्षा की बात नहीं होती थी, यह तो एकल परिवार के चलन से बुजुर्गों की सुरक्षा समस्या बन गई। दरअसल यह एक सामाजिक समस्या है, कानून के द्वारा यह संभव नहीं है। समाज का हर व्यक्ति अगर अपने पड़ोस के बुजुर्ग से दोस्ताना संबंध बना ले, तो सुरक्षा की समस्या अपने आप दूर हो जाएगी।

आखिरकार सरकार ने बुज़ुर्गो की सुधी लेते हुए देश भर के सरकारी अस्पतालों में प्रत्येक मंगलवार को ओपीडी में नि:शुल्क आयुर्वेद, होम्योपैथी और युनानी के डॉक्टरों से केवल बुज़ुर्गों का इलाज कराने की घोषणा की है। बुज़ुर्गों के इलाज के पूरे प्रबंध किए जाएँगे। बुज़ुर्गों की हर तरह की जाँच भी मुफ्त मिलेगी। देश में इस वक़्त चार करोड़ से अधिक बुजुर्ग है; मगर अनुमान लगाया जा रहा है कि अगले आठ-दस सालों में बुज़ुर्गों की संख्या तीन गूना से भी ज़्यादा बढ़ सकती है। इसके मद्दे नज़र आने वाले दिनों में बुज़ुर्गों का इलाज अपने आप में एक बड़ी समस्या होगी। सरकार ने शायद इस बात को भी समझा है कि बुज़ुर्गों को होने वाली कई बीमारियों का इलाज एलोपैथी में उपलब्ध नहीं है या फिर उसके दुष्प्रभाव ज्यादा हैं, मोटे तौर पर बुजुर्गों को होने वाली आठ से दस बीमारियों जिनमें मधुमेह, हृदय रोग, घुटने और पीठ के दर्द इत्यादि शामिल हैं। इस पर कैसे काम हो इसके लिए एक टास्क फोर्स के गठन की बात सरकार के विचाराधीन है जिसमें आयुष के साथ-साथ एलोपैथी के डॉक्टर और विशेषज्ञ होंगे।

ब्रिटेन और अमेरिका के अनुसंधान कर्त्ताओं ने 80 देशों के करीब 20 लाख से अधिक लोगों के आँकड़ों का अध्ययन करन के बाद यह निष्कर्ष निकाले हैं कि प्रौढ़ावस्था में भले ही व्यक्ति को अवसाद से गुजरना पड़े, मगर बचपन, युवावस्था सहित वृद्धावस्था में भी व्यक्ति के जीवन में खुशियाँ रहती हैं। प्रौढ़ावस्था में खासकर 44 साल की उम्र के आसपास लोग अवसाद महसूस करत हैं या इसकी संभावना रहती है, मगर खुशियों का समय शुरुआती और अंतिम पड़ाव में होता है। जबकि ठीक इसके विपरीत लोग उम्मीद करते हैं कि जैसे-जैसे वह मृत्यु के करीब जाएँगे खुशियाँ उनसे दूर होती जाएँगी।

डेली टेलीग्राफ में वारविक विश्वविधालय के प्रमुख अध्ययनकर्त्ता प्रो० ढंड्रयू ओसवाल्ड के हवाले से कहा गया है कि औसतन प्रौढ़ावस्था में एक सामान्य व्यक्ति को मानसिक समस्याओं से गुजरना पड़ता है। यह सब अचानक नहीं, बल्कि धीरे-धीरे होता है, लेकिन 70 की उम्र तक पहुँचते-पहुँचते लोग एकबार फिर 20 साल के युवा की तरह खुश और मानसिक रूप से स्वस्थ हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त लंदन के किंग्स कॉलेज के प्रो० टिम स्पेक्टर के अनुसार जो व्यस्क नियमित तौर पर कसरत या व्यायाम करते हैं वे अपनी ही उम्र के अन्य लोगों से कम उम्र के दिखते हैं, वैसे भी व्यायाम से शरीर की बीमारियों से लड़ने की ताकत में इजाफा होता है। इसके साथ यह भी सच है कि किसी व्यक्ति की ज़िंदगी में कंधों से जब ज़िम्मेदारियों का बोझ हट जाता है, तो बुज़ुर्गों के भीतर एक खालीपन का अहसास होता है और एक उदासीपन उत्पन्न हो जाती है, किंतु बहुत ऐसे बुज़ुर्ग हैं जिन्होंने इस खालीपन को अपने ऊपर हावी होने नहीं दिया। उन्होंने समाज का अपने खाली समय में अलग-लग रूप से सेवा प्रदान करना शुरू कर दिया। मेरा मानना है कि अगर दशा नहीं बदले, तो दिशा बदल लेनी चाहिए और दिशा बदलने में तथा समाज सेवा प्रदान करने में स्वाभिमान समझना चाहिए। इस तरह अपने ख़ालीपन को दूसरों को ख़ुशी देने व समय बिताने से आप स्वयं भी प्रसन्न रह सकते हैं और अवसाद से बच सकते हैं।

आधुनिक जीवन शैली के चक्कर में लोगों के जीवन में तनाव और अवसाद आना इसलिए स्वाभाविक है कि भौतिक साधनों की पूर्त्ति के लिए पैसा कमाना ही अब एक मात्र लक्ष्य बनता जा रहा है। पैसा कमाना अलग बात है, लेकिन पैसे के लिए अँधी दौड़ का परिवार के बिना क्या औचित्य है? कई बार तो ऐसा प्रतीत होता है कि लोग आपस में माता-पिता के साथ तो दूर, पति-पत्नी तथा बच्चों के लिए समय निकाल बातें करना, गप्पे मारना व हँसना भी भूलते जा रहे हैं। परस्पर दु:ख-दर्द व व्यक्तिगत भावनाएँ गौण हो गई हैं। सारा दिन गॉल्स, होटलों, पार्कों में मटरगश्ती के बाद रात को घर में गद्‌दों पर पासे पलटना अब जीवन में शुमार होता जा रहा है। जीवन की इस तेज दौड़ की वजह से न केवल आत्मीय संबंधों से बना अतीत छूटता जा रहा है, बल्कि स्वस्थ समाज की रचना में भी मुख्य बाधा उपस्थित है।

संपर्क : दृष्टि', यू-207, विकास मार्ग,
शकरपुर, दिल्ली-110092

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की अवधारणाः चुनौतियाँ और समाधान

○ डॉ० जय प्रकाश खरे

किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की विशेषता उसकी वाह्य सुंदरता में न होकर उसके सकारात्मक चिंतन में होती है। दरअसल प्रत्येक व्यक्ति अपने मस्तिष्क में उठ रहे विचारों का प्रतिबिंब होता है। विचार ही व्यक्ति की प्रेरणा-शक्ति होती है। जन्म से अँधे डॉ. जय प्रकाश खरे एक ऐसे ही प्रतिभा-संपन्न व्यक्ति हैं जिनकी जीवनाभूतियों, झंझावातों और तूफानों से भरी साँसों की बदौलत लोगों को प्रेरणा और प्रोत्साहन मिलता है, लोग खुश होते हैं, समाज महसूस कर विस्तार पाता है और जिनकी प्रेरणा लाती है उनको हर ज़ज्बा, प्रेम, निष्ठा और दायित्वबोध। राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित डॉ० खरे ने राजनीति शास्त्र और इतिहास में स्नातकोत्तर होने के बाद पीएच० डी० तथा डी-लिट् की उपाधि प्राप्त की तथा संप्रति राँची विश्वविद्यालय के मारवाड़ी महाविद्यालय, राँची में राजनीतिशास्त्र विभाग के व्याख्याता पद पर बड़ी ईमानदारी और जिम्मेदारी के साथ अपनी सेवाएँ देते हुए देश के ज्वलंत मुद्दों पर वे अपनी धारदार कलम चला रहे हैं और अपने राष्ट्रीय दायित्व का निर्वहन कर उदीयमान एवं अपंग प्रतिभाओं को प्रेरणा दे रहे हैं।

प्रस्तुत लेख के माध्यम से डॉ० खरे ने बड़े मार्मिक और विद्वतापूर्ण ढंग से भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए इसकी कुछ चुनौतियों और उनके समाधान पेश करने का प्रयास किया है, जो हमारे पाठकों के लिए लाभदायक होगा, ऐसा हमारा विश्वास है। विद्वान प्राध्यापक डॉ० खरे को इतने अच्छे, सारगर्भित एवं तथ्यपरक लेख के लिए हार्दिक साधुवाद।

○ संपादक

भारतीय संविधान के प्रस्तावना में सर्वप्रथम सामाजिक न्याय का उल्लेख किया गया है। न्याय में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक निर्देशक सिद्धांत वर्णित हैं, जिस प्रकार मोटरगाड़ी में दिशा नियंत्रक यंत्र होता है, ठीक उसी प्रकार संविधान के प्रस्तावना में न्याय को भी राष्ट्रीय जीवन के नियंत्रक के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की न तो कोई परिभाषा दी गई है और न ही इसकी व्याख्या की गई है, परंतु यदि संविधान को उसी समग्रता में अध्ययन किया जाए, तो सामाजिक न्याय की अवधारणा की यत्र-तत्र झलक दिखाई पड़ती है। उदाहरण स्वरूप संविधान की तृतीय भाग के मौलिक अधिकारों की सूची में समानता के अधिकार के साथ भेद-भाव के विरुद्ध अधिकार को लिया जा सकता है। स्वतंत्रता तथा जीवन का अधिकार एवं शोषण के विरुद्ध अधिकार भी सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने वाले मूल एवं प्रमुख अधिकार हैं।

कई शताब्दियों से भारत की सामाजिक व्यवस्था में असमानता रही है। मनु के कोड में एक उपमा दी गई है, जिसके कारण असमतल वर्ण व्यवस्था आज तक भारतीय समाज में बनी हुई है। मनु की यह व्याख्या आज भी सर्वविदित है-'ब्राह्मण मस्तिष्क से, क्षत्रिय बाहू से, वैश्य उदर से एवं शूद्र पैरों से उत्पन्न हुए हैं। मस्तिष्क शरीर के उच्च भाग में स्थित है और पैर शरीर के निम्न भाग में, इसलिए मस्तिष्क और पैर के आधार पर निर्मित सामाजिक व्यवस्था असमतल होगी। 'मनुस्मृति' की इस मनुवादी व्यवस्था को बड़ा ही सुंदर ढंग से खण्डन करते हुए कहा गया है- 'जन्मना जायते शुद्रा' अर्थात् जन्म से प्रत्येक मानव शूद्र ही होता है। जन्म पर आधारित यह वर्ण व्यवस्था कर्म को अस्वीकार कर समाज में अनेक प्रकार की सामाजिक बुराइयों एवं विकृत्तियों को जन्म दिया। परिणामस्वरूप भारतीय समाज सुविधाभोगी और सुविधाओं से वंचित एक ऐसी जड़वत् सामाजिक व्यवस्था बन गई, जो मानवीय मूल्यों को अस्वीकार करने वाली अन्याय, शोषण, अत्याचार, भेद-भाव, मानव स्वतंत्रता एवं अधिकारों का हनन करने वाली तथा सुविधासंपन्न लोगों के विशेषाधिकार की रक्षक बन गई।''

समाज में संपत्ति तथा साधन की विषमता सदा से रही है। एक ओर आसमान को स्पर्श करता हुआ ऊँच्च श्रृंग पर्वत, तो दूसरी ओर गहरी खाइयाँ हैं, (हिल्स एण्ड भैलिज) इसके कारण अन्य सामाजिक और व्यक्तिगत रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं। सामाजिक वातावरण दूषित हो जाते हैं। समाज में असंतोष तथा मानसिक तनाव भीषण रूप में प्रकट होते हैं। एक ओर राजकीय नियमों का उल्लंघन होता है, दूसरी ओर विभिन्न रूपों के जुलूस-धरणा, विद्रोह तथा तरह-तरह के सैनिक संगठन आदि उत्पन्न हो जाते हैं। उदाहरण के लिए बिहार और झारखण्ड राज्य में रणवीर सेना, लाल सेना, भूमि सेना, सनलाइट सेना तथा पिपुल्सवार ग्रूप एवं एम.सी.सी जैसी हिंसा पर उतारू संगठन को लिया जा सकता है।

मौलिक अधिकारों के अंतर्गत भारत के सभी नागरिकों को नियम एवं कानून के समक्ष समापन दर्जा दिया गया है, परंतु यह संविधान निर्माताओं के सद्इच्छा के प्रतीक मात्र हैं अथवा कोरा कागज मात्र हैं। अनुच्छेद 17 के अंतर्गत छूआ-छूत को अवैध घोषित किया गया है, परंतु सामाजिक स्थिति के कुछ अन्य पक्ष भी हैं, जैसे आर्थिक विषमता, नागरिक अधिकारों का हनन, मताधिकार का उपयोग बलपूर्वक नहीं करने देना, जाली मतदान, मतपत्रों की लूट, मत केंद्रों पर जबरन कब्जा, अग्नेयास्त्रों के सहारे जनता को धमकाना आदि कार्य सामाजिक न्याय को नकारने के अवैधानिक उपाय किये जाते हैं।

अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जन-जातियों के लिए संसदीय क्षेत्र आरक्षित हैं। सरकारी नौकरियाँ एवं शिक्षण संस्थाओं में भी प्रवेश आरक्षित हैं, परंतु न्यायालयों में आये हुए मुकदमें की अत्यधिक संख्याओं पर ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि विभिन्न अवैधानिक उपायों के द्वारा इन्हें भी अस्वीकारने के ढंग उजागर हुए हैं। उदाहरण स्वरूप आरक्षित पदों में उचित संख्या में उम्मीदवार नहीं मिलने के कारण उन पदों पर भी दूसरों को नियुक्त किया जाना तथा

स्कूल-कॉलेजों में भी कोटा के आधार पर प्रवेश दिया जाना प्रमुख हैं, जिसके कारण योग्य एवं निम्न वर्ग के उम्मीदवारों को छाँट दिया जाता है, 'मुक़दमें पर मुकदमें का मुक़दमा' निम्न-वर्गीय उम्मीदवार धनाभाव के कारण नहीं कर पाते हैं। यहाँ आकर सामाजिक न्याय की अवधारणा खोखली बनकर रह जाती है। मण्डल कमीशन के अंतर्गत पिछड़े वर्गों के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण का कोटा सन् 1989-90 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री विश्वाथ प्रताप सिंह द्वारा लागू करने का प्रयत्न किया गया, तो संपूर्ण भारतवर्ष में कटूता फैल गई थी। इस बात से सभी परिचित हैं। इस संदर्भ में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय से ही देश के कुछ सामाजिक सौहार्द कायम हो सकी। अंततोगत्वा भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री डॉ० मनमोहन सिंह की सरकार ने पिछड़ों के आरक्षण को ध्वनि मत से संसद से पारित करा दिया। इस संदर्भ में लेखक की उक्ति भी सर्वमान्य प्रतीत होती है कि अभी तक पिछड़ों के आरक्षण के संदर्भ में जितनी भी बाधाएँ एवं अड़चनें आईं, वह निरर्थक थीं। कारण स्पष्ट है, जिसे आप पढ़े-लिखे समाज पिछड़ी जाति की समझकर उनके प्रति हीन भावना रखते हैं, फिर जब पिछड़ों की आरक्षण की बात आती है, तो उन्हें ईर्ष्या और जलन क्यों होता है?

केंद्र तथा राज्य सरकारों द्वारा गरीबों की आर्थिक स्थिति एवं दशा सुधारने के लिए सामाजिक न्याय दिलाने का अथक प्रयास किया गया। भ्रष्टाचार एवं घोटालों की शिकार जनता भूखों तड़प रही हैं। धोती-साड़ी घोटाला, लाल राशन कार्ड घोटाला, दवा घोटाला, इंदिरा आवास के लिए उम्मीदवारों के चयन में पक्षपात, संचार माध्यमों, संसद तथा विधान सभाओं में आये दिन चर्चा एवं बहस के मुद्दे बन गये हैं। लोग उड़ीसा के काला हांडी तथा काशीपुर ब्लॉक में भूख से मर रहे हैं, जिसकी ओर सर्वोच्च न्यायालय ने भी केंद्र तथा राज्य सरकार को कई हिदायतें दी हैं। परंतु आज राजनीति इतनी संवेदनहीन हो गई है कि मानवता से जुड़े इस प्रश्न पर भी लोग राजनीति करने से तनिक भी बाज नहीं आते हैं। यह बात विशेष रुपेण ध्यान देने योग्य है कि संविधान के अनुच्छेद 21 में देश के नागरिकों के साथ व्यक्तियों को भी जीवन का अधिकार प्रदान किया गया है। हमारे नेता अपनी उपलब्धियों का बखान करते हुए तनिक भी नहीं थकते। आये दिन वह कहते हैं कि अनाज का सरकारी भण्डार छ: करोड़ टन से भी अधिक हो गया है, फिर भूख से निजात पाने के लिए लोगों को आम की गुठली खाकर मरने की नौवत क्यों आती है? इस प्रश्न का उत्तर एवं निराकरण व्यवस्था से जुड़े व्यक्तियों के पास नहीं है।

संविधान के नीति निर्देशक तत्त्वों में भी सामाजिक शोषण तथा कुप्रथाओं से मुक्ति की बातें कही गई हैं। उदाहरण स्वरूप मद निषेध, कुटीर उद्योगों का विकास तथा संरक्षण, स्त्री-पुरुषों को समान कार्यों के लिए समान पारिश्रमिक तथा वृद्धापेंशन एवं 14 वर्ष तक उम्र के बच्चों के लिए नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था का प्रावधान आदि। स्त्रियों एवं बच्चों को शोषण-मुक्त करने, गर्भवती महिलाओं के लिए भोजन, प्रसुति गृह तथा चिकित्सा की व्यवस्था आदि विषय उल्लेखनीय हैं। इन दिशाओं में कार्यक्रम अपनाये तथा चलाये जा रहे हैं, परंतु समस्याएँ इतनी विस्तृत और गहरी हैं कि उनका निदान सरकार के सीमित साधन और केवल सरकारी प्रयास के द्वारा संभव नहीं है।

उपर्युक्त प्रकरण में दो बातें महत्त्वपूर्ण हैं; जिनका उल्लेख करना लेखक की दृष्टि में अत्यंत आवश्यक प्रतीत होता है। प्रथम यह है कि भारत का संवैधानिक बनावट लोकतांत्रिक है। यह सर्वविदित है कि लोकतंत्र खरगोश की भाँति छलांग नहीं भर सकता है, वह तो कछुये की भाँति एवं गति से ही अपने कार्य को संपादन करता है। लोकतंत्र के तहत समाज के सभी-समुदाय एवं वर्गों के हितों को ध्यान में रखकर कार्य किया जाता है, तभी सामंजस्य की स्थापना संभव है।[2] भारतीय संविधान में हित समन्वय की अद्‌भुत क्षमता सन्निहित है। संविधान की इस प्रक्रिया में ज्वार-भाटा आते-जाते ही रहते हैं। वे बगैर किसी कौमा और पूर्ण विराम के बढ़ती हुई जनसंख्या सामाजिक न्याय को उपलब्ध कराने के मार्ग में सबसे बड़ी चुनौती है। सरकार तथा प्रशासन के कठिन एवं अथक प्रयास के बावजूद भी संविधान के प्रस्तावना में वर्णित एवं उल्लिखित मानवीय गरिमा को प्राप्त नहीं करने में बहुत हदतक यह बढ़ती हुई जनसंख्या भी बाधक सिद्ध होती है।

भारतीय समाज हजार साल के गुलामी की मानसिकता से आज भी पूर्णरूपेण मुक्त नहीं हुई है। उन्मुक्त वातावरण में भी हम अन्य नागरिकों के हक एवं अधिकारों को मान्यता न देकर उनकी सामाजिक एवं आर्थिक मुश्किलें बढ़ा रहे हैं। सरकारी नीतियों का भी विशेषकर आर्थिक क्षेत्र में अपनाई गई 90 के दशक की मुक्त अर्थ व्यवस्था की नीति जो अंतर राष्ट्रीय मुद्राकोष, विश्वबैंक, गैट और अब डब्ल्यू॰टी॰ओ॰ द्वारा संचालित नीतियाँ हैं, कमजोर एवं वंचित वर्गों के हितों की उपेक्षा ही की है। उत्तर प्रदेश में छ: प्रतिशत तक गरीबी रेखा के ऊपर आना इसका ज्वलंत उदाहरण है।[3] ग्लोबलाइजेशन की आड़ में हम उन्हीं नीतियों पर चलने के लिए विवश हैं, जो नीतियाँ ब्रिटिश राज में भारत में लागू थीं, जिसका घातक आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिणाम देश भुगत चुका है।''[4]

पेटेंट राइट, इंटलेक्चुवल प्रोपर्टी राइट की दुहाई देकर पश्चिमी राज्य भारत की समृद्ध जैब तथा वनस्पति पर अपना हक जताने लगे हैं। नीम, हल्दी, आंबला, यहाँ तक की विश्व प्रसिद्ध भारत की वासमती चावल पर भी अपना पेटेंट राइट का दावा कर रहे हैं। जिन संशोधित बीजों, टरमिनेटेड बीजों तथा कीटनाशकों का भारत में निर्यात कर पारंपरिक कृषि प्रणाली को ही जिसपर लगभग 70% लोगों का जीवन निर्भर हैं, जो अभी भी भारतीय अर्थ व्यवस्था की रीढ़ बनी हैं, उसे बर्बाद कर भारत में गरीबी का उन्मूलन करने में बाधक सिद्ध हो रहे हैं। राजनीतिक नेतृत्व भी इस कार्य में कम दोषी नहीं है। सामाजिक न्याय की दुहाई देने वाले राजनीतिक नेता और दल सामाजिक न्याय का नारा बनाकर सत्ता का सुख भोगने में व्यस्त हैं? सुरसा जैसी बढ़ रही और दीमक की भाँति समाज को खोखला करते हुए भ्रष्टाचार, सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने के मार्ग में गंभीर बाधा के कारण हैं। सामाजिक न्याय के महान् समर्थक राजनेता आकण्ठ भ्रष्टाचार में डूबे हैं। वेमेल राजनीति जोड़-तोड़कर सत्ता के खेल में संलग्न हैं। उनका सामाजिक न्याय के प्रति ऐसा व्यावहार सामाजिक न्याय का माखौल ही तो उड़ा रहा है।

आज उपभोक्तावाद की संस्कृति ने समाज में भौतिकवादी प्रवृत्तियों को बढ़ावा एवं जन्म दिया है। परिणामस्वरूप मानवीय

संवेदना का प्रथम शर्त सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना है, वह आज मरती जा रही है। लोगों की आज यह अवधारणा बन गई है- 'माई कम्जक्शन फस्ट डेबिल टेक हाईण्ड मोस्टा' यह विचारनीय प्रश्न है। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री का यह कथन- 'बढ़ती हुई आशाओं की क्रांति का लोगों ने गलत रूप में अर्थ लगाया है। हमारा समाज उपभोक्तावाद की अँधी दौड़ से अपने-आपको मुक्त कर सका तो संविधान में वर्णित एवं उल्लिखित सामाजिक न्याय नहीं, पुस्तकों एवं महफीलों में चर्चा से अधिक कुछ नहीं रह जाएगा। तत्पश्चात् गाँधीजी का सामाजिक न्याय से संबंधित भारतीय व्यवस्था मात्र स्वप्नलोक की वस्तु बनकर रह जाएगी। महात्मा गाँधी की इसी चिंता को रेखांकित करते हुए प्रख्यात समकालीन राजनीति विज्ञान के विद्वान रजनी कोठारी ने कहा है-'यदि समाज की प्रगति इसी रूप में जारी रही तो 20 प्रतिशत लोग सुख-सुविधा का भोग करेंगे और 80 प्रतिशत उनके भोग के साधन होंगे।''[5]

सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने में जितनी भी चुनौतियाँ हैं, उनका निराकरण संविधान के प्रावधानों को ईमानदारीपूर्वक लागू कर ही लोगों के लिए सुनिश्चित किया जा सकता है, संविधान में किये गये संशोधन निम्नवत् हैं-'जमीनदारी उन्मूलन के लिए पारित विभिन्न कानूनों को संविधान की नवीं अनुसूची में शामिल करना, संपत्ति का मूल अधिकार (अनुच्छेद 31) को 42 वें संशोधन के जरिये मूल अधिकार की सूची से हटाना आदि ऐसे कदम हैं; जो सामाजिक न्याय के मार्ग में संवैधानिक बाधा समझे जाते हैं। बैंकों का राष्ट्रीयकरण राजा-रजवाड़ों के पेंशन का अंत आदि ऐसे कार्य हैं, जो सामाजिक न्याय करने में श्रेष्ठ सिद्ध हुए हैं। सर्वोच्च न्यायालय का केशवानंद भारती के मामले में दिया गया यह निर्णय तर्कसंगत प्रतीत होता है- 'मूल अधिकारों समेत संविधान के किसी भी भाग में, वसर्ते की वह संविधान में संशोधन करने का अधिकार है। सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने में संविधान तथा संवैधानिक संस्थाओं की अहम् भूमिका होती है। यह आवश्यक रूप से हमें भूलना नहीं चाहिए- संवैधानिक एवं वैधानिक उपायों द्वारा ही लोगों को उन परिस्थितियों से मुक्ति मिलेगी, जिसे पाने या नहीं पाने पर मनुष्य का कोई बस था।''[6] अर्थात् लेखक के मतानुसार बिना सामाजिक न्याय एवं सोच में परिवर्तन लाये, एक स्वच्छ एवं पवित्र समाज की कल्पना बिल्कुल निरर्थक सिद्ध होगी, सिर्फ स्वप्न मात्र रह जाएगी। कारण स्पष्ट है, क्योंकि नफरत की बीज मानव मस्तिष्क में ही उत्पन्न होते हैं। इसलिए नफरत के इस पौधे को भारत की महान् मानवीय परंपराओं, संस्कारों एवं उचित शिक्षा के द्वारा ही समाप्त कर मनुष्य को सामाजिक बदलाव के लिए प्रेरित किया जा सकता है, जिससे सामाजिक न्याय का पक्ष सामाजिक स्तर पर निर्मित हो सके, तभी हम संविधान, कानून और सरकार के मुँहताज नहीं रहेंगे। आज ग्लोबलाइजेशन के इस दौड़ में सरकार स्वयं अपनी भूमिका कम कर रही है और निजी क्षेत्रों को प्रत्येक गतिविधि में आगे बढ़ाने का पक्षधर है। अत: अब हमें सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करने के लिए उन स्वयं सेवी और ग़ैर सरकारी संस्थाओं का भी सहयोग लेना होगा, जिनकी गतिविधियाँ सामाजिक न्याय को सहारा प्रदान करती है। वर्तमान में हमारा समाज आज बहुत-सी कुप्रथाओं का शिकार है, जैसे-दहेज प्रथा, यदाकदा सती होने की घटना, आये दिन कमोर वर्गों पर सामंती शक्तियों द्वारा अत्याचार एवं जुल्म, बालश्रम की समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या इत्यादि। इन समस्याओं पर काबू पाने के लिए हमें लोगों में जागृति फैलानी होगी। सामाजिक मूल्यों में हो रहे विघटन एवं ह्रास को लोगों में नैतिक चेतना को जगाकर खत्म करना होगा। 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करके बालश्रम पर काबू पाया जा सकता है। आज खुशी एवं हर्ष की बात यह है कि 93 वें संविधानिक संशोधन द्वारा प्राथमिक शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार बनाने का विधेयक संसद ने पारित कर एक नये इतिहास की स्थापना की है। मुझे उम्मीद और विश्वास दोनों है कि इस देश एवं समाज में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार होगा। सामाजिक न्याय का पक्ष और अधिक मजबूत होगा। समाज के शोषित एवं वंचित वर्ग के लोग आज तक सामाजिक अन्याय के शिकार रहें हैं, उन्हें त्राण मिलेगा। हाल के दशक में शोषित एवं वंचित लोगों में राजनीतिक चेतना का संचार हुआ है। उन्होंने आज अपने आपको एक शक्तिशाली राजनीतिक वर्ग के रूप में स्थापित किया है। आज वैसे नेताओं को सबक सिखाने की आवश्यकता है, जिन्होंने सत्ता प्राप्ति के लिए इन्हें वोट बैंक माने बैठे हैं।

राजनीतिक भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाकर ही सामाजिक न्याय को सही मायने में प्राप्त किया जा सकता है। इस कार्य के लिए जनमत राजनेताओं पर दबाव डालकर संसद में कई दशकों से लंबित लोकपाल विधेयक को पास कराने के लिए प्रेरत करें। हमारे देश में महिलाओं की आबादी लगभग 50 प्रतिशत है। महिलाओं के प्रति जो भेद-भाव है, उससे मुक्त करने के लिए स्त्री सशक्तिकरण (इमपावरमेण्ट ऑफ वोमेन) की आवश्यकता है। महिलाओं को संसद तथा विधान सभाओं में पंचायतों के समान 33 प्रतिशत आरक्षण प्रदान कर राजनीतिक परिवर्तन की शुरुआत हो सकती है। इससे समाज में सामाजिक न्याय मज़बूत होगी। यदि इन बातों पर ध्यान एवं अमल किया जाये तो भारत के ऋषि-मुनियों एवं महापुरुषों तथा देश के निर्माताओं का वह सपना साकार सिद्ध होगा, जिसमें समाज को हर प्रकार के भेद-भाव, अत्याचार, अन्याय एवं शोषण से मुक्त करने की बात कही गई है। इसके अंतर्गत एक ऐसे समाज की कल्पना की गई थी, जिसमें भारतीय दर्शन का यह मूलमंत्र ''सर्वे भवन्तु सुखीनः, सर्वे संतु निरामया:'' को चरितार्थ किया जा सकता है, तभी सबके लिए सामाजिक न्याय सुनिश्चित कर संविधान में अभिव्यक्त साामाजिक न्याय को वास्तविकता का जामा पहनाया जा सकता है, अन्यथा नहीं।

संदर्भ :

1. डॉ. रामशरण शर्मा, दी ओरिजन ऑफ सूरदास।
2. इण्डियज कॉंस्टिच्युशन इज द बैलेंस ऑफ इंटरेस्ट, लेखिका विथिका दत्ता, नालंदा प्रकाशन, कोलकात्ता।
3. पोभरटी लाइन इन यू.पी., रजनी कोठारी।
4. लेखक एस दत्ता, इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, मुंबई।
5. पोलिटिक्स ऑफ पोभरटी, रजनी कोठारी।
6. संयुक्त राष्ट्र संघ का चार्टर।

संपर्क : व्याख्याता, राजनीति शास्त्र विभाग, मारवाड़ी महाविद्यालय, राँची (झारखण्ड)

अहिंसक समाज-रचना के सूत्र

❍ डॉ० नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'

जब तक मनुज-मनुज का यह
सुख-भाग नहीं सम होगा,
शमित न होगा कोलाहल
संघर्ष नहीं कम होगा।

– रामधारी सिंह दिनकर,
(कुरूक्षेत्र)

समाज-रचना की बात कोई नई बात नहीं है। मनुष्य ने अपनी वन्य अवस्था से लेकर अब तक सभ्यता की जो यात्रा तय की है वह प्रकारांतर से समाज-रचना की ही खोज रही है। अनंतकाल से विश्व के प्राय: सभी देशों में दार्शनिक, चिंतक, समाजशास्त्री आदर्श समाज के सूत्र तलाशने में लगे रहे हैं। यूनानी, रोमन, चीन, भारत आदि देशों के अनेक दार्शनिकों ने अपने-अपने चिंतन के अनुसार समाज रचना के प्रारूप प्रस्तुत किया है। इन दार्शनिकों ने समाज-रचना के बारे में जो अपनी दृष्टियाँ हमें दीं, उनसे कालांतर में प्रत्येक देश में अपने अपने ढंग से समाज का स्वरूप निर्धारित होता रहा। पर, इतना तो मानना ही होगा कि कोई भी दृष्टि अंतिम दृष्टि नहीं कही जा सकती। दूर की बात न करके मार्क्स के चिंतन की बात करें। मार्क्स ने भौतिकवाद को केंद्र में रखकर जो बात कही, वह भी अधूरी ही रही, क्योंकि वह प्रयोग एक स्वस्थ समाज रचना का आधार नहीं बन सका। तुलसी ने 'रामचरित मानस' में जिस समाज-रचना के संदर्भ में, रामराज्य की कल्पना की वह काफी हद तक एक आदर्श समाज की भित्ति बन सकती थी। उल्लेखनीय है कि महात्मा गाँधो भी इसी 'राम राज्य' की अवधारणा को अपने देश में रूपायित करना चाहते थे। पर ऐसा संभव न हो सका। यद्यपि कुछ लोग 'राम राज्य' की कल्पना को एक 'यूटोपिया' मानते हैं पर इतना अवश्य है कि इस चिंतन के पीछे एक स्वस्थ समाज रचना के सूत्र छिपे हुए हैं। बहरहाल, यहाँ पर विचारणीय यह है कि आज की परिस्थितियों में जहाँ भौतिकता, उपभोक्तावाद, हिंसा-प्रतिहिंसा जैसी आसुरी प्रवृत्तियाँ अपनी चरमसीमा पर हैं वहाँ एक अहिंसक समाज की रचना कैसे हो। स्थितियाँ अत्यंत विकट हैं और लगता है कि हिंसा का यह ताण्डव उत्तरोत्तर तीव्र ही होता जा रहा है। भविष्य में मनुज हिंसा करते करते कहाँ पहुँच जाएगा, यह कहना बहुत कठिन है। हाँ, यदि हमें मानव जाति को संहार से बचाना है, तो अहिंसक-समाज का कोई विकल्प नहीं हो सकता। इस प्रकार के समाज की रचना के आधारभूत सूत्रों की तलाश आज के समय की बहुत बड़ी जरूरत है।

जब हम एक अहिंसक समाज रचना की बात करते हैं तो हमें यह सोचना पड़ेगा कि हिंसा का उद्गम कैसे होता है। इस विषय में बहुत में बहुत कुछ बोला, लिखा पढ़ा जाता रहा है इसलिए हिंसा का मूल क्या है इस पर विस्तार में न जाकर यह कहना संभवत: ठीक होगा कि मनुष्य को परिग्रह-प्रवृत्ति ही हिंसा की जननी है। परिग्रह प्रवृत्ति में भोगवाद, स्वार्थपरता, व्यष्टि का समष्टि पर हावी हो जाना-सभी कुछ आ जाता है। यहाँ यह कहना उचित होगा कि कोई भी समाज सर्वथा हिंसा मुक्त नहीं हो सकता। अहिंसा के साथ हिंसा भी रहेगी। पर एक अहिंसक समाज में अहिंसक तत्त्वों की प्रधानता रहेगी जिसके कारण हिंसा निस्तेज होकर अपने आप न्यूनतम होती जायेगी। जब अहिंसक समाज में रहने वाले अहिंसा में प्रतिष्ठित हो जाएँगे तो वैर कहाँ होगा, जब वैर ही न होगा तो हिंसा क्यों होगी। महर्षि पतंजलि की बात इस बात को पुष्ट करती है: अहिंसा प्रतिष्ठायाम् तत्सन्निधौ वैर त्याग: विचार यह करें कि आजकल हिंसा क्यों बढ़ रही है और इसके रहते रहते एक अहिंसक समाज की स्थापना कैसे की जा सकती है?

मेरे विचार से हिंसा के निम्नाकिंत कारण हैं:

(i) भोगवादी प्रवृत्ति (ii) स्वार्थपरता (iii) असमानता (iv) बेरोज़गारी (v) शक्ति-संचय की लालसा (vi) प्रभुत्व की कामना (vii) नैतिकता के मूल्यों का ह्रास (viii) सच्ची आध्यत्मिकता का अभाव (ix) छद्म धार्मिकता और नकली आध्यात्मिकता इन कारणों के साथ अन्य कारण भी हो सकते हैं पर वे सभी इन्हीं के अंतर्गत आ जाते हैं। एक अहिंसक-समाज की रचना के सूत्र खोजते समय हिंसा के इन कारणों का निवारण परमावश्यक है।

उक्त कारणों का निवारण आसान नहीं है, क्योंकि मनुष्य की चेतना में ये कारण एक प्रकार से बद्धरूढ़ से हो चुके हैं। उसे इनसे कैसे मुक्त किया जाए- यह बहुत बड़ा सवाल है। आज की हिंसा का कुनबा इन्हीं कारणों से दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, क्योंकि मनुष्य की चेतना का परिष्कार नहीं हो पा रहा है। जब तक मनुष्य का चित्त इनसे मुक्त नहीं होगा तब तक अहिंसक समाज की बात पूरी नहीं हो सकती। बात सुनने में कुछ अतिदार्शनिक सी अवश्य लग सकती है पर समस्या का समाधान इसी में छिपा हुआ है। हाँ, यह रचना रातोंरात संभव नहीं। सदियाँ भी लग सकती हैं। पर एक बार ठीक तरह से शुरुआत हो जाये तो कम से कम ऐसे स्वस्थ समाज की नींव तो पड़ ही सकती है बहरहाल।

आज के भौतिकतावादी समाज में भोगवादी प्रवृत्ति एक दम समाप्त हो जाए, फिलहाल तो ऐसा नहीं लगता। कौन सुनता है 'भोगा: न भुक्ता: वयमेव भुक्ता:'। किसे फुर्सत है यह सोचने की कि न वित्तेन तर्पणीयों मनुष्य:। ''मैन डज नॉट लिव बाई ब्रेड अलोन'' मात्र कहने की बात रह गयी है। ऐसी स्थिति में मनुष्य का चित्त, ज्ञान-तपस्या-साधना के तत्तस्वर्ण व्यक्तित्व वाले साधु और संत ही बदल सकते है अपनी स्वयं की मनसा वाचा कर्मणा

जीवन-शैली से। बशर्ते कि मनुष्य उन तक पहुँचे। यह बात इसलिए संभव है, क्योंकि लोगों के चित्त बदले हैं। प्रारंभ में तो यह काम एक व्यक्ति से ही शुरू होगा। बाद में जब ऐसे परिष्कृत चित्तवाले लोग शनैः शनैः जुड़ते जाएँगे तब एक अहिंसक समाज की रचना का कुछ न कुछ खाका बनने लगेगा। जब भोगवादी प्रवृत्ति के प्रति आकर्षण कम होगा तो स्वार्थपरता अपने आप समाप्त होती जायेगी। जब स्वार्थपरता नहीं रहेगी तो हिंसा की क्या ज़रूरत रहेगी। जब व्यक्ति व्यष्टि की सकारात्मक भूमिका को समझकर समष्टि के हित में अपने स्वार्थ का विसर्जन कर देगा तो वह हिंसा पर उतारू क्यों होगा। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने हमें कहा भी है –

''निज हेतु बरसता नहीं व्योम से पानी
हम हों समष्टि के लिए व्यष्टि बलिदानी।''
(साकेत)

यह बदलाव धीरे धीरे ही आएगा। इसलिए एक अहिंसक समाज की रचना का एक महत्त्वपूर्ण सूत्र समष्टि के लिए व्यष्टि के विसर्जन की स्वरोपित मानसिकता का विकास समझना चाहिए। यह सही है कि आसुरी प्रवृत्तियाँ विस्तारवादी होती हैं और मनुष्य इनकी गिरफ्त में जल्दी आता है, पर सही यह भी है कि विजय अंततः अहिंसा जैसे तत्त्वों की हो होती है। 'सत्यमेव जयते' और अहिंसा सत्य का ही स्वरूप है। मनुष्य के चित्त के परिष्कार की दिशा में अनेक साधू-संत, योगी, ऋषि, मुनि, धर्माचार्य आदि अथक प्रयत्न कर रहे हैं परिणाम भी सकारात्मक आ रहे हैं पर अणुव्रत अनुशास्ता महाप्रज्ञ जी एवं उनके सहधर्मीजन 'अहिंसा यात्रा' के माध्यम से व्यक्ति के सकारात्मक बदलाव की दिशा में जो कार्य कर रहे हैं उससे एक अहिंसक समाज की रचना की संभावना काफी हद तक बढ़ती नजर आ रही है। पर रास्ते में अवरोध भी कम नहीं है। राजनीति और वह भी विकृत राजनीति सबसे बड़ा अवरोध है। अनैतिकता के साथ अनुबंध करने वाली राजनीति हिंसा को बढ़ाने में मदद कर रही है। इसलिए अहिंसक समाज रचना के लिए दूसरा सूत्र यह है कि देश के लोग राजनीति को समस्त विकृत्तियों से मुक्त करने की दिशा में एकजुट होकर कार्य करें।

यह काम वही लोग कर पाएँगे जो स्वयं इन विकृत्तियों से मुक्त हों। एक ऐसा माहौल बनाने की मुहिम छिड़नी चाहिए कि राजनीति में स्वच्छ छविवाले, शुद्ध चरित्र वाले तथा त्यागमय जीवन शैली वाले लोग ही राजनीति में आएँ। ऐसे लोग ही 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' कार्य कर सकेंगे। यदि यह प्रक्रिया प्रारंभ हो सकी तो एक अहिंसक समाज का प्रारूप सामने आने लगेगा। याद रहना चाहिए कि राजनीति में आने वाले लोग सही अर्थ में 'धार्मिक' हों यानी नैतिक भी हों। यह बात आज के संदर्भ में अवश्य ही असंभव सी लग सकती है पर यही प्रयोग अन्य समाज रचना के प्रयोगों की तुलना में अधिक कारगर सिद्ध होगा। बस, बात मनुष्य के सकारात्मक बदलाव पर ही जाकर टिक जाती है। तथापि, यह संभव है, क्योंकि मनुष्य का सकारात्मक बदलाव होता है बशर्ते कि वह स्वयं अपने को बदलना चाहे और वह उसे बदलने वाले शुद्ध चरित्रात्माओं के प्रति बिना लाग लपेट के अपने को सौंप दे। रही बात, शक्ति संचय और प्रभुत्व की कामना की तो यह प्रवृत्ति तो मनुष्य की सहज प्रवृत्ति है खास तौर से बड़े लोगों की। अँग्रेजी कवि मिल्टन ने तो ऐसी, महत्त्वाकांक्षा को बड़े लोगों की एक कमजोरी माना है। (लास्ट इन्फरमिटी ऑव ए नोविल माइन्ड)। इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने के लिए जरूरी है कि मनुष्य, मनुष्य की समानता का दर्शन समझे। मनुष्य के आभ्यंतर बदलाव की प्रक्रिया में समानता का भाव एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है। यहाँ पहुँच कर मनुष्य समानता के जिस प्रांतर में प्रवेश करता है वहाँ न तो द्वेष है, न वैर है और न हिंसा ही। समाज में द्वंद्व तो इसीलिए है, क्योंकि असमानता अपने कई विकृत रूपों में सामने है। असमानता का यही रोड़ा अहिंसात्मक समाज के रथ को आगे बढ़ने से रोकता है। मसलन, संपत्ति के वितरण में असमानता, धार्मिक सोच में विकृत असमानता, जातियों के आधार पर आदमी-आदमी के बीच असमानता और न जाने कितनी असमानताएँ। इसलिए जरूरी है कि एक अहिंसक समाज के रचना की बुनावट में असमानता का विघटक धागा नहीं आना चाहिए। जब तक समाज के किसी भी क्षेत्र में असमानता होगी, हम द्वंद्व, संघर्ष और हिंसा से बच नहीं सकते। अतएव, समानता की स्थापना और हर प्रकार की असमानता की समाप्ति को एक अहिंसक समाज-रचना का तीसरा सूत्र मानना चाहिए।

हिंसा का एक महत्त्वपूर्ण कारण नैतिकता के मूल्यों का ह्रास है। यह ह्रास हमारी सच्ची आध्यात्मिकता के अभाव से जुड़ा हुआ है। इसमें छद्म धार्मिकता और नकली आध्यात्मिकता कोढ़ में खाज का काम कर रही हैं। हम बात बात मं धर्म और पंथ के नाम पर हिंसा कर बैठते हैं। कभी राजनीतिक हिंसा, कभी भाषा के नाम पर हिंसा, कभी भू भाग के बँटवारे पर हिंसा, कभी पानी के बटवारे पर हिंसा आदि, इसी प्रकार की हिंसाएँ हमारे समाज को जीर्णक्षीण कर रही हैं। यह इसलिए हो रहा है कि हम आध्यात्मिकता की आत्मजा नैतिकता के मर्म को नहीं समझना चाहते। हमें अनैतिकता ज्यादा आसान लगती है इसलिए हमारे मन-प्राण उसी में रच बस जाना चाहते हैं। स्मरण रहे कि अनैतिकता के रहते और सच्ची आध्यत्मिकता के अभाव में एक अहिंसक समाज की कल्पना मात्र कल्पना ही रहेगी। इसलिए एक अहिंसक समाज रचना का चौथा सूत्र है नैतिकता का पोषण और सच्ची आध्यात्मिकता का सतत संवर्द्धन। यह काम्य स्थिति भी मनुष्य के क्रमिक आभ्यंतर परिवर्तन से जुड़ी हुई हैं बहरहाल।

अब बात करें कुछ ज़मीनी हकीकतों की। मसलन, आतंकवाद, फिरकापरस्ती भुखमरी, बेरोजगारी, एवं बाजारवाद की। आज के संदर्भ में जब कि सारी दुनिया एक 'विश्वग्राम' बन चुकी है हम अलग-अलग रहकर हिंसा के निवारण की बात नहीं कर सकते। प्रायः यह देखा जा रहा है कि भुखमरी और बेकारी की समस्याएें संसार के सभी अविकसित

या विकासोन्मुख देशों में विद्यमान है। बेरोजगारी एवं भुखमरी की एक भगिनी हिंसा है। कहा भी है कि भूखा व्यक्ति उदात्त आदर्शों एवं देशभक्ति या मानव-प्रेम जैसी बातों को ज्यादा तरजीह न देकर पेट भरने की कोशिश करता है:

''लोग जिस रोटी के टुकड़े के लिए बेचैन हैं
कुछ भी कर डालेगा वह रोटी का टुकड़ा एक दिन।''

और कविवर 'नीरज' के ये शब्द बहुउद्धृत हैं ही:

'भूखे पेट को देशभक्ति सिखाने वालो।
भूख इंसान को गद्दार बना देती है।'

इसलिए एक अहिंसक समाज रचना का पाँचवा सूत्र यह है कि हम बेरोजगारी, भुखमरी जैसी हिंसा उत्प्रेरक स्थितियों पर काबू पाने के लिए परिणामोन्मुख एकल एवं सामूहिक प्रयत्न करें। लोककल्याण कारी राज्यव्यवस्थाओं की यह खास जिम्मेदारी है।

हिंसा का पौधा फिरकापरस्ती की ज़रखेज़ जमीन में जल्दी पनपता है। और यही ज़हरीला पौधा आतंकवाद का ज़हर उगलता है। आज आतंकवाद कहाँ नहीं है? फिरकापरस्ती तंगदिली, हैवानियत आतंकवाद की तिपाई है जिस पर बैठकर आतंकवाद लोगों में दहशतगर्दी फैलाता है, उन्हें मौत के घाट उतारता है। देश की राजनीति हो या वैश्विक स्तर की राजनीति हो वह आतंकवाद को अपने अपने स्वार्थ के लिए सींचती है। फलस्वरूप, इंसानियत का रोजमर्रा कत्ल होता रहा है। और फिर जब से बाजारवाद ने अपने पैर पसारे हैं एक अजीब सी हालत हो गयी है सारी दुनिया की। बाज़ारवाद की इस दुनिया में आदमी कहाँ खो गया है, यह हमें पता नहीं। इसलिए एक अहिंसात्मक समाज रचना के संदर्भ में छठा सूत्र है 'फिरकापरस्ती, खुदगर्जा, तंगदिली और आतंकवाद के ख़िलाफ़ न केवल राष्ट्रीय स्तर पर, अपितु वैश्विक स्तर पर एक प्रभावी अभियान छेड़ा जाए। यह काम मिलकर ही हो सकेगा। उक्त सामाजिक विसंगतियों पर भारत ने अतीत में सदैव विजय पाई हैं पर आज वह 'विश्वगुरु' भी इन विसंगतियों से शिकस्त खा रहा है। इसलिए ज़रूरी है कि वह सारी दुनिया को सबक देने से पहले अपने घर को दुरूस्त करे। तथापि इस कार्य में हमारे तप्तस्वर्ण जीवन वाले संत महात्मा ही अधिक सहायक हो सकते हैं। मैंने एक स्थान पर लिखा है:

'यह मही टिकी है नहीं शेष के फन पर
यह टिकी हुई है तप्तस्वर्ण जीवन पर।'

ऐसे महात्मा व्यक्ति ही एक आदर्श अहिंसात्मक समाज के निर्माण में एक उत्प्रेरक की भूमिका निभा सकते हैं।

अंत में, एक अहिंसक समाज की रचना युग की अपरिहार्य आवश्यकता है। इस रचना के संदर्भ में मैंने जो सूत्र सुझाये हैं उनकी प्रभावी क्रियान्विति ही इस प्रकार के समाज के निर्माण में एक महत्त्वपूर्ण घटक होगी। यह हम जानते हैं कि हमारी भौतिक उपलब्धियाँ अपरिमेय हैं, हमें इन पर गर्व भी है, हमें अपनी इन सफलताओं के नजारे भलीभाँति दिखते हैं पर हमारी दृष्टि हिंसा की शिकार होती हुई इंसानियत की मौत को नहीं देख पाती। यह एक विडंबना ही है। अपनी कुछ पंक्तियों को उद्धृत करता हुआ मैं इस सदी पर एक सवालिया निशान लगाता हूँ। शायद आप भी ऐसा ही सोचते हों –

यह सदी कैसी सदी है?
कह रहे हैं लोग हम आगे बढ़े हैं
ज्ञान औ विज्ञान के ऊँचे शिखर हमने चढ़े हैं
अग्नि, जल, वायु, धरित्री और यह नीला गगन-
हाथ जोड़े ये हमारी आज सेवा में खड़े हैं,
हैं हमारी मुट्ठियों में काल के बढ़ते कदम
जन्म की संभावनाएँ और जीवन का क्षरण,
दीखते हमको गगनचुम्बी सफलता के नज़ारे
ज़िंदगी के स्वप्न करते हैं हमारा ही वरण,
पर हमें दिखते नहीं इंसानियत के तैरते शव,
जो बहा ले जा रही यह वक्त की मैली नदी है।
यह सदी कैसी सदी है?

केवल एक अहिंसक समाज ही इस सदी के हिंसक मंज़र को बदलकर इंसानियत को ज़िंदा रख सकता है। आएँ, हम सब मिलकर ऐसे समाज की संरचना में यथासंभव सहयोग प्रदान करें।

संपर्क : 7-च-2, जवाहर नगर, जयपुर, राजस्थान

श्रद्धांजलि

कुष्ठ रोगियों के मसीहा बाबा आम्टे नहीं रहे

'बाबा आम्टे' के नाम से मशहूर मुरलीधर देवीदास आम्टे, जिन्होंने कुष्ठ रोगियों की सेवा कर एक ऐसी मिसाल कायम की कि उनकी प्रत्येक उपलब्धि मील का पत्थर साबित हुई और उन्हें दुनियाभर में एक सच्चे मानवतावादी के तौर पर स्वीकार किया गया। 24 दिसंबर 1914 को वर्धा के निकट हिंगाई घाट में जन्में बाबा आम्टे का पिछले 9 फरवरी, 2008 को निधन हो गया महाराष्ट्र के चंद्रपुर जिला स्थित उनके आनंद वन आश्रम में।

बाबा आम्टे ने देश को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए दो बार 'भारत छोड़ो' अभियान आयोजित किया। पहली बार 1985 में कश्मीर से कन्याकुमारी तक और दूसरी बार 1988 में असम से गुजरात तक। 'आनंदवन आश्रम' बाबा आम्टे के ख़्वाबों की ताबीर है। यह आश्रम उनकी कर्मभूमि बना, जहाँ रहने वाले सभी लोग एक साधक की तरह लोक कल्याण की गतिविधियों के लिए समर्पित हैं। बाबा आम्टे को 1984 में 'रेमन मैंगसेसे', 1986 में 'पद्म विभूषण', 1971 में 'पद्मश्री', 1999 में डॉ. अम्बेडकर अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार और 2000 में गाँधी शांति पुरस्कार से नवाजा गया। इसके अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार पुरस्कार टेम्पेल्टन पुरस्कार आदि प्रदान किए गए। 'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि।

उदय कुमार 'राज़', सहायक संपादक

आज देश के नागरिक व्यक्ति नहीं, वोट बैंक

❍ सिद्धेश्वर

कश्मीर से कन्याकुमारी तक संपूर्ण भारत में प्रत्येक नागरिक को धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक काम करने का अधिकार है। जाति, भाषा, क्षेत्र के नाम पर इस देश के किसी भी नागरिक को उसके अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता, हमारा भारतीय संविधान भी यही कहता है, मगर इधर हाल के वर्षों में इस देश के नेताओं ने यहाँ के नागरिकों को व्यक्ति नहीं, वोट बैंक समझ रखा है और अपनी कुर्सी बरक़रार रखने अथवा कुर्सी पर विराजमान होने के लिए वे किसी भी हद तक जाने को उद्धत दीख रहे हैं। हमारे राजनेताओं को जनसमस्याओं से तो कोई लेना-देना नहीं, और न उन्हें यहाँ की टूटी सड़कें, गंदे पानी, बिजली संकट, किसानों की आत्म हत्या, भूख, ग़रीबी की चिंता है। इन समस्याओं के समाधान से ज्यादा इन्हें मुद्दा बनाकर वोट बैंक तैयार करना है। यही वह मानसिकता है, जो मुंबई की सड़कों पर उतरी। पिछले दिनों महाराष्ट्र नव निर्माण सेना के अध्यक्ष राज ठाकरे ने अपने चाचा बाल ठाकरे के ही रास्ते को अपनाते हुए मराठावाद को राजनीतिक रूप से भुनाने की कोशिश की और उत्तर भारतीयों के पवित्र पर्व छठ पर न केवल एक निंदनीय टिप्पणी की, बल्कि मराठी नहीं बोलने वालों को महाराष्ट्र से निकाल दिए जाने की बात कह डाली।

निश्चित रूप से ऐसी बातों और बयानों से राष्ट्र की एकता और अखण्डता पर चोट पहुँचती है। सरकार यदि चाहती तो राज ठाकरे के बयान के बाद मुंबई में फैली हिंसा पर रोक लगा सकती थी तथा इस मामले को बेलगाम होने से रोक सकती थी, मगर मुझे ऐसा लगता है काँग्रेस ने भी अपनी चुप्पी इसलिए साध ली कि उसे यह दिखाई पड़ने लगा कि राज ठाकरे की वजह से अगर शिव सेना के मराठी वोट बैंक में सेंध लगती है तो उसका सीधा फायदा काँग्रेस को मिल जाएगा।

राजनीति में अवसरवाद की भी कोई सीमा होती है, लेकिन बाला साहेब ठाकरे के भतीजे राज ठाकरे ने अपनी टिनही-सी पार्टी महाराष्ट्र नव निर्माण सेना की अलग पहचान बनाने के लिए उत्तर भारतीयों के खिलाफ नफरत की आँधी चलाकर राजनीति की सारी सीमा को पार कर दिया, मगर आश्चर्य तो तब होता है जब भारतीय जनता पार्टी जैसी राष्ट्रीय पार्टी जिसके नेता का दिन-रात राष्ट्रवाद ही ओढ़ना-बिछौना है कि हालत यह की मुंबई में लगातार कई दिन तक राज ठाकरे के गुंडे उ०प्र०, बिहार से आए रेहड़ीबालों की पिटाई करते रहे और देश की अर्थिक राजधानी अराजकता की गिरफ्त में रही तथा मेहनत-मजदूरी करने वालों की जान का ग्राहक बना एक दोटकिया छुट्टा घूमता रहा, मगर भाजपा अपनी चिरंतन सहयोगी शिवसेना की ही तरह राज ठाकरे के खिलाफ एक शब्द बोलने में भी उन्हें काठ मार गया। महाराष्ट्र सरकार तथा उसके सहयोगी काँग्रेस इन सारी घटनाओं का मूकदर्शक बनी रही शायद यह सोचकर कि शिवसेना का कुछ जानाधार अपनी तरफ खींचकर अगले चुनाव में उनकी पार्टी की राह आसान हो जाए। कल ये ही लोग उ०प्र०, बिहार में हिंदुत्व और राष्ट्रवाद के नाम पर वोट माँगते फिरेंगे तब जनता भी उनसे निपटने का प्रयास करेगी।

वैसे भी मुंबई में उत्तर भारत के लोगों पर जो हमला हुआ है वह 80 के दशक में शिवसेना का जो राजनीतिक एजेंडा था उसी की पुनरावृत्ति है। दरअसल शिव सेवा के उद्धव ठाकरे हो या मनसे के राज ठाकरे उन्हें लग रहा है कि यह लड़ाई उन्हें राजनीति में अहम स्थान दिला देगी और मतदान में उनके पक्ष लोग खड़े होंगे, किंतु उन्हें यह नहीं मालूम कि महाराष्ट्र में बाँटने की राजनीति पहले भी पूरी तरह सफल नहीं हो पाई है, आज तो और नहीं होगी। कारण कि मामला स्थाई नहीं, तात्कालिक है। राज अथवा उद्धव ठाकरे के साथ के लोगों को लगता है कि मुंबई में गैर मराठी लोगों के द्वारा उनका हक छीना जा रहा है, लेकिन ऐसी बात नहीं है, क्योंकि उत्तर भारत के अधिकतर लोग वहाँ असंगठित क्षेत्र में काम करते हैं। रिक्शा चलाते हैं, टैक्सी चलाते हैं, ठेला चलात हैं, मजदूरी करते हैं और वे अपनी कमाई का टैक्स मुंबई को देते हैं। और सच तो यह है कि मराठी लोग भी इस तरह की गुंडागर्दी पसंद नहीं करते, क्योंकि इससे उनक व्यापार प्रभावित होते हैं। मुंबई के विकास में सबकी भागीदारी है और भारतीय संविधान के अनुसार कोई भी व्यक्ति देश के किसी कोने में अपनी स्वतंत्रता और संस्कृति के साथ जी सकता है। मराठी और गैर-मराठी समुदायों के बीच टकराव फासीवादी सोच के कारण है।

दरअसल छोटे-छोटे क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के पास कोई पुख्ता सामाजिक और आर्थिक मुद्दा तो है नहीं जिसकी वजह से ये संस्कृति, भाषा, तथा क्षेत्रीयता को मुद्दा बनाते हैं। इस देश में एकता ही इसकी खासियत है जिसकी मिसाल एक अरसे से पूरी दुनिया में दी जाती है। वैविधतावाले इस देश में हर चंद मील की दूरी पर विविधता पाई जाती है। ऐसे में भाषा, संस्कृति पर टिप्पणी करना अलगाववादी और घृणित मानसिकता का परिचायक है। सच तो यह है कि मुंबई से यदि उत्तर भारतीयों को निकाल दिया जाए, तो वहाँ बचेगा ही क्या?

वैसे भी देखा जाए तो मुंबई महाराष्ट्र के दूसरे हिस्सों से आए लोगों का ही महानगर प्रतीत होता है। वहाँ के 42 प्रतिशत लोगों ने अपनी मातृभाषा मराठी बताई है, लेकिन यदि दूसरे हिस्से आए लोगों की आबादी घटा दी जाए, तो महाराष्ट्रीय लोगों की आबादी केवल 18 प्रतिशत के आसपास सिमट जाती है। स्पष्ट है कि महानगर की धमनी में

केवल इन 18 प्रतिशत की गतिविधियों से आर्थिक रक्त प्रवाहित नहीं हो सकता। मुंबई देश की आर्थिक-वाणिज्यिक राजधानी है जहाँ की आर्थिक संपन्नता में पूरे देश का योगदान है। महाराष्ट्र में सक्रिय अधिकतर भवन निर्माता, निर्माण संबंधी बड़े ठेकेदार, प्रोपर्टी व्यवसाय उत्तर भारत के लोगों के हाथों हैं। यदि आँकड़ा निकालेंगे, तो विदेशी संस्थापक निवेशकों के अलावा शेष भारतीयों का धन वहाँ अधिक है। यदि गैर मराठी महाराष्ट्र को छोड़ने के लिए मजबूर किया गया, तो वहाँ की अर्थव्यवस्था चरमरा ही नहीं जाएगी, बल्कि पूरी तरह ढह जाएगी।

पिछले दिनों के उत्पात ने मुंबई महानगर के चेहरे पर जो कालिख पोती है, उसने उन दिनों की याद दिला दी, जब ऐसे ही उत्पात दक्षिण भारतीयों के ख़िलाफ़ हुए थे। दरअसल इस उत्पात को शिव सेना के दो गुटों के बीच होड़ का नतीजा कहा जा सकता है। सबसे चिंता की बात तो यह है कि इस मामले में हम जिन्हें समझदार राष्ट्रीय दल मानते हैं वे भी चुप्पी साध गए। यही नहीं कई राजनीतिक दल तो ऐसे हैं जो बेगुनाह झुलस रहे इस आग में अपनी राजनीतिक रोटियाँ सेकने के लिए भड़काऊ बयानों की लकड़ी भी डालने से बाज नहीं आए। भूमि पुत्रों के नाम पर जो राजनीति की जा रही है उसमें मुझे ऐसा लगता है कि इन नेताओं को शायद यह भी पता न हो कि संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के लिए जिन 105 लोगों ने कुर्बानी दी थी उनमें 20 गैर मराठी थे। राज ठाकरे जी को यह मालूम होना चाहिए कि शिवसेना में रहते हुए उन्होंने मराठी युवकों को नौकरी दिलाने के लिए जिस माइकल जैक्सन को मुंबई में नचाकर धन इकट्ठा किया था उसमें दर्शकों के रूप में ज्यादातर ग़ैर-मराठियों ने टिकट ख़रीदे थे और राज ठाकरे ने 400 करोड़ रुपए लगाकर कोहिनूर मिल तो ख़रीद लिया, मगर वह इसी धन से मिल चालू करके सैकड़ों ग़रीब मराठियों के घर चूल्हा जला सकते थे, मगर इन्होंने ऐसा नहीं किया। ऐसा करने से वह भूमिपुत्रों के नाम पर राजनीति कैसे कर सकते थे?

विदित हो कि मुंबई में बाहरी लोगों का आना आज भी जारी है और उत्तर भारतीयों की संख्या आज 40 लाख से अधिक है। वे उत्तर भारतीय महाराष्ट्र की सभ्यता और संस्कृति में घुलमिल गए हैं। उत्तर भारतीयों और मराठियों के बीच अब रोटी-बेटी का रिश्ता भी बढ़ने लगा है। ऐसी स्थिति में राजनीतिक दलों द्वारा अपने वोट के लिए लोगों को बाँटने का जो काम किया जा रहा है और प्रशासन आँखें मूँदे बैठा रहता है उससे देश की एकता और अखंडता पर ख़तरा पैदा होगा और हम भाषा, जाति, संप्रदाय और क्षेत्रवाद के नाम पर विभाजित होते जाएँगे, यदि इसी तरह हर पार्टी अलग-अलग झंडे दिखाती रहेगी और चुनाव के बाद सारे दल एकता का सिर्फ़ पैगाम देते रहेंगे, तो मुश्किलें और बढ़ेंगी। ऐसे मुश्किल के दौर में प्रबुद्धजनों, सजग नागरिकों, चिंतकों एवं विचारकों सहित लेखकों एवं समाजशास्त्रियों की अहमियत बढ़ जाती है। उनका यह राष्ट्रीय दायित्व बनता है कि आम जनमानस में संकुचित राजनीतिक सोच से मुक्ति पाने तथा राष्ट्रीय दृष्टि अपनाने के लिए चेतना जागृत करने का काम करें। राजनेताओं से भी यह उम्मीद की जाती है कि वे ऐसे किसी भी बयान से बचें, जो धर्म, संप्रदाय, जाति अथवा क्षेत्रीय संकीर्णता पर आधारित हो तथा देश की जनता या किसी विशेष क्षेत्र के निवासियों की पीड़ा हो।

दरअसल कहने को तो कार्यपालिका, विधायिका तथा न्यायपालिका के साथ मीडिया लोकतंत्र के ये चार स्तंभ हैं, परंतु आज राजनीतिज्ञों ने इतनी शक्ति प्राप्त कर ली है कि शेष सारे स्तंभ पृष्ठभूमि में चले गए हैं। राजनीति की बीमारी हमारे देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। इसलिए समय का तकाजा है कि इस बीमारी से मुक्त होने का उपाय सोचा जाए तभी राष्ट्र की एकता व अखंडता पर मंडराते ख़तरे से बचा जा सकता है अन्यथा देश के नागरिक व्यक्ति नहीं, वोट बैंक ही समझे जाते रहेंगे।

प्रेरक-प्रसंग

हिंदू और मुस्लिम महिला ने एक दूसरे के पति को किडनी दान दी

मौजूदा दौर में जब किडनी का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्यापार चल रहा हो, उड़ीसा में एक हिंदू और एक मुस्लिम महिला ने एक दूसरे के पति को किडनी दान करके न केवल सांप्रदायिक सौहार्द की एक अनूठी मिसाल पेश की है, बल्कि सोरो के 48 वर्षीय एक वकील हरेकृष्ण भान्जा और कटक के 50 वर्षीय एक दुकानदार मो० सईद की जान बचा ली। दोनों परिवार आज खुशहाल हैं। हरेकृष्ण को किडनी-दान देने वाली महिला का नाम सायरा है, जो मो० सईद की पत्नी हैं और हरेकृष्ण की पत्नी कल्पना ने सईद को किडनी दान दी। दोनों दानदाताओं की हालत अच्छी है और वे दोनों स्वस्थ हैं। यह उड़ीसा में पहला मामला है जिसमें दो अलग-अलग मज़हब के लोगों ने एक दूसरे के मरीज़ को किडनी दान की है।

हाफ़िज़ बनेंगे हेमलता व आशीष

भाषा किसी देश, समुदाय या व्यक्ति विशेष की जागीर नहीं होती। भाषा उसी की प्रेसी है, जो उसे प्रेम और सम्मान दे। धर्म दीवार रहित और सूफ़-संतों के आसताने दर रहित होते हैं। आँखों में सपने और दिल में उन्हें साकार करने का संकल्प हो तो कामयाबी दो क़दम बढ़कर क़दम चूमती है। पटना नगर के बड़ी खगौल, चक्रदाहा निवासी एक रेलकर्मी दिलीप कुमार चौधरी की 9 वर्षीया पुत्री हेमलता उर्फ़ शबनम तथा 7 वर्षीय पुत्र आशीष विद्यार्थी उर्फ़ साहिल अरबी भाषा सीख रहे हैं। वे हाफ़िज़ बनना चाहते हैं। हाफ़िज़ को हज़ार पृष्ठों से अधिक के कुरआन को पूरा याद करना पड़ता है। यह कार्य बहुत कठिन है। दोनों भाई-बहन हाफ़िज़ बनकर माँ-बाप का नाम रोशन करना चाहते हैं। वे दोनों मदरसा मदीनतुलऊलूम में बड़े शौक़ से अरबी पढ़ने जाते हैं। भारत देश ऐसे ही लोगों के सबब महान है। विचार परिवार की शुभ कामनाएँ।

डॉ॰ शाहिद जमील, उप संपादक

With Best compliments from :

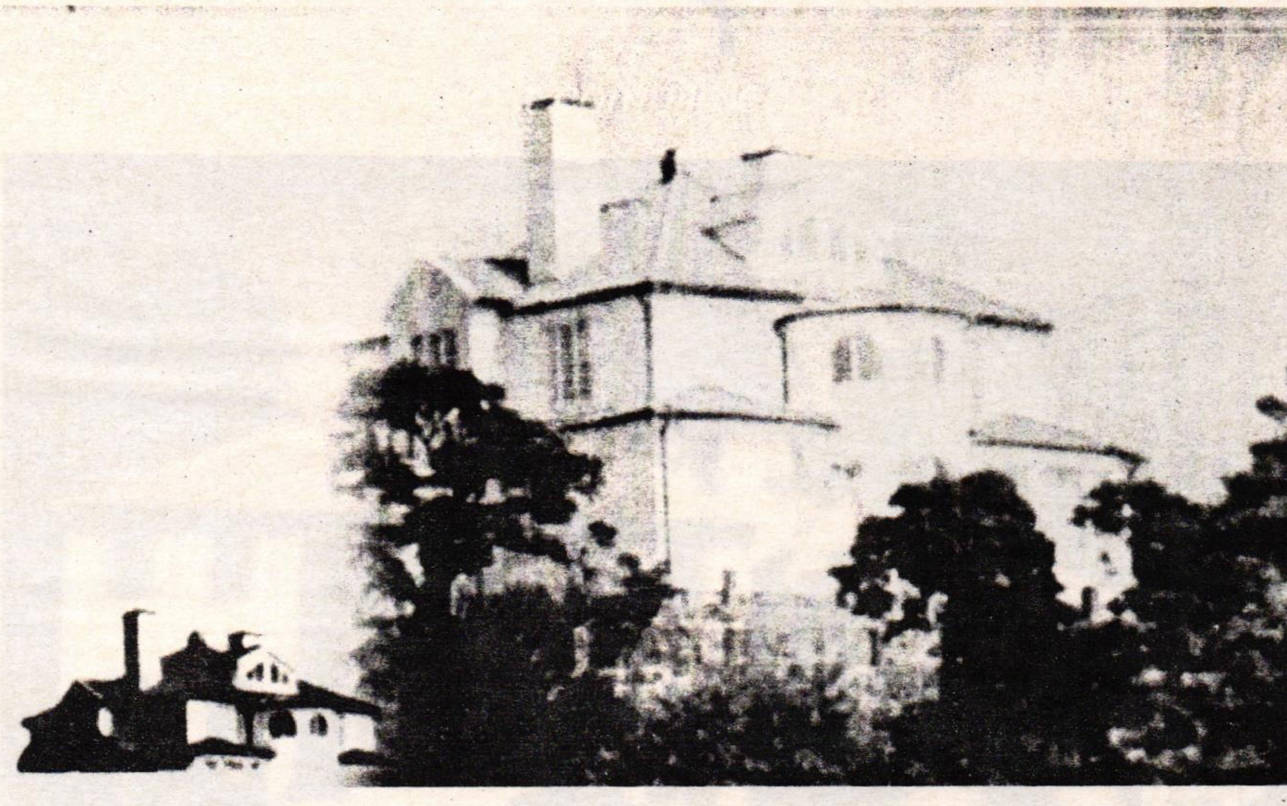

M/s. N. K. Gupta

CONTRACTORS

New Delhi

With Best compliments from :

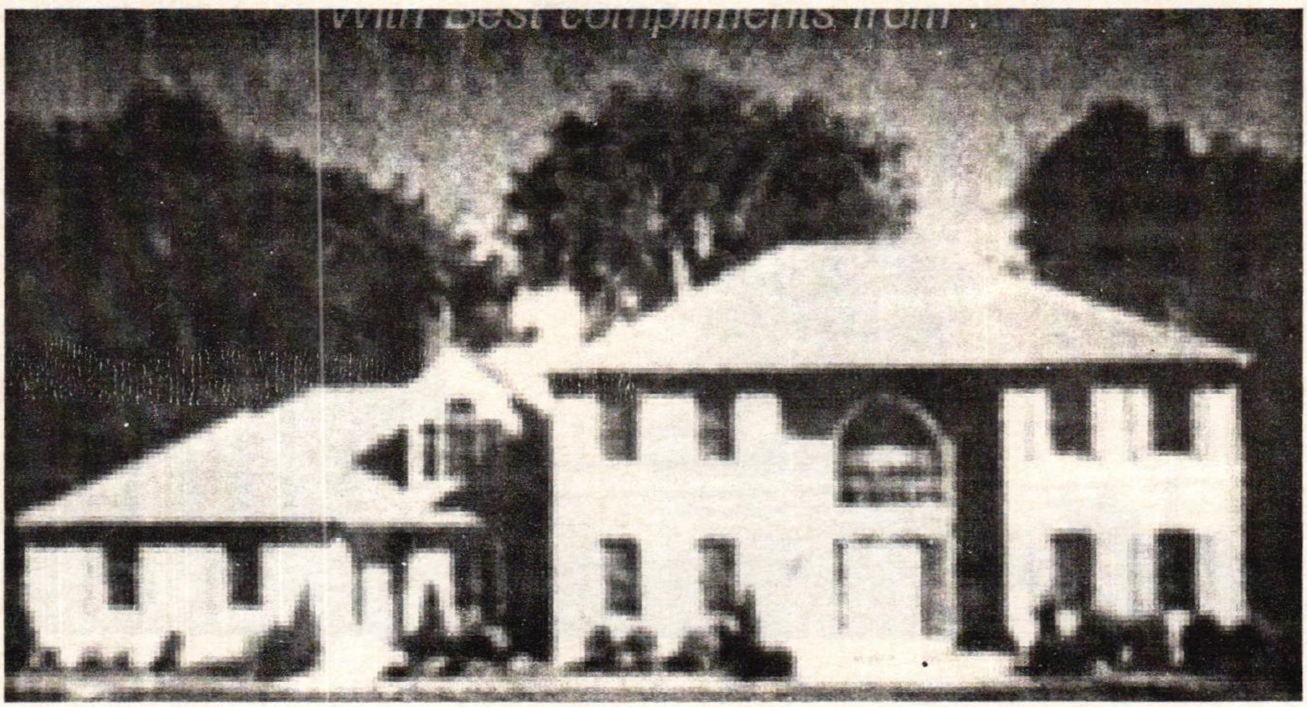

M/s. Jagdamba Construction Co.

New Delhi

Tele.0612-2352480

THE PEOPLE'S CO-OPERATIVE HOUSE CONSTRUCTION SOCIETY LTD.

KANKERBAGH, PATNA-800020.

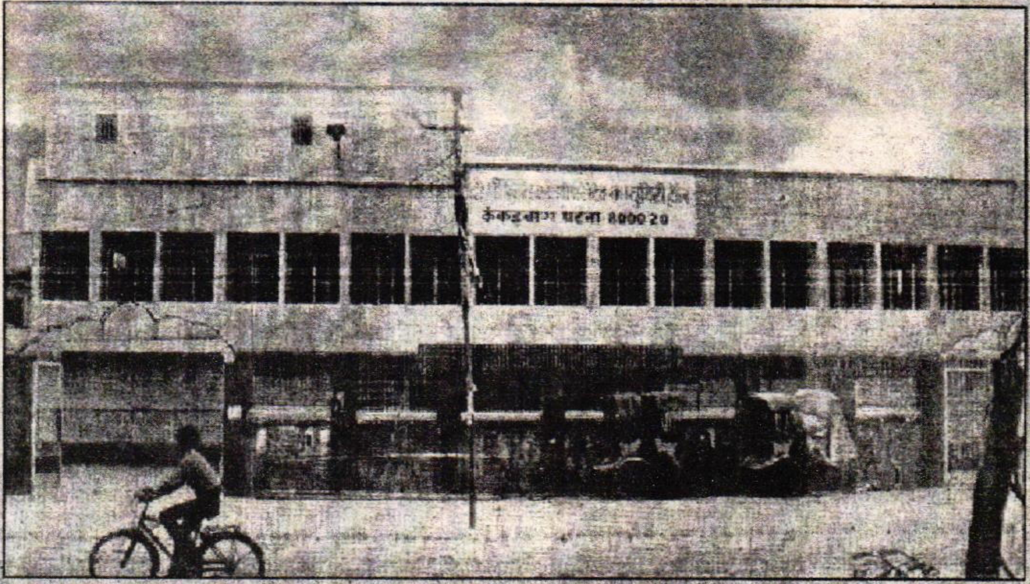

HIGHLIGHTS:

1. For members of lower & middle income group of people this society is said to be one of the largest co-operative house construction societies in Asia.
2. In the first phase 131.12 acres of land acquired by Government of Bihar were handed over to this society.
3. The society has got an opportunity to attract 1730 members from lower income group of people.
4. In all 1600 plots were bifurcated in planning out of which 10 plots were reserved for community hall, office building, godown and four-storied building for common utilities.
5. 1400 houses have so far been constructed by the members.
6. 500 members have been given housing loan through this society.
7. Boundary walls in 15 parks have already been constructed by the society.
8. In most of the sectors metalled & cemented roads have also been construcred.
9. Efforts are being made to improve the drainage system, to have plantation and lighting facilities.
10. In the second phase 7 acres of land have been purchased at Jaganpura village in which six houses have been constructed so far.
11. Out of 96 plots 95 plots have already been allotted to the members and one plot has been reserved for common utilities.
12. The society makes available its community hall to the members on priority basis for the marriage ceremony of their sons & daughters at half of the preseribed charges.
13. As far as possible the society tries to provide street light, maintain roads, clean manholes, construct parks and other development activities.
14. All those members who have not filled up their nominee forms as yet are requested to deposit the forms duly filled in after getting the forms from the office of the society.

WITH REGARDS TO THE MEMBERS.

L.P.K. Rajgrihar	Sidheshwar Prasad	Prof. M. P. Sinha
President	Vice President	Secretary

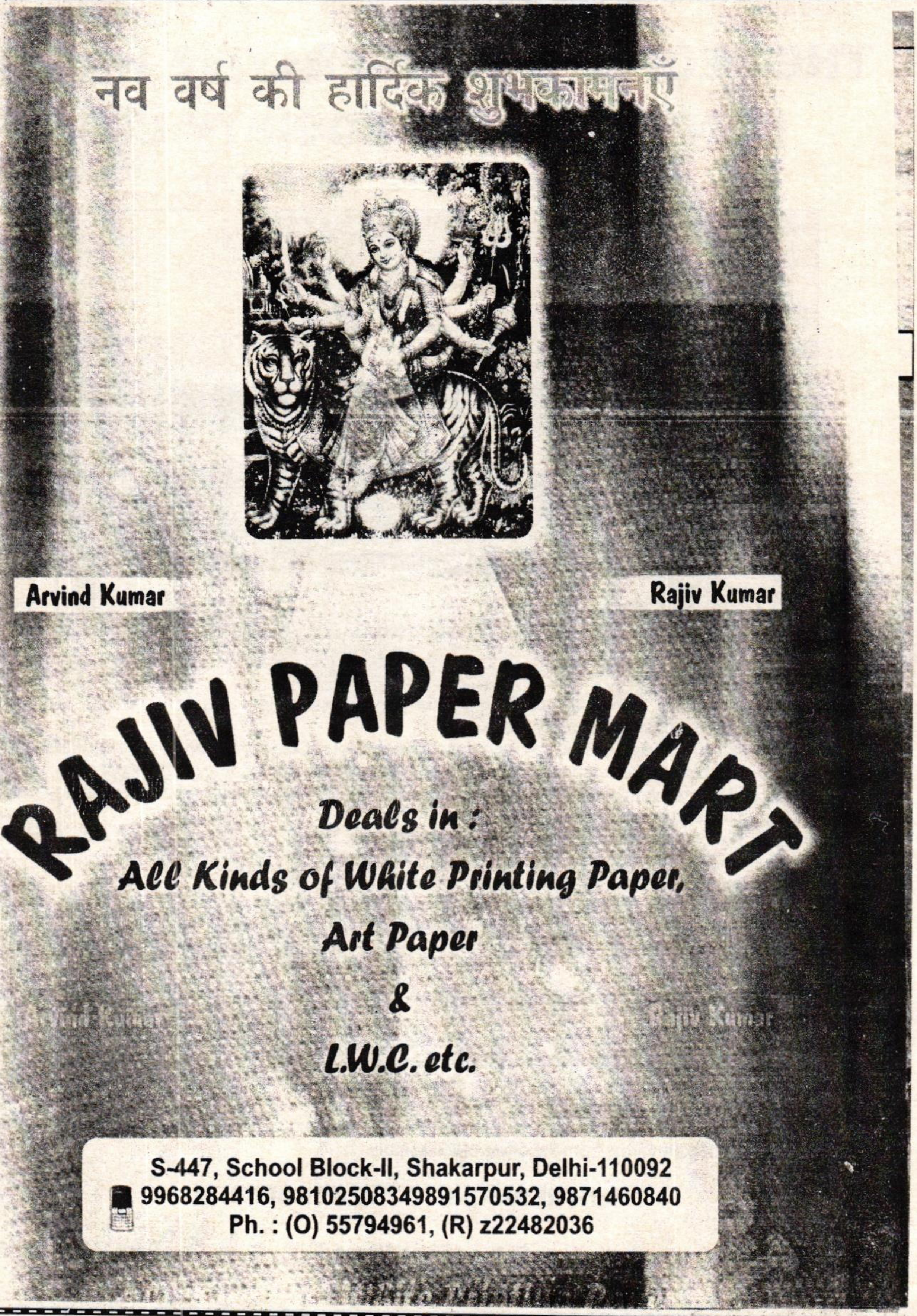
नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ
Arvind Kumar
Rajiv Kumar
RAJIV PAPER MART
Deals in :
All Kinds of White Printing Paper,
Art Paper
&
L.W.C. etc.
S-447, School Block-II, Shakarpur, Delhi-110092
9968284416, 98102508349891570532, 9871460840
Ph. : (O) 55794961, (R) z22482036

नई दिल्ली में मंच की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक संपन्न

विगत 2 मार्च, 2008 को संध्या 4 बजे नई दिल्ली के राजेन्द्र भवन स्थित सेमिनार हॉल में राष्ट्रीय विचार मंच की नवनिर्वाचित राष्ट्रीय कार्यकारिणी की पहली बैठक राष्ट्रीय अध्यक्ष तथा भारत के पूर्व मुख्य सतर्कता आयुक्त यू. सी. अग्रवाल की अनुपस्थिति में वरिष्ठ उपाध्यक्ष श्री नंद लाल जी अध्यक्षता में संपन्न हुई, जिसमें और बातों के अलावा मुख्य रूप में राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर द्वारा प्रस्तुत वार्षिक कार्यक्रम तथा कोषाध्यक्ष धर्मपाल ठाकुर द्वारा प्रस्तुत वर्ष 2008 के आय-व्यय के ब्योरे का अनुमोदन कुछ हेर–फेर के साथ किया गया। साथ ही देश में भाषा, जाति, धर्म, संप्रदाय तथा क्षेत्रवाद के नाम पर बढ़ती क्षुद्र मानसिकता तथा देश की एकता व अखंडता पर मंडराते खतरे के मद्देनजर राष्ट्रीय एकता के सभी कारकों पर कार्यक्रम आयोजित करने पर सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया। इसके अतिरिक्त मंच के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष तथा उसके मुखपत्र 'विचार दृष्टि' के संपादकीय सलाहकार नंदलाल जी के सुझाव पर मंच तथा पत्रिका के सदस्यता अभियान में तेजी लाने के साथ-साथ 'विचार दृष्टि' के स्तरीय एवं नियमित प्रकाशन हेतु इसकी आर्थिक स्थिति को सबल करने का सर्वसम्मत निर्णय लिया गया तथा विचार दृष्टि के एनसीआर प्रतिनिधि संजीव कुमार तथा मनोज कुमार से इसे गति प्रदान करने के लिए विशेष रूप से अनुरोध किया गया। संजीव कुमार को उनके द्वारा प्रस्तुत मंच के युवा कोष्ठक की कार्यकारिणी के पदाधिकारियों एवं सदस्यों के प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए मंच के उद्देश्यों को मूर्तरूप प्रदान करने के लिए युवा पीढ़ी को जाग्रत और चेतना लाने के लिए उनसे अनुरोध किया गया। इस साल के अंत में मंच के द्वितीय राष्ट्रीय अधिवेशन आयोजित करने के साथ-साथ मंच द्वारा प्रस्तावित राष्ट्रीयता पर आधारित दोनों पुस्तकों सहित राष्ट्रीय निर्देशिका तथा फ्रोल्डर प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। कार्यकारिणी के सदस्य डा. मेदिनी प्र. राय ने आभार प्रकट किया।

- रविशंकर श्रोत्रिय, दिल्ली से

'क्षेत्रवाद के उभार से राष्ट्रीयता पर मंडराता ख़तरा' पर संगोष्ठी

विगत 4 मार्च 2008 को राष्ट्रीय विचार मंच की बिहार इकाई के तत्त्वावधान में अमरकथा शिल्पी फणीश्वरनाथ रेणु की जयंती पर पटना के सोन भवन स्थित सभागार में 'क्षेत्रवाद के उभार से राष्ट्रीयता पर मंडराता ख़तरा' विषय पर आयोजित एक संगोष्ठी के मुख्य वक्ता डॉ० शैलेश्वर सती प्रसाद ने क्षेत्रवाद के उभार से राष्ट्रीयता पर मंडराते खतरे पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि असम तथा महाराष्ट्र में जिस प्रकार दोटकिया नेताओं के भड़काऊ भाषण से उत्तर भारतीयों पर कहर ढाए गए तथा राज ठाकरे एवं आसिम आज़मी की गिरफ्तारी की गई और तुरंत दोनों को जमानत दी गई वह न केवल हमारे संविधान की मूल भावना का उल्लंघन है, वरन् राष्ट्रीय एकता की भावना के प्रतिकूल भी। प्रारंभ में डॉ० एस० एफ० रब के स्वागत भाषण के पश्चात् मंच के साहित्य मंत्री रघुवंश कुमार सिन्हा ने निर्धारित' विषय का प्रवर्तन करते हुए कहा कि समाज के मुट्ठी भर सिरफिरे लोग नफरत और क्षेत्रवाद की राजनीति कर जिस प्रकार रातो-रात राजनीति का आकाश छूना चाहते हैं उससे समाज में अराजकता फैलेगी और राष्ट्र की अखंडता खतरे में पड़ जाएगी। मंच के उपाध्यक्ष कर्नल एस०एस० राय की अध्यक्षता में संपन्न इस संगोष्ठी में नगर के अनेक प्रबुद्धजनों सहित बिहार के प्रधान महालेखाकार अरुण कुमार सिंह ने मुख्य अतिथि पद से अपने विचार प्रस्तुत करते हुए राजनेताओं की क्षुद्र मानसिकता पर चिंता जाहिर की। विशिष्ट वक्ता के रूप में अपने-अपने विचारों से जिन प्रबुद्धजनों ने संगोष्ठी को जीवंत बनाया उनमें डी०एन० प्रसाद, जियालाल आर्य, महेश प्रसाद, उमेश्वर सिंह, कामेश्वर प्रसाद सिन्हा तथा युगल किशोर प्रसाद का नाम उल्लेखनीय है। मंच के महासचिव डॉ० शाहिद जमील ने कार्यक्रम का संचालन तथा सचिव मनोज कुमार ने आभार व्यक्त किया।

- मनोज कुमार, पटना से

साभार-स्वीकार

पुस्तकें:-

1. उठो पार्थ गांडीव संभालो (काव्य-संग्रह)
   कवि : सुरेन्द्रनाथ तिवारी, 23रूट, 511 नार्थ, न्यूटन, न्यू जर्सी-07860, यू.एस.ए. फोन: 973-599-1565
2. सर्वधर्म समभाव और आत्मिक एकता
   लेखक: मो० सलमान, पटना
3. बिहार में अति पिछड़ा वर्ग आंदोलन और डॉ० रामकरण पाल
   लेखक: प्रो. एच.एन. ठाकुर, मुजफ्फरपुर
4. बुँद-बुँद रोशनी (हाइकू संग्रह)
   हाइकुकार: डॉ. सतीश राज पुष्करणा
५. मगही की संयुक्त क्रियाओं का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन
   लेखक: डॉ. कुमार इन्द्रदेव, पटना

पत्रिकाएँ:-

1. अलका मागधी (जनवरी-मार्च-08)
   संपादक: डॉ. अभिमन्यु प्र. मौर्य, पटना
2. हिंदी प्रचार वाणी-दिसम्बर-07, संपादिका-बी. एस. शांताबाई; 178, चौथ मेन रोड, चामोराजपेट, बह्गलुरु-18
3. साहित्य अमृत (जनवरी-08), संपदक: टी.एन. चतुर्वेदी; 4/19, आसफअली रोड, नई दिल्ली-2
4. रश्मिरथी; संपादक-अरुण कुमार आर्य; वार्डनं-8, मुसाफिरखाना-13, सुल्तानपुर
५. कू. अ. जागरण; प्र. संपादक: पटेल जे.पी. कनोजिया, कानपुर
6. मैसूर हिंदी प्रचार परिषद पत्रिका; प्रधान संपादक: डॉ. बि. रामसंजीवय्या, बैंगलूर-10
7. पुन:–डॉ. सीशराज पुष्करणा पर केंद्रीत विशेष; संपादक: कृष्णानंद कृष्ण, पटना
8. अणुव्रत-जनवरी-मार्च,08, संपादक: डॉ० महेन्द्र कर्णावट, नई दिल्ली

हृदयनारायण स्मारक व्याख्यान संपन्न

साहित्यकार, पत्रकार अध्यात्म चिंतक हृदय नारायण के पुण्यदिवस पर नवम स्मारक व्याख्यान स्थानीय संग्रहालय सभागार, पटना में 9 फरवरी, 2008 को राजेन्द्र साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में आयोजित समारोह में पंडित गाविंद झा ने प्रस्तुत किया। समारोह की अध्यक्षता डॉ० शिववंश पाण्डेय ने तथा स्वागत डॉ० निगम प्रकाश नारायण ने किया। समारोह के मुख्य अतिथि पद्मश्री एस०एन०आर्य और विशिष्ट अतिथि डॉ० एस०एन०पी० सिन्हा ने हृदय बाबू के व्यक्तित्व और अवदानों पर प्रकाश डाला। मंच संचालन बलभद्र कल्याण ने किया जबकि धन्यवाद ज्ञापन डॉ० जितेन्द्र सहाय और मंगलाचरण योगेश्वर प्रसाद 'योगेश' ने किया।

डा० शाहिद जमील, पटना से

त्रिमूर्ति ज्वेलर्स

बाईपास रोड, बोकारो (झारखंड)

दूरभाष : ६५७६५, फैक्स : ६५१२३

परीक्षाप्रार्थनीय

—सुरेश एवं राजीव

त्रिमूर्ति अलंकार

त्रिमूर्ति पैलेस (रुपक सिनेमा के पूरब)

बाकरगंज, पटना–८०००04

दूरभाष : २६६२८३७

आधुनिक आभूषणों के निर्माता, नए डिजाइन, शुद्ध सोने-चाँदी तथा हीरे के गहनों का प्रमुख प्रतिष्ठान

With Best Compliments from :
LAXMI CONSTRUCTIONS
NEW DELHI

Gateway Tower, DLF City, Gurgaon

Corporate Office: DLF Limited, DLF Centre, Sansad Marg, New Delhi 110001. Tel: 91-11-42102030. www.dlf.in

DLF
BUILDING INDIA

वर्ष: 10 अंक: 35 अप्रैल-जून 2008 Rni Reg. No. DEL HIN/1999/791

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी सिद्धेश्वर, द्वारा 'दृष्टि', यू-207, विकास मार्ग, शकरपुर, दिल्ली-92 से प्रकाशित एवं प्रोलिफिक इनकारपोरेटेड, एक्स-47, ओखला फेज-2, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित। सपांदक-सिद्धेश्वर